मैकियावेली : शासक

विश्व चिंतन सीरीज़

सार्त्र—शब्दों का मसीहा	:	प्रस्तुति—प्रभा खेतान
प्लेटो—संवाद		प्रस्तुति—बद्रीनाथ कौल
नीत्शे—जरथुष्ट्र ने कहा	:	प्रस्तुति—मुद्राराक्षस
मैकियावेली—शासक	:	प्रस्तुति—शशिवधुभ
शेखसादी—गुलिस्तां	·	प्रस्तुति—रामकिशोर सक्सेना

सम्पादन : डॉ० नीलिमा सिंह



मैकियावेली

शासक

प्रस्तुति

शशिबंधुम

मैकियावेली शासक
(चितन)

सपादन :
डॉ० नीलिमा सिंह

प्रथम सस्करण १९८६

प्रकाशक
सरस्वती विहार
जी० टी० रोड, शाहदरा
दिल्ली-११००३२

मुद्रक
हरीकृष्ण प्रिंटर्स, दिल्ली ११००३२

मूल्य : पैंतीस रुपये

SHASAK MACHIAVELLI
First Edition 1986
Price 35.00

अनुक्रम

समर्पण-पत्र
महिमामय लारेन्जो द' मेदीची की सेवा में

शासक की अनुकम्पा प्राप्त करने के आकांक्षी लोग प्राय अपनी सर्वाधिक मूल्यवान सम्पत्ति को लेकर, अथवा उसी की विशेष मनभाती वस्तुओ को लेकर स्वय उसके समक्ष उपस्थित हुआ करते है। यही रीति है। अतएव हम देखते हैं कि शासको को प्राय घोडे, शस्त्रास्त्र, जरीदार वस्त्र, मणि-माणिक्य अथवा उनके उच्च पद के अनुकूल ऐसे ही अन्य आभूषण भेंट किए जाते हैं। इस समय मैं, अपने समर्पण के प्रतीक के रूप मे कुछ लेकर स्वय को महामहिम के समक्ष प्रस्तुत करने की आकाक्षा रखता हू। और मुझे अपनी सम्पत्ति और स्वामित्व के दायरे मे ऐसी कोई चीज नजर नही आती जो इतनी प्रिय हो, अथवा जिसकी महत्ता मैं महान व्यक्तियो के कृत्यो के बोध के समरूप आकता होऊ। यह बोध मैंने समकालीन राजनीतिक घटना प्रवाह के साथ दीर्घकालिक परिचय तथा प्राचीन युग के निरन्तर अध्ययन के बल पर प्राप्त किया है। मैंने इन मामलो का बडे परिश्रम से विवेचन किया है, उनपर लम्बे समय तक सोचा-विचारा है और अब उनका सार-सक्षेप एक छोटी-सी पुस्तक मे करने के बाद मैं उसे महामहिम की सेवा मे भेज रहा हू।

यद्यपि मैं जानता हू कि यह कृति आपके समक्ष प्रस्तुत किये जाने योग्य नही है, फिर भी मुझे पूरा विश्वास है कि आप इसे स्वीकार करने की कृपा करेंगे। यह महसूस करते हुए कि मैं आपके समक्ष उस साधन से बढकर मूल्यवान कोई चीज पेश नहीं कर सकता था, जिसके द्वारा आप थोडे ही समय मे उस सबको पा और समझ सकते हैं, जिसे पाने और समझने के

लिए मैंने लम्बे अर्से तक प्रताड़नाएं सही हैं और मुसीबतें उठाई हैं। मैंने इस कृति को अलंकारों से सजाया नहीं है, मीठी-मीठी बातों से भरा नहीं है, बड़े-बड़े और प्रभावशाली शब्दों अथवा अन्य किसी भी प्रकार के आकर्षणों तथा अलंकारों से, जिनका प्रयोग बहुतेरे लेखक अपनी-अपनी कृतियों को सजाने अथवा उनका वर्णन करने में करते हैं, लादा नहीं है। क्योंकि मेरी महत्त्वाकांक्षा रही है कि या तो मेरी पुस्तक को कोई महत्त्व ही न दिया जाए, अथवा इसमें संकलित विविध वक्तव्यों और इसके कथ्य की गम्भीरता के बल पर मूल्यांकन किया जाए। मैं यह भी आशा करता हूं कि किसी निम्न कोटि के व्यक्ति द्वारा शासकीय व्यवहार के नियमों का लिप्यंकन करने का दुस्साहस धृष्टता नहीं माना जायेगा, क्योंकि मैं समझता हूं कि प्राकृतिक दृश्यों का चित्रांकन करने के इच्छुक व्यक्ति को पर्वतीय सुषमा तथा पठारी इलाके की प्रकृति का अध्ययन करने के लिए मैदानों में उतरना पड़ता है तथा निचली भूमि का सौन्दर्य निहारने के लिए उच्चतर भूमि पर जाना पड़ता है, उसी प्रकार शासकों की यथार्थ प्रकृति को पूरी तरह समझने के लिए व्यक्ति को सामान्य नागरिक ही होना चाहिए। अतएव, महामहिमामय, मैंने जिस भाव से यह छोटा-सा उपहार आपकी सेवा में भेजा है, उसी भाव से आप इसे स्वीकार करें। यदि आप इसका परिश्रम से अध्ययन करेंगे और इसके विषय में सोचेंगे तो आप इसमें मेरी इस त्वरित आकांक्षा को समझ सकेंगे कि आप इतने महान हों, जितना कि आपको अपने भाग्य और उपलब्धियों के बल पर होना चाहिए और अगर अपने उच्चासन से आप महामहिमामय इन निचले मैदानों की ओर झांकेंगे तो देखेंगे कि मैं अकिंचन किस सीमा तक अकारण भाग्य की महान और निर्मम शत्रुता का शिकार हुआ बैठा हूं।

---

1 लारेंजो (१४९२-१५१९) पिएरो द' मेदीची का बेटा और गियोवानी द' मेदीची (लियो दशम्) का भतीजा था; गियोवानी ने उसे १५१६ में उर्बिनो का ड्यूक बना दिया। उसका बेटा फ्लारेंस का प्रथम ड्यूक था। ग्यूलियानो द मेदीची जिसके प्रति सम्भवतः मैकियावेली पहले अपनी कृति 'शासक' समर्पित करना चाहता था, पिएरो तथा गियोवानी का भाई था और ये दोनों लारेंजो इल मैग्निफिको के बेटे थे।

निकोलो मैकियावेली

व्यावहारिक राजनीति के आदिगुरु के रूप में भारत में जो प्रतिष्ठा ब्राह्मण कौटिल्य को प्राप्त है, वही स्थान यूरोपीय राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में मैकियावेली को भी प्राप्त है। फर्क सिर्फ यही है कि भारत में हम कौटिल्य का नाम आज भी सम्मान के साथ लेते हैं और मैकियावेली राजनीति की हर बुराई का इलज़ाम अपने सिर लेने वाला विवादास्पद मोहरा बन चुका है। शायद इसका कारण भारत देश के एकीकरण में कौटिल्य की सफलता और अपनी व्यावहारिकता के बावजूद मैकियावेली के दर्शन की विफलता है।

मैकॉले ने मैकियावेली की चर्चा करते हुए कहा था—"मुझे सन्देह है कि विश्व साहित्य के इतिहास में आमतौर पर कोई और नाम इतना बेहूदा भी हो सकता है, जितना उस व्यक्ति का नाम, जिसकी अब हम चर्चा करने वाले हैं।...." परम्परागत मान्यताओं के अनुसार 'शासक' ("द' प्रिन्स" अथवा इतालवी भाषा में "इल प्रिन्सीप") शैतान द्वारा प्रेरित कृति है।

भारत तक मैकियावेली की कुख्याति इंग्लैण्ड होकर आई है और इंग्लैण्ड में वह पेरिस से पहुंची थी। फ्रांसवालों की नजर में वह इसलिए बुरा आदमी था कि वे लोग इटली में तत्कालीन शासक कैथेराइन द' मेदीची के प्रति काफी द्वेषभाव रखते थे। १६४० ईस्वी में जब 'शासक' का 'प्रथम अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित हुआ था, उस समय तक उसके "चरित्र और चिन्तन की कलुषता" सारे यूरोपीय जनमानस पर छा चुकी थी। यूरोपीय साहित्यकार अपने त्रासद नाटकों तथा अन्य कृतियों की रोमांचकारी पृष्ठ-भूमि के रूप में मैकियावेली के इटली को प्रस्तुत करते थे। शैतान का पर्यायवाची सम्बोधन 'ओल्ड निक' मैकियावेली का भी पर्याय बन चुका

था और शैतान को मैकियावेली सरीखा कहना उतना ही सहज हो चुका था जितना मैकियावेली को शैतान सरीखा कहना।

धार्मिक विद्वेष से प्रेरित द्वन्द्वो मे हर बुरे काम का दोष इसी विचारक के मत्थे मढा जाता था। सच्चाई यह है कि उसने कभी भी कैथोलिक सम्प्रदाय की बुराई नही की। हा, वह राज्य-कार्य मे पादरियो के हस्तक्षेप का कट्टर विरोधी था। यही कारण है कि पोप के साम्राज्य के विरुद्ध की गई उसकी टिप्पणिया अनेको सुधार-विरोधी कैथोलिको को सालती रही। इसके विपरीत प्रोटेस्टैण्ट सम्प्रदाय के अनुयायी उसे कैथोलिक शासको का उपदेशक-सलाहकार मानते थे और ये कैथोलिक शासक सन्त बार्तोलोमिऊ दिवस के भयावह हत्याकाण्ड के लिए उत्तरदायी थे। इतने परस्पर-विरोधी भावो को जगाने वाला व्यक्तित्व यदि समय के धुध और कुहरे मे छिपकर एक कल्पनारजित किम्वदन्ती का रूप धारण कर ले तो क्या आश्चर्य ?

'शासक' के सन्दर्भहीन उद्धरण इस कृति के लेखक की कुटिलता और नीचता के प्रमाण माने जाते हैं। इस कृति की यही निराधार बदनामी *इसके रचयिता के जीवन एव सत्य को निरन्तर विकृत करती चली जाती* है। शुरु मे इस रचना का स्वागत लगभग उपेक्षा के साथ किया गया था। धीरे-धीरे जब इसकी प्रसिद्धि हुई और इसका मुद्रित सस्करण लोगो के हाथो म आया, तो धर्मगुरुओ ने इसके विरुद्ध हाहाकार मचाया। और यही से आक्षेप और कटूक्ति के युग का सूत्रपात हो गया।

बाद मे कुछ लोगो ने मैकियावेली के प्रति सदाशयता से प्रेरित होकर इस कृति मे किसी गुह्य अर्थ के निहित होने की भ्रान्त धारणा को लेकर 'शासक' की पैरवी करनी शुरु की। आलोचको, समीक्षको ने एक बार मैकियावेली के व्यक्तित्व पर दृष्टिपात किया और एक भक्की लफग का चमत्कारिक चरित्र-चित्रण कर डाला।

यह कृति आज भी बदनाम है, अशत मैकियावेली की परम्परा-विरोधी धारणाओ के कारण और अशत इसलिए कि इसको उतनी बार पढा नही जाता, जितनी बार इसे उद्धृत किया जाता है। इसकी इस बदनामी का एक कारण यह भी है कि अधिकाश लोग इसका मूल्याकन एक समसामयिक सन्दर्भ की पूर्ति के लिए लिखी गई दस्तावेजी कृति के रूप मे नही, निरपक्ष

दृष्टि से लिखे गए राजनीतिक दर्शन के एक ग्रन्थ के ही रूप मे करते हैं।

उल्लिखित वक्तव्य से एक गलतफहमी हो सकती है। 'शासक' मात्र किसी पत्रकार द्वारा किया गया तथ्य सकलन अथवा सामयिक टिप्पणी नही है, यद्यपि इसे समझने के लिए तत्कालीन इतिहास का काफी ज्ञान अपेक्षित है। किम्वदन्ती के धुधलके को लाघकर मैकियावेली के इटली का पर्यवेक्षण किए बगैर, उस युग की मन स्थिति को समझे बिना, 'शासक' की सार्थकता को न तो समझा जा सकता है और न ही उसकी पैरवी की जा सकती है।

यह कृति एक आशावादी व्यक्ति की वैयक्तिक एव राष्ट्रीय त्रासद अनुभूतियो का परिणाम है। मैकियावेली के जीवनकाल मे इटली बराबर बर्बर युद्धो से त्रस्त रहा। इस विचारक तथा जन सामान्य के मतानुसार भी, तत्कालीन इतालवी रियासतें प्रतिद्वन्द्वी विदेशी शक्तियो की चक्की म पिसकर रह गई थीं। इटली की यह स्थिति, मौर्य शासको के उद्भव तथा महामन्त्री कौटिल्य की प्रतिष्ठा से पूर्व के भारत की राजनीतिक स्थिति का ही प्रतिबिम्ब थी।

मैकियावेली की युवावस्था मे इस देश मे काफी स्थिरता थी। जिस वर्ष, १४६९ मे उसका जन्म हुआ, उसी वर्ष फ्लारेंस के प्रभावशाली शासक के रूप मे लारेन्जो द' मेदीची का उद्भव हुआ था। यद्यपि उन दिनो इटली असख्य छोटी-बडी रियासतो मे बटा हुआ था, फिर भी मेदीची की कूटनीति देशभर मे शान्ति बनाए हुए थी। यो पूरे इटली पर पाच प्रमुख शक्तियो का अधिकार था और इनमे से प्रत्येक का क्षेत्रीय विस्तार काफी था। ये पाच शक्तिया थी—*स्वय फ्लारेंस, वेनिस, मीलान, नेपल्स तथा पोप।*

ईस्वी सन् १४९२ मे लारेन्जो की मृत्यु हो गई। १४९४ मे शाह चार्ल्स अष्टम् ने नेपल्स की राजगद्दी पर अपना दावा जताने के लिए सेना लेकर इटली पर कूच का डका बजा दिया। इटली के बुरे दिनो की शुरुआत का यही वर्ष माना जाता है। चार्ल्स के उत्तराधिकारी लुई बारहवें ने अरागान के फर्डिनैण्ड के साथ सौदेबाजी करके नेपल्स के विभाजन का फैसला किया और स्पेन की शक्ति को भी सत्ता सघर्ष के इस अखाडे मे खीच लिया। स्पेन वाले कुछ ही वर्षों मे सारे दक्षिण के मालिक बन बैठे।

सोलहवी शताब्दी के प्रथम चरण मे इतालवी शासक एक आक्रान्ता' को दूसरे से भिडाकर अपने बचाव का प्रयास करते रहे। मगर वे लोग आपस मे कभी भी आवश्यक एकता बनाकर नही रख सके। (चन्द्रगुप्त मौर्य के उद्भव से पहले का भारत क्या इससे कुछ भिन्न था? अथवा ब्रिटिश सौदागरों के युग का भारत भी क्या इससे कुछ अलग था? और क्या आज का भारत इससे कोई बेहतर तस्वीर पेश करता है?) ईस्वी सन् १५२७ मे मैकियावेली की मृत्यु हुई। उस समय तक इटली की नपुसकता अपने चरम बिन्दु पर पहुच चुकी थी। उसी वर्ष रोम को विद्रोही साम्राज्य-वादी सैनिको द्वारा लूटा और जलाया गया। अन्तत इटली स्पेन के शिकजे मे आ गया। मीलान, नेपल्स और सिसिली पर स्पेन का सीधा शासन था। फ्लारेन्स उसी के सरक्षण मे था और प्रायद्वीप मे सैनिक छावनियो के माध्यम से स्पेन के शासक ही राज्य कर रहे थे।

इन कुछेक वर्षों के दौरान इटली की दुर्गति से, राष्ट्र द्वारा सहे जा रहे अपमान और लाछना से, मेकियावेली मन ही मन बहुत दुखी था, लेकिन इतालवी तथा विदेशी, मेकियावेली की भाषा मे, बर्बर लोगो के बीच की विभाजन रेखा की चेतना थी, फिर भी इटली के प्रति उसकी धारणा राष्ट्रीय नही, जातिगत एव सास्कृतिक थी। वह शायद वेनिस और नेपल्स को इटली का अनिवार्य अग नही मानता था।

मेकियावेली का 'राष्ट्र' फ्लारेन्स था। उसकी राष्ट्र-भक्ति इस नगर राज्य तक ही सीमित थी। फ्लारेन्स मे कभी किसी प्रकार की सरकार रही हो, उसने एकाग्रचित्त होकर समर्पित भाव से इसी राज्य की सेवा की। यह उसका दुर्भाग्य ही था कि जब वह प्रौढ हुआ, तब तक एक स्वतन्त्र राज्य के रूप मे फ्लारेन्स के दिन लद चुके थे।

निरन्तर आक्रमणो की शृ खला ने फ्लारेन्स को कमजोर करके स्पेन का आश्रित बना दिया। १४९४ मे जब फ्रास ने हमला किया, तो लारेन्सो के बेटे को पसीना आ गया। आतक के मारे इस पियरो द मेदीची ने चार्ल्स के साथ सौदेबाजी शुरु कर दी। इस क्षुद्र हृदय शासक को नागरिको ने उसकी अनुपस्थिति म ही देशद्रोही घोषित कर दिया। पियरो के निष्कासन तथा चार्ल्स के रोम अभियान के बाद फ्लारेन्स मे एक बार फिर लोकतन्त्र

की स्थापना हुई।

प्रारम्भ मे फ्रासीसियो के प्रभाव के कारण और फिर व्यापार तथा दूरदर्शिता के लिहाज से, फ्लारेन्स फ्रासीसियो के साथ मैत्री सम्बन्ध बनाए रहा, लेकिन इसका कोई लाभ इस राज्य को नही हुआ। फ्रासीसियो ने पहले फ्लारेन्स द्वारा शासित नगर राज्य पीसा को स्वतन्त्र राज्य बनने मे मदद दी। यही से फ्लारेन्स वालो पर पीसा को फिर से प्राप्त करने तथा परोक्ष रूप से मैक्यिावेली पर फ्लारेन्स के लिए एक कुशल और समर्थ नागरिक सेना खडी करने की सनक सवार हुई।

फ्रासीसी शासक फ्लारेन्स से धन तो बटोरते रहे, मगर बदले म इस राज्य को उन्होने कुछ भी नही दिया। इस लोकतन्त्री सरकार पर पहले सवोनारोला का और बाद मे मैकियावेली के मित्र सोदेरिनी का प्रभाव रहा, लेकिन यह सरकार ईस्वी सन १५१२ तक ही चली। इसके बाद वेनिस, स्पेन के फर्डिनैण्ड तथा पोप जूलियस द्वितीय के पवित्र सगठन ने बलात् मेदीची परिवार को गद्दी पर बैठाया और लुई द्वारा विजित लगभग तमाम इतालवी प्रदेश उससे छीन लिये।

मेदीची परिवार के सदस्यो, लिओ दशम तथा क्लीमेन्त सप्तम का पोप के रूप मे उद्भव होने पर फ्लारेन्स पोप-साम्राज्य के विस्तार की नीति का अनुयायी हो गया। १५२७ मे एक अन्तराल आया। जब रोम मे हुई लूटमार का समाचार यहा पहुचा तो पोप क्लीमेन्त के प्रतिनिधि के शासन के विरुद्ध विद्रोह हुआ और एक बार फिर फ्लारेन्स म लोकतन्त्र की स्थापना हुई, लेकिन तीन ही वर्ष बाद सम्राट चार्ल्स पचम की सेनाओ ने फ्लारेन्स को एक बार फिर मेदीची परिवार के हवाले कर दिया। यह परिवार वहा लगभग दो सौ वर्षो तक जमा रहा यद्यपि मान्यता के स्तर पर ये लोग शीघ्र निरस्तित्व होते चले गये।

अपने समय के राजनीतिक जीवन से घनिष्ठतम स्तर पर मैकियावेली का सम्बन्ध अवश्य ही था। उसके पिता एक सामान्य किन्तु पुरातन प्रतिष्ठित परिवार के सदस्य एव फ्लारेन्स मे एक वकील थे। उसका कैशोर्य और यौवन फ्लारेन्स की सस्कृति के स्वर्ण युग मे बीता। जब फ्रासीसी सेनाए निर्विरोध नगर म घुस आई, उस समय तक मैकियावेली एक

अज्ञात युवक था। उसके साहित्यिक समकालीनों को उसका पता नहीं था और उस समय तक शायद उसने कभी कुछ लिखा भी नहीं था।

पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण की घटनाओं का उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। उसने मेदीची-परिवार का प्रभाव देखा और महसूस किया कि प्रजा की सद्भावना पर निर्भर न रहने वाला कोई भी शासन अधिक दिनों तक टिका नहीं रह सकता। उसने फ्लारेन्स में विभिन्न गुटों की आपसी प्रतिद्वन्द्विताओं को, सवोनारोला के प्रभाव के युग में देखा और देश की आन्तरिक एकता के बल पर खड़ी हुई एवं शक्तिशाली सरकार की जरूरत महसूस की। शीघ्र ही उसे और भी निकट से राजनीतिक समस्याओं से उलझना पड़ गया।

फ्लारेंस के लोगों में एक बड़ी बुद्धिमत्तापूर्ण परम्परा थी। यहां लेखकों और साहित्यकारों को सरकारी नौकरी दी जाती थी, यद्यपि इस नौकरी में वेतन बहुत कम मिलता था। मैकियावेली द्वारा आजीवन भोगी गई दरिद्रता इसका प्रमाण है। लगभग तीस वर्ष की उम्र में १४९८ में उसकी नियुक्ति सचिव और द्वितीय श्रेणी के मन्त्री के रूप में हुई। नागरिक सेवाओं में यह पद काफी ऊंचा माना जाता था। उसका काम सरकार की कार्यकारिणी समितियों को सलाह देने का था।

इस पद पर रहकर प्रायः वह कूटनीतिक दायित्वों का निर्वाह करता रहा। प्रशासनिक तथा सैनिक पदों पर भी उसने काम किया। मैकियावेली १४ वर्ष तक सरकारी नौकरी करता रहा। १५१२ में लोकतन्त्री शासन के पतन के साथ ही उसके भी कार्यकारी जीवन का अन्त हो गया।*

सोदेरिनी उसे बहुत पसन्द करता था और उससे ढेरों काम लेता था। इसीलिए मैकियावेली से ईर्ष्या करने वाले शत्रु बहुतेरे थे। स्पेन, फ्रांस तथा साम्राज्य की सैनिक और राजनीतिक गतिविधियों का काफी गहरा और त्वरित प्रभाव फ्लारेन्स-वासियों के स्वास्थ्य पर पड़ता था। अतएव वहां का लोकतन्त्री सरकार निरन्तर कूटनीतिक आदान-प्रदान में उलझी रहती

*मैकियावेली के कार्यकारी जीवन का यह ब्यौरा डॉक्टर डब्ल्यू० रुबिन्स्टाइन द्वारा लिखित 'इटालियन स्टडीज फार १९५९' (हेफर एण्ड सन्ज, कैम्ब्रिज) पर आधारित है।

थी। स्फोर्जा एक छोटा-सा राज्य था, जिसका फ्लारेंस के लिए बहुत अधिक सैनिक महत्व था। १४९९ में मैकियावेली को कैटरिना स्फोर्जा जाना पड़ा। पीसा के विरुद्ध युद्ध जारी रखने के लिए शर्तें तय करने का काम लेकर ईस्वी सन् १५०० में वह फ्रांस गया और सम्राट लुई से मिला। सीज़र बोर्गिया की बढ़ती हुई महत्वाकांक्षा से चिन्तित अपने राज्य का सन्देश लेकर उसके पास गया। नये पोप के चुनाव और नीतियों की घोषणा का व्यक्तिगत अनुभव प्राप्त करने के लिए १५०३ में उसे रोम जाना पड़ा। चर्च के खोये हुए साम्राज्य का फिर से जीतने के लिए फ्लारेन्स से मांगी गयी सैनिक सहायता के मुद्दे को लेकर बातचीत करने के लिए १५०६ में वह नेपी में पोप जूलियस द्वितीय से मिला और १५०७ में जब मैक्सिमिलियन ने रोम में अपने राजतिलक के अवसर पर होने वाले समारोह के लिए फ्लारेन्स वालों से खर्च मांगा तो इस धनराशि की मात्रा तय करने के लिए मैकियावली मैक्सि मिलियन से भी मिलने गया।

मैकियावली कोई असाधारण रूप से सफल कूटनीतिज्ञ रहा हो, ऐसी बात नहीं है। यद्यपि वह अपने युग के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों से मिलता रहा। उनमें की जाने वाली बातचीत में कभी भी निर्णायक की सत्ता लेकर वह शामिल नहीं हुआ, लेकिन फिर भी वह कूटनीतिज्ञ की हैसियत से जी भर कर घूमा और आंख-कान खुले रखकर तमाम जानकारी बटोरता रहा। इस काल में उसने अपने उच्चाधिकारियों को जो पत्र लिखे या जो प्रतिवेदन भेजे, वे ऐसी असंख्य दूरदर्शितापूर्ण टिप्पणियों से भरे पड़े हैं, जो आगे चलकर उसकी महत्त्वपूर्ण कृतियों का आधार बनीं।

जिन राज्यों की यात्रा पर वह जाता था, उनकी राजनीतिक अवस्था के मूलाधार को खोज निकालने की उसमें असाधारण क्षमता थी। इसके लिए सामान्य नुक्तों की बड़ी सजगता से जांच करनी पड़ती थी और इन जांच के आधार पर वह सार्वकालिक और सार्वलौकिक सिद्धान्तों का निर्माण करता था। इसी युग में उसके सिर पर यह सनक सवार हुई कि फ्लारेन्स को भाड़े के सैनिकों की शूरवीरता अथवा अस्थिर चित्त मित्र राष्ट्रों की अनिश्चित सैनिक सहायता पर निर्भर रहने के बजाए अपनी नागरिक सेना का गठन करना चाहिए।

लेकिन इस मुद्दे पर भी भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया। १५०५ में सोदेरिनी ने मैकियावेली को नागरिक सेना-सम्बन्धी अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करने का निर्देश दिया। वह फ्लारेन्स द्वारा शासित प्रदेशों में घूम-घूमकर सैनिकों की भरती की अथक चेष्टा करता रहा। १५०७ के प्रारम्भ में एक अध्यादेश जारी करके नागरिक सेना के नवरत्नों की नियुक्ति की गई। इस समिति का अध्यक्ष उसी को तैनात किया गया, लेकिन मैकियावेली के सिपाही पीसा के विरुद्ध युद्ध में अपने करतब नहीं दिखा सके और १५१२ में स्पेन वालों से लड़ते हुए बुरी तरह से विफल रहे। यद्यपि दावा यह किया जाता है कि स्पेनी सैनिकों से लड़ते समय फ्लारेन्सवासी सैनिकों के साथ धोखा किया गया था। यों इस नागरिक सेना की पैरवी के लिए तर्क यह भी दिया जा सकता है कि अपने देश की सैनिक और नागरिक गरिमा को जगाने का मैकियावेली का प्रयास १५२९-३० में जाकर रंग लाया, जब फ्लारेंस लोकतन्त्र ने सफलतापूर्वक एक दीर्घ-कालिक सैनिक घेरे का डटकर मुकाबला किया।

मैकियावेली लोकतन्त्र का नहीं, दरबार का भक्त था। मेदीची के पुनः सत्तारूढ़ होने पर इसे अपदस्थ कर दिया गया। मैकियावेली अब भी राज-नीतिक घटना प्रवाह का अवलोकन जिज्ञासु और चमत्कृत दृष्टि से कर रहा था। इस घटना प्रवाह में अपनी भूमिका निभाने के अवसर से उसे निरन्तर वंचित किया जा रहा था। जमाने द्वारा पहुंचाई गई यह असह्य चोट ही भावी पीढ़ियों के लिए वरदान बन गई। वह अपने मन की कटुता को लगातार अपनी कृतियों में उंडेलता रहा। जो सलाह या मार्गदर्शन वह अपने समकालीन शासकों को देना चाहता था, वह उससे कागज काले करता चला गया।

नवम्बर १५१२ में उसने बहुत आशान्वित होकर मेदीची को एक पत्र लिखकर शासन को सुधारने की राय दी। मैकियावेली को नजरबन्द कर दिया गया। कुछेक महीनों बाद उस पर नये शासकों के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने का सन्देह किया गया। उसे बन्दी बनाकर भारी यातनाएं दी गईं, लेकिन शीघ्र ही उसे मुक्त कर दिया गया। वह अपने निर्धन पारिवारिक घर में सानकाशियानो में जाकर रहने लगा। वहां से वह फ्लारेन्स की

इमारतो को देख सकता था। वह सोचता रहता था कि इन मीनारो के साये मे और महराबो के पीछे क्या हो रहा है ? यही आवास के दौरान उसकी साहित्यिक गतिविधियो का समृद्धतम दौर गुजरा।

समय-समय पर वह फ्लारेन्स आता रहा। अवकाश ग्रहण करने के कुछ वर्ष बाद उसने ओरिसेलारी उद्यान मे होने वाली साहित्यिक गोष्ठियो मे भाग लेना शुरू किया। यहां वह अपनी रचनाए और लेख भी पढा करता था और उसे अपनी कला के पण्डित का-सा सम्मान प्राप्त होता था।

इसी दौर मे मेदीची घराने से उसका परिचय कराया गया। सरकारी पद पाने की उसकी आशाए एक बार फिर जाग उठी। व्यापारिक महत्त्व के कुछेक काम करने के बाद वह थोडे समय के लिए फिर सार्वजनिक जीवन मे लौटा। वह रोम आया। यहा उसे पोप क्लीमेन्त की ओर से 'फ्लारेन्स का इतिहास' के लेखन के लिए आर्थिक सहायता दी गई। यहा उसने रोमाना मे एक नागरिक सेना खडी करने के लिए पोप को तैयार करना चाहा। उसकी यह चेष्टा भी विफल रही। पोप ने इस दिशा म कोई व्यावहारिक कदम नही उठाया। बहुत कोशिश के बाद अन्तत उसे फ्लारेन्स के परकोटे की किलेबन्दी की एक परियोजना को पूरा करने का दायित्व सौंपा गया।

दुर्भाग्य से मैकियावेली का सार्वजनिक जीवन मे पुनरागमन भी उसके लिए सुखकर सिद्ध नही हुआ। जब लोकतन्त्र का फ्लारेन्स मे पुनरोदय हुआ, तो उसे मेदीची परिवार का पिट्ठू समझा गया। नये शासको की नजर मे वह सन्दिग्ध व्यक्ति बन गया। अतएव उसकी खुलकर उपेक्षा की गई। इसके कुछ ही समय बाद वह बीमार पड गया। उसके उदर में किसी भयकर रोग ने डेरा डाल दिया था।

ईस्वी सन् १५२७ मे उसका देहावसान हो गया। उसके पुत्र के कथनानुसार उसकी मृत्यु के समय उसका परिवार बहुत दरिद्रावस्था मे था।

मैकियावेली के पारिवारिक जीवन के विषय मे हमे बहुत कम जानकारी मिलती है। ईस्वी सन् १५०२ मे उसने मारिएत्ता कोर्सिनी से विवाह किया था। मारिएत्ता से उसके छ बच्चे हुए। पत्नी उसके प्रति पूर्णतया समर्पित थी, लेकिन क्योकि मैकियावेली का मन-प्राण राजनीति म बसा

हुआ था, अतएव उसकी भद्र पत्नी जीवन भर उसकी उपेक्षा की शिकार बनी रही।

उसके सम्बन्ध में जैसे अनैतिक, अनुशासनहीन जीवन की परिकल्पना की जाती है, वैसा जीवनयापन उसने सचमुच कभी किया होगा, इसमें सभी जानकार लोगों को सन्देह है। एक कुरूपा वेश्या से हुई अपनी किसी मुलाकात का वर्णन करते हुए जो एक पत्र उसने अपने मित्र फ्रांसिस्को वेत्तोरी को लिखा था, वह और कुछ नहीं, मात्र साहित्यिक कल्पना की ही उड़ान मालूम होता है।

निस्सन्देह वह भावातिरेक से ग्रस्त प्राणी था। परम्परागत बदनामी के अनुसार जिस षड्यन्त्रकारी, धूर्त और धैर्यवान ढंग का चित्रण किया जाता है, वह यथार्थ मैकियावेली से कहीं मेल नहीं खाता; लेकिन यदि उकसाये जाने पर वह भावान्दोलन का शिकार हो सकता था—उदाहरणतया कभी अपने ही दुर्भाग्य से और कभी भाड़े के सैनिकों द्वारा की गई कुप्रबन्धना के कारण—तो भी उसके जीवन क्रम से छोड़ा गया प्रभाव यही है कि वह भीड़ से अलग-थलग रहने वाला, चेहरे पर अपमानजनक, तिरस्कारपूर्ण मुस्कान धारण किए हुए दूर खड़ा रहने वाला दम्भी दर्शक हो सकता है, सामान्य व्यक्ति की कुण्ठाओं तथा वर्जनाओं के नीरस बोझ तले दबा रहने वाला औसत प्राणी नहीं। राजनीतिक जीवन में व्यावहारिक स्तर पर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने की आकांक्षा के साथ, गर्वीले स्वभाव तथा बौद्धिक अलगाव की पटरी तो बैठ जाती है, लेकिन सदैव तो ऐसा नहीं होता।

विलारी के शब्दों में युवा मैकियावेली का जीवन वृत्तान्त इस प्रकार है: "मध्यम कद, इकहरा शरीर, चमकती हुई आँखें, काले बाल, काफी छोटा-सा सिर, कुछ-नासिका और कसे हुए से होंठ। उसके पूरे व्यक्तित्व से जाहिर होता था कि वह बड़ी पैनी नजर से हर वस्तु और घटना का निरीक्षण करता है और बड़ी गहराई से सोचता है, लेकिन इसी व्यक्तित्व से यह प्रभाव भी पैदा होता था कि यह व्यक्ति दूसरों पर कुछ अधिक प्रभाव का दबदबा नहीं रखता—न ही रख पाता। निरन्तर उसकी मुख मुद्रा पर जो व्यंग्य की, विद्रूप की छाया बनी रहती थी, उससे वह छुटकारा नहीं

पा सकता था। उसकी आखो मे इसकी झलक मिलती थी। इसी से लगता था कि यह व्यक्ति बडी निर्ममता से, वडे निरपेक्ष भाव से किसी भी स्थिति का मूल्याकन कर सकता है। इसके वावजूद उसका जीवन और व्यक्तित्व प्राय उसकी अपनी प्रबल कल्पना शक्ति के द्वारा शासित रहता था। कभी-कभी तो उसकी यह कल्पना शक्ति इस हद तक उस पर छा जाती थी कि वह अतिकल्पनाशील और अकल्पनीय कोटि का भविष्य द्रष्टा नजर आन लगता था।"

वह कठोर परिश्रमी प्राणी भी था। जिस लोकतन्त्र की सेवा उसने अकथनीय परिश्रम से की थी, वह उस समय ध्वस्त हुआ, जब मैकियावेली ४० वर्ष का था। इसके वाद के जबरदस्त बेकारी के जमाने मे उसने कई पुस्तकें लिखी और इन पुस्तको के बल पर वह इतालवी गद्य के आद्य गुरुओ में गिना जा सकता है। ये पुस्तकें थी—'शासक', 'लिवी विषय का वक्तव्य' (उसका वास्तविक राजनीतिक दर्शन), 'युद्ध की कला', 'फ्लारेंस का इतिहास', शोध ग्रन्थ 'भाषा-सम्बन्धी बातचीत', गलत मूल्याकन के शिकार कुछ नाटक 'मान्द्रागोला' और क्लीजिया' और इसके अतिरिक्त भी गद्य एव पद्य मे लिखित अनेक रचनाए।

आज सामान्यतया यह कहा और समझा जा सकता है कि उसकी मेधा और व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करने का असाधारण दायित्व 'शासक' पर डालकर समीक्षको-आलोचको ने उसके साथ घोर अन्याय किया है, वर्ना उसका बुद्धि-चापल्य और उसकी अभिव्यजना, उसका पाण्डित्य एव उसकी पैठ बहुत गहरी थी, फिर भी उसके विषय मे कोई भी निर्णय देने के लिए 'शासक' को आधार बना लेना अनुचित नही है, क्योकि यह कृति उसकी सर्वश्रेष्ठ रचना है और उसके सारे राजनीतिक चिन्तन का सार इसी मे निहित है।

आज भी यह कृति लोगो की भावनाओ को भडकाती है और विवाद का विषय बनी हुई है। इसका कार्य, इसके लेखन का उद्देश्य, इसके लेखन की तिथि, इसका अन्तिम अध्याय और यह मुद्दा भी कि पहले पहल यह कृति अपने प्रारभिक समर्पण के साथ प्रकाशित हुई थी या उसके बिना—ये ऐसे मामले हैं जिन पर आज भी कोई अन्तिम और अकाट्य निर्णय नही

दिया जा सकता।

मैकियावेली की धारणा थी कि 'शासक' के प्रकाशन के लिए क्षमा-याचना की, अथवा कोई सफाई देने की कुछ विशेष आवश्यकता नहीं है। १० दिसम्बर, १५१३ को फ्रासेस्को वेत्तोरी के नाम लिखे गए अपने एक पत्र मे उसने पुस्तक के उद्‌भव और उसके कथ्य-विस्तार का इतना विस्तृत ब्यौरा दिया है कि उसके आधार पर कम-से-कम कुछेक अतिरंजित धारणाओं का खण्डन निश्चय ही किया जा सकता है।

लगभग व्यंग्य और पश्चात्ताप की भाषा मे यह पत्र फ्लारेन्स से दूर रहकर बिताए गए उसके जीवन की कहानी कहता है, जो इस प्रकार है वह सूर्योदय के साथ ही उठ जाता है और यह देखने जाता है कि उसके लकडहारे उसके लिए कैसे अपना काम पूरा करते हैं, वह कभी दान्ते को पढ़ने के लिए इधर-उधर भटकता है, कभी पेत्रार्क, ओविद, तिबुलस आदि को एकाकी बैठकर पढ़ता तथा अपनी प्रेम कहानियो को दुहराता, बार-बार जीता है। कभी-कभी वह राह मे आते-जाते किसी राहगीर के साथ बतियाता हुआ शराब घर चला जाता है। उदासी और चिन्तन मे मग्न सस्ते किस्म का खाना खाता है, फिर सराय मे जा पहुचता है और चौपड अथवा ताश खेलते हुए, स्थानीय व्यापारियो के साथ मन बहलाते हुए अपना समय काटता है।

लेकिन फिर शाम हो जाती है। मैकियावेली घर लौटता है और अपने अध्ययन कक्ष मे जाकर आसन जमा लेता है। अपने चिकने कपडे उतार दरबारी वेशभूषा पहनकर और कल्पना के घोडे पर सवार होकर ऐतिहासिक राजदरबारो मे प्रविष्ट होता है और इतिहास के प्रसिद्धतम तथा महानतम व्यक्तियो के साथ दोस्ताना ढग से बातचीत करता है। वह राजनीति के सम्बन्ध मे बातचीत करता है। उसका जन्म ही इसीलिए हुआ था। वह इन महान शासको से उनके द्वारा अपनाई गई विशिष्ट नीतियो के कारण पूछता है, और वे उसे स्पष्ट रूप से सारी बातें बताते हैं।

एक बार उसने बातचीत के दौरान कहा था, "मैंने 'रियासतो के बारे मे' एक छोटी-सी पुस्तक लिखी है। इसमे मैंने जितनी गहराई से हो सकता

है, इस विषय पर विचार किया है। मैंने इसमे चर्चा की है कि रियासत क्या होती है, कितने प्रकार की रियासतें होती हैं, उन्हे कैसे प्राप्त किया जाता है, कैसे उन पर अपना नियन्त्रण बनाए रखा जा सकता है, उनसे हाथ क्यो धोने पडते हैं ? और अगर मेरे लेखन का कोई अंश पढकर आपको कभी खुशी हो तो इसका आपको बुरा नही मानना चाहिए और इस कृति का तो शासक को, विशेषकर नये शासक को स्वागत करना चाहिए। इसीलिए मैंने इसका समर्पण महिमामय ग्यूलियानो के नाम किया है …।"

आज भी यह व्यापक धारणा है कि मैकियावेली की 'छोटी-सी पुस्तक' रियासतो के बारे मे लिखी गई। 'शासक'—उसके लिवी विषयक वक्तव्य' का कुछ हिस्सा लिख लिए जाने के बाद शुरू की गई थी। इसका लेखन जुलाई १५१३ मे शुरू हुआ और १५१४ मे समाप्त। 'शासक' मे प्रतिपादित सभी सिद्धान्तो तथा उसमे वर्णित सभी घटनाओ को अधिक विस्तार के साथ 'लिवी विषयक वक्तव्य' मे पढा जा सकता है।

लेकिन दोनो कृतियो के बीच पृष्ठभूमि और दृश्यांकन का चमत्कारिक अन्तर है। 'वक्तव्य' मे भावातिरेक की कमी नही है, लेकिन उसमे हर विषय पर ब्यौरे मे चर्चा की गयी है। उसमे कही गयी हर बात से एक समर्पित लोकतन्त्री विचारक बाहर झाकता नजर आता है और यही लोकतन्त्र की गन्ध उसके अपने तत्कालीन जीवन के लिए खतरा दिखाई देती थी। इसके विपरीत 'शासक' के हर पृष्ठ से एक निरकुश शासक मस्ती मे झूमता हुआ निकलता है। यह निरकुश शासक क्या है, निर्मम, कार्यशील और गतिवान, अविनीत है। वह सोलहवी शताब्दी के नये राजाओ का साहित्यिक पूर्वज ही लगता है।

मैकियावेली को 'वक्तव्य' की उदार चेतना से इस राक्षसीवृत्ति वाले 'शासक' की ओर क्यों मुडना पडा ? इस प्रश्न का मूलाधार यही मान्यता है कि 'शासक' के लेखन से पूर्व 'वक्तव्य' की शुरुआत की जा चुकी थी। डॉक्टर हैन्स बैरन इस बात से सहमत हैं। वे दोनों पुस्तकों के बीच बदलते हुए चिन्तन प्रवाह को मैकियावेली के मानस के स्वाभाविक विकास का प्रतिबिम्बन मानते हैं।

निश्चय ही फिर से सरकारी नौकरी पा जाने की आशा और आकांक्षा का इसमे काफी हाथ था। पुस्तक के "ग्यूलियानो द' मेदीची" (और बाद मे लारेन्जो द' मेदीची) के नाम किये गये समर्पण से उसकी अवसरवादिता-भर ही नही झलकती है, चाहे मैकियावेली सरकारी नौकरी पाने के लिए बेहद उत्सुक रहा हो। उसके पास ऐसा सोचने का कोई कारण ही नही था कि ग्यूलियानो तथा लारेन्जो इतिहास-सिद्ध प्रख्यात एव महान व्यक्ति सिद्ध नही होगे कि उनके द्वारा अकाट्य निर्णय शक्ति एव प्रबलता से काम किये जाने की और निरन्तर फूट एव विदेशी सत्ता के शिकार इटली का उद्धार करने की 'शासक' मे व्यक्त की गयी आशा पूरी नही होगी।

वस्तुत सर्वोत्तम कोटि के नये शासक का मैकियावेली द्वारा किया गया कल्पनाप्रवण चरित्राकन इतनी ईमानदारी से किया गया है और इतना जीवन्त है कि वह मात्र दासभावना से उद्भूत नही हो सकता। जहा कही उसने व्यग्य-विद्रूप का आश्रय लिया है, अथवा चाटुकारिता की चेष्टा की है, वही वह हलका पड गया है और निर्वस्त्र हो गया है।

यह भी कहा जा सकता है कि मैकियावेली की मौलिक रुचि राज्य मे थी, प्रशासनिक पद्धतियो मे नही। राज्य की भी उसकी धारणा उस सत्तात्मक इकाई पर आधारित है, जो आत्म निर्भर है, जो अन्य राज्यो से निरन्तर सघर्षरत रहती है और जो इसी कारण निरन्तर शक्ति और सैन्य की खोज मे रहती है। उसके द्वारा वर्णित नया शासक राज्य का ही मानवीकृत रूप था। इसी के बहाने मैकियावेली को मेदीची को प्रसन्न करने और उसकी अनुकम्पा प्राप्त करने का अवसर मिला। इसी के माध्यम से उसने प्रभावशाली विदेशनीति की उच्च राजनीतिक चुनौती के विषय मे अपनी धारणाओ का नाटकीकरण किया।

मैकियावेली ने इस कृति 'शासक' मे विदेशनीति के सम्बन्ध मे जो विचार व्यक्त किये हैं, उन्हे जैसे कोई निरकुश शासक अपने वैदेशिक सम्बन्धो का आधार बना सकता है, वैसे ही किसी लोकतन्त्र की विदेश-नीति का आधार भी बनाया जा सकता है और मैकियावेली के निरकुश शासक को आप अनुत्तरदायी, अत्याचारी, आतकवादी शासक नही कह सकते। वह बार-बार इस बात पर जोर देता है कि शासको को अपने

शासन का आधार जनता की सद्‌भावना को बनाना चाहिए। यह शासक पौर्वात्य देशों के किसी प्रजापीडक, स्वेच्छाचारी शासक-सा निरकुश नही हो सकता। उसे अपनी प्रजा की भावनाओ तथा सवेदनाओं के प्रति निरतर सजग रहना चाहिए। उसे क्रूरता का मार्ग अपनाने के लिए प्रस्तुत रहना पडता है, तो केवल इसलिए कि दूरगामी परिणामो की दृष्टि से कई बार अशक्त और क्रूर सिद्ध होने की अपेक्षा क्रूरता का परिचय देना अधिक दयालुता का प्रमाण होता है।

इसलिए मैकियावेली की इस कृति मे यदि कथ्य के स्तर पर कोई विसगति या विरोधाभास मिलता है—यदि वह एक स्थान पर लोकतन्त्री दृष्टिकोण से और दूसरे स्थान पर निरकुश शासक के दृष्टिकोण से विवेचन करता हुआ दिखाई देता है, तो इसका यह मतलब नही कि कभी वह स्वातन्त्र्य की पैरवी करता है और कभी आतकवाद की। हमे काल-गणना का भ्रम उत्पन्न करने वाली परस्पर विरोधी धारणाओ, लोकतन्त्र और तानाशाही (टोटलिटेरियनिज्म) के बीच विरोध की धारणाओ को लेकर, उसके उद्देश्यो के प्रति कोई भ्रान्ति अपने सामने पैदा नही होने देनी चाहिए। फ्लोरेन्स के लोकतन्त्रवादी तन-मन प्राण से मेदीची से घृणा करते थे, लेकिन दोनो ही पक्ष अपने-अपने पथ का अनुसरण कट्टरपथी ढग से कर रहे थे। मेदीची लोग जितने कट्टर तानाशाह थे, लोकतन्त्रवादी विचारक सार्वजनिक मताधिकार के उतने ही कट्टर प्रचारक और धारक थे।

मैकियावेली अपने-आप मे अधिकार और शक्ति से सम्पन्न राज्य की कल्पना को लेकर सारा चिन्तन कर रहा था। वह चाहता था कि उद्धार की तमाम आशाओ के दायरे से परे तक, सैकडो बडे-छोटे टुकडो मे बटे हुए इटली पर समग्रत अपना अधिकार और नियत्रण स्थापित करने में समर्थ शासन की स्थापना की जाए। उन दिनो आवश्यकता इस बात की थी कि विदेशी आक्रमण और नियन्त्रण का प्रतिरोध करने का इच्छुक इतालवी शासक निर्ममतापूर्वक अपने कार्य-व्यापार का सचालन करे।

इस व्यावहारिक विचारधारा के साथ ही वह एक राजनीतिक दर्शन का भी प्रतिपादन कर रहा था। यह दर्शन उसकी कोई नितान्त मौलिक

उद्भावना रही हो, सो बात नही। इस दर्शन के अनुसार प्रत्येक राष्ट्र अनिवार्य रूप से चक्रवत् प्रगति करता है। समृद्धि से विपत्ति की ओर तथा पुन विपत्ति से समृद्धि की ओर। राष्ट्र अनिवार्य रूप से पथभ्रष्ट होते हैं। उनके मूल्यो और मानदण्डो का पतन होता है; लेकिन जब कभी ऐसा होता है तब राज्य की महत्ता को बचाया जा सकता है। इस महत्ता की पुर्नस्थापना की जा सकती है। शर्त यह है कि इसका दायित्व कोई ऐसा आदमी ले जो राज्य के सस्थापक जैसा ही महान, पराक्रमी एव बुद्धिमान व्यक्ति हो।

इटली के पुनरोत्थान का बीडा उठाने लायक व्यक्ति की तलाश मे मैकियावेली ने पहले तो रोमनो की ओर दृष्टिपात किया। इस दृष्टि से वह अपने युग का विशिष्ट प्रतिनिधि था। उसकी भी यही आस्था थी कि मानव प्रकृति स्थिर रहती है और प्राचीनकाल के लोगो की राजनीतिक एव कलात्मक गरिमा का आज के युग मे कोई मुकाबला नही किया जा सकता, न भविष्य मे किया जा सकेगा।

राज्य के सस्थापक और विधायक का प्रारूप उसने प्राचीन विश्व के अध्ययन के ही आधार पर तैयार किया था। राज्य के पुनरुत्थान का दायित्व लेने वाले राष्ट्र नायक, तानाशाह आदि की धारणा भी उसके प्राचीनतावादी दृष्टिकोण का ही प्रमाण थी। उसके द्वारा प्रतिपादित तानाशाह आधुनिक जगत का सत्तालोलुप अवसरवादी व्यक्ति नही होता, बल्कि एक ऐसा प्रबुद्ध व्यक्ति होता है, जो सकट काल मे राष्ट्र की बागडोर सम्हालता है, राष्ट्र के व्यक्तित्व और चरित्र को खण्डित होने से बचाता है और राष्ट्र की खोयी गरिमा को फिर से स्थापित करता है। उसकी कल्पना का तानाशाह कई बार अपने सह-नागरिको की अनुमति एव अनुमोदन से भी सत्तारूढ होता है, जिससे कि देश मे व्यवस्था स्थापित की जा सके तथा राष्ट्रीय शक्ति का पुनरुदय सम्भव हो सके। चाणक्य द्वारा प्रशिक्षित तथा सिंहासनारूढ कराया गया चन्द्रगुप्त मौर्य इस परि-कल्पना से तनिक भी भिन्न नही था। 'अर्थशास्त्र' मे प्रतिपादित आदर्श शासक की धारणा मैकियावेली के दम्भी आदर्श से कुछ भिन्न और कुछ बेहतर ही ठहरती है।

मैकियावेली प्रेरणा के लिए अतीत की ओर देखता था; लेकिन अपनी धारणाओ को रूप देने के लिए वह विभिन्न व्यक्तियो के राजनीतिक कार्य-व्यवहार के आधार पर सामान्यीकरण की विधि अपनाता था। इस विधि के अन्तर्गत अतीत की तुलना वर्तमान से करनी पडती थी और मैकियावेली के युग के विशिष्ट 'आधुनिक शासक' वे लोग थे जो फ्रासीसी आक्रमणो के कारण कमजोर पडे राष्ट्रीय समुदायो की भ्रष्ट स्थिति का लाभ उठाकर दूसरो के अधिकारो का हनन करके गद्दी पर बैठे थे।

सीज़र बोर्गिया के चरित्र-चित्रण मे मैकियावेली की प्रशासनिक सुधारक की एव किसी भी कुशल इतालवी सत्तालोलुप तानाशाह के समक्ष प्रस्तुत सभावनाओ की कल्पनाए मिश्रित थी। सीज़र द्वारा अपने पिता पोप अलेग्जान्देर की सहायता तथा निर्मम इच्छाशक्ति के बल पर इटली के मध्य अपने लिए एक साम्राज्य खडा कर लेने की घटनाए मैकियावेली को याद थी। बरसो पहले जब उसे फ्लोरेंस की लोकतत्री सरकार की ओर से सीज़र के पास भेजा गया था, तब सीज़र उसे एक खतरनाक सम्भावित शत्रु नज़र आया था; लेकिन इस कृति 'शासक' मे वह सीज़र को एक जीवन्त आदर्श के रूप मे प्रस्तुत करता है। कोई भी इतालवी शासक जो आधे मन से काम करने और अधूरी कार्यवाहिया करने की आदत नही रखता और जो तिनके से झोपडी छवाने का साहस रखता है, मैकियावेली के अनुसार उसे सीज़र को उदाहरण मानकर चलना चाहिए। इस स्तर पर आदर्श प्रस्तुत करने के जोश मे मैकियावेली ऐतिहासिक सीज़र को भूल गया है। इस पुस्तक मे प्रस्तुत सीज़र इस विचारक के राजनीतिक चिन्तन का जीवन्त रूप है, जिसे वह मेदीची के सामने आदर्श रूप मे प्रस्तुत कर रहा है।

'शासक' मे व्यक्त मनोवैज्ञानिक पैठ और मानवीय चरित्र का सार्वजनिक जीवन के परिप्रेक्ष्य मे किया गया गहन अध्ययन चमत्कारिक है। इस पुस्तक मे पैगम्बरो जैसी भविष्यवाणी करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। यही नही, इस कृति का गद्य भी बडा अभिधात्मक, लेकिन भावातिरेक से भरपूर है और मजे की बात यह कि इस कृति मे, प्रथम

संस्करण से लेकर आज तक पाठक को चौंकाने और भटका देने की असाधारण क्षमता बनी हुई है। सदैव बनी रहेगी।

मैकियावेली जितना अच्छा कलाकार था, उतना ही अच्छा विश्लेषण-कर्ता भी था। अपने विश्लेषण की प्रक्रिया मे भी वह चौंकाता और चुटियाता हुआ चलता था। अर्थ की विपरीतता और सामान्यीकरण, दोनो से उसे प्यार था। वह अपनी टिप्पणियो और निष्कर्षों को निरन्तर नाटकीय रूपाकार मे प्रस्तुत करता हुआ चलता था। तर्क की अपेक्षा अन्त-र्दृष्टि का सहारा वह अधिक लेता था और वाछित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए अपने निष्कर्षों को लगातार अतिरजित करता चला जाता था।

दुस्साहसपूर्ण और वेगपूर्ण वक्तव्यो म उसे एक विशेष प्रकार के रोमाच और पुलक का अनुभव होता था। किसी भी कीमत पर प्रशासन मे मुस्तैदी और फुर्ती लाना उसका लक्ष्य था। विदेशी सत्ताओं की सख्त-मिज़ाजी का मुह तोड जवाब तुर्शी से ही देने के लिए उसके द्वारा इतालवी शासको के प्रति किया गया आह्वान ही शायद वह कारण है, जिसने शता-ब्दियो से लगातार इस कृति को उदारचेता विचारको की तीव्र आलोचना का विषय बना रखा है, लेकिन बात सिर्फ इतनी ही नही है। जब 'शासक' की अमरता के विषय मे सब कुछ कह और सुन लिया जाता है तब भी सवाल यह रह जाता है कि इसमे प्रस्तावित आचारसहिता का सैद्धान्तिक औचित्य स्वय सिद्ध होते हुए भी और अधिकाश शासको के प्रशासनिक और दैनिक व्यवहार का नियामक आधार होते हुए भी सभी की वितृष्णा का विषय बना हुआ है।

मैकियावेली का दावा था कि वह राजनीति का विवेचन एक नय ढग से कर रहा है। उसका कहना था कि शासको की आचारसहिता के विषय मे उसके निष्कर्षों का आधार वायवीय नही, बल्कि ऐतिहासिक विश्लेषण होगा। इसी बिन्दु पर आकर 'शासक' पत्रकारिता के स्तर से उठकर और एक समसामयिक सन्दर्भ की पूर्ति के लिए लिखित दस्तावेज के दर्जे से उठकर प्रशासन की कला के सम्बन्ध मे लिखी गई एक निबन्ध रचना बन जाता है और उसे एक 'क्लासिक' का सम्मान प्राप्त हो जाता है। उसके द्वारा अपनायी गयी विवेचन पद्धति क्रान्तिकारी और विज्ञान-सम्मत थी

अथवा नही, इस सवाल का जवाब शायद हम यहा नही दे सकते। यह सच है कि 'राजनीति शास्त्र' के विकास-पथ पर 'शासक' एक मील का पत्थर है।

'शासक' के द्वारा पुञ्जीभूत तमाम रोमाच और वितृष्णा इस स्पष्ट स्वीकृति से उदभूत हैं कि व्यवहारत अपने घोषित-अघोषित लक्ष्यो की पूर्ति के लिए सभी सरकारें, सभी शासक निर्ममता और क्रूरता का व्यवहार करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। मैकियावेली द्वारा प्रतिपादित मानव-सम्बन्धी इस हीनभावना को हम लोग शायद आज उतने जोर से चुनौती नही दे सकते, जितने जोर से हमारे पुरखे दिया करते थे। जहा वह वर्णन करने लगता है वहा वह सिद्धान्तो का कोई प्रश्न ही नही उठाता, लेकिन 'शासक' मैकियावेली-युगीन शासको के दैनन्दिन व्यवहार पर टिप्पणी से अधिक भी बहुत कुछ है। वह मार्ग दर्शक के रूप मे स्वय को मान्यता दिलाना चाहता था और इसीलिए वह प्रशासन-सम्बन्धी मन्त्रणा दे रहा था।

यद्यपि वह कई बार बात को टालने की भी कोशिश करता था। वह चाहता तो सख्त कार्यवाही के औचित्य और आवश्यकता को सिद्ध भी कर सकता था, फिर भी अन्तत उसने यही कहा कि राजनीति मे किसी भी अच्छाई-बुराई का फैसला उसकी कार्यवाही के यथार्थ उद्देश्य और उसकी सफलता के ही आधार पर किया जा सकता है। इस मुद्दे पर मैकियावेली का चिन्तन आज भी उतने ही तीव्र मतभेद का विषय है, जितना वह शताब्दियो पहले था।

'शासक' की भाषा उतनी आधुनिक नही है, जितना उसके कलेवर मे बाधा गया चिन्तन। हमने इसे आधुनिक बनाने का कोई विशेष प्रयास भी नही किया, लेकिन एक परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देगा। इस कृति के इतालवी शीर्षक 'इल प्रिन्सीप' का शाब्दिक अर्थ अग्रेजी मे 'द प्रिन्स' है और इस अग्रेजी शब्द का अर्थ हम लोग सैकडो वर्षो से राजकुमार अथवा युवराज ही पढते आये हैं, लेकिन शताब्दियो के अध्ययन और विवेचन के दौरान इस कृति म 'प्रिन्सीप' का अर्थ कभी भी 'राजकुमार' नही लगाया जा सका। यही कारण है कि अर्थ की स्पष्टता को ध्यान म रखकर इसका

हिन्दी पर्याय 'शासक' और 'राजा' शब्दों को बनाया है। इसी प्रकार से 'प्रिन्सीपैलिटी' शब्द के लिए भी 'राज्य' या 'रियासत' और 'डोमीनियन' के लिए 'विजित प्रदेश' अथवा 'उपनिवेश' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है।

इस अनुवाद की प्रक्रिया में मैकियावेली की जटिलतम धारणाओं को सीधी और स्पष्ट हिन्दी में रखने की चेष्टा की गई है। इसलिए कई बार वाक्यों की सरचना को भी बदलना पड़ा है। इससे एकरसता को टालने में भी सहायता मिली है।

मैकियावेली की मूलकृति में 'ओनोर' (सम्मान), 'ग्लोरिया' (कीर्ति *अथवा यश), 'फोर्चूना' (भाग्य), 'नेसैसिता' (आवश्यकता), 'विर्चू'* (ईमानदारी, गुणवत्ता) आदि का बारम्बार प्रयोग हुआ है। मैकियावेली तथा 'रिनेसा' काल के अन्य यूरोपीय लेखकों के लिये ये शब्द चलते सिक्के थे। कई बार इनका प्रयोग बड़ी समझदारी से किया गया है। उदाहरणार्थ आठवें अध्याय में, जहां मैकियावेली ओलिवरोत्तो द्वारा अपने पालक-पिता *को छलने और उसकी हत्या करने की घटनाओं का वर्णन करता है,* इस शब्द 'ओनोर' (आत्म-सम्मान) का बार-बार प्रयोग हुआ है और इस प्रयोग *से इसमें निहित विद्रूप की तीव्रता बढ़ी है।*

लेकिन मैं इन्हीं कुछेक शब्दों के आधार पर पूरे निबन्ध की सरचना को एक खतरनाक आदत समझता हू और अनुवाद करते समय हर शब्द के पर्याय के रूप में बार-बार एक ही शब्द का प्रयोग आद्योपान्त करते रहना भी जरूरी नही समझता। इससे मूलकृति का सौन्दर्य विरूप होता है।

मैं यह आशा ही कर सकता हू, दावा नही कि पाठक इस अनुवाद में मूल लेखक मैकियावेली के लेखन की, उसके चिन्तन की प्रबल धारा का बल अनुभव कर सकेंगे। इस गद्य में चुस्ती है, तीव्र प्रवाह और सीधे चोट करने की क्षमता भी। इसमें कटु व्यग्य के लिए भी स्थान है, और अलकार पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए भी।

एक साहित्यिक कृति के रूप में 'शासक' की सरचना प्राय औपचारिक शैली में की गयी थी। उदाहरणार्थ अध्यायों के शीर्षक लातीनी भाषा में

रखे गये थे।[1] आज इस कृति का दायरा कुछ सिकुडा हुआ और कुछ दूरस्थ भी नजर आ सकता है; लेकिन पाठक को चौंकाने के लिए, चौंकाते चले जाने के लिए इसके चिन्तन का आधुनिक युग मे किया जा रहा प्रयोग काफी होगा। इसका लेखक एक प्रबल और जटिल भावावेगो का स्वामी था। उसके कल्पना प्रवण प्रबुद्ध व्यक्तित्व का निर्विवाद आईना यह कृति है।

इस अनुवाद का आधार 'इल प्रिन्सीप' का वह सस्करण है, जो १९२९ मे फ्लोरेंस मे प्रकाशित हुआ था और जिसका सम्पादन सेन्योर मेज़ोन तथा कैंसेला ने किया था।

1. कृति के भीतर ही निहित प्रमाणों तथा इन लातीनी शीर्षकों का अर्थ साहित्यिक मूल्यांकन करने वालों ने यह लगाया है कि 'शासक' के अधिकांश मे मैकियावेली का प्रेरणा सूत्र विरोध और विपरीतार्थ के हाथों में था और बारहवें अध्याय के बाद उसकी प्रेरणा का स्रोत शासक के सम्बन्ध में लिखा गया प्रारम्भिक मानवतावादी साहित्य बन गया था। यह अभिमत 'जर्नल आफ माडर्न हिस्टरी', वर्ष ११, अक ४ (दिसम्बर १९३९) में गिल्बर्ट ने व्यक्त किया था।

३

मिश्रित राज्य

लेकिन नयी रियासतों मे कठिनाइया पैंदा होती ही हैं। पहली बात, अगर कोई रियासत एकदम नयी न होकर किसी पुराने ही राज्य मे जोडा गया कोई नया हिस्सा है (जिससे सारा का सारा राज्य, समग्रत, सकलित रियासत कहलाता है), तो वहां प्राय एक ही स्वाभाविक कठिनाई के कारण अव्यवस्थाए पैंदा होती हैं और वह कठिनाई हर नये राज्य मे पैंदा होती है। होता यह है कि लोग बेहतर शासन की आशा लेकर स्वेच्छा से अपना शासक बदल देते हैं। इसी आशा के वशीभूत होकर वे शासक के विरुद्ध शस्त्र उठाते हैं, लेकिन वे अपने-आप को ही धोखा देते हैं। अनुभव से उन्हे पता चलता है कि स्थिति पहले से खराब हो चुकी है। यह विडम्बना भी एक अन्य, सामान्य एव स्वाभाविक आवश्यकता से खडी होती है शासक उन सभी लोगो को आघात पहुचाने के लिए बाध्य होता है, जिन्होंने उसे गद्दी पर बैठाया है—वह इन सहायको को बन्दी बनाता है, और नव प्राप्त विजय को सुदृढ करने के लिए उन पर और भी अगणित कठिनाइया लाद देता है। परिणामस्वरूप रियासत पर अधिकार करने के लिए जिन लोगों के हितों को आप चोट पहुचाते हैं, वे सब आपका विरोध करते हैं, जिन्होंने आपको सिंहासनारूढ कराया है, उन्ही की मैत्री आपके हाथो से छिन जाती है, उनकी अपेक्षा के अनुसार आप उन्हें उपकृत नही कर सकते, और उनके प्रति कृतज्ञ होने के कारण, उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही भी नही कर सकते। किसी शासक की सेना कितनी ही प्रबल क्यों न हो, विजित प्रदेश मे प्रविष्ट होने के लिए उसे स्थानीय जनता की सद्भावना की आवश्यकता तो होती ही है। यही

कारण है कि फ्रांस के शहशाह, बारहवें लुई ने जितनी तेजी से मीलान पर कब्जा किया था, उतनी ही तेजी से वह उसे खो बैठे। पहली बार स्वय लुदोविको की अपनी ही सेनाए उसके हाथो से नगर को छीन लेने के लिए काफी थी, क्योंकि उसके स्वागतार्थ नगर के फाटक खोलने वालो ने जब यह महसूस किया कि उनकी अपनी आशाए और लाभ की अपेक्षाए छलना मात्र थी तो वे नवागत शासक के द्वारा किये गये तिरस्कार को सहन नही कर सके।

यह भी निश्चित है कि विद्रोह के बाद पुनर्विजित प्रदेश आसानी से अपने शासक के हाथो से नही निकलते। कारण? पिछले विद्रोह का लाभ उठाकर, अपराधियो और विरोधियो को कुचलने मे, सन्दिग्ध व्यक्तियो की जाच पडताल कराने मे और अपनी कमजोरियों को दूर करके शासन को सुदृढ करने मे, शासक पूर्वापेक्षा कम झिझकता है। इस प्रकार से, फ्रास के हाथो से पहली बार मीलान को निकाल लेने के लिए ड्यूक लुदोविको को केवल सीमान्त पर कुछ छापे मारने पड़े, लेकिन दूसरी बार फ्रास का शिकजा हटाने के लिए पूरे ससार को उसका विरोध करना पडा, और उसकी सेनाओ को या तो नष्ट कर दिया गया अथवा इटली से खदेड दिया गया। इसके कारणो का विवेचन मैं पहले ही कर चुका हू। कुछ भी हो, फ्रास के हाथो से मीलान दोनों ही बार निकल गया।

पहली बार ऐसा क्यो हुआ, इसके कारण हम बता चुके हैं। अब दूसरी बार फ्रासीसी शासन के हाथो से मीलान के निकल जाने के कारणो की चर्चा बाकी है—और यह भी देखना बाकी है कि इस पराजय के निराकरण के लिए फ्रास के पास क्या-क्या उपाय थे, और विजित प्रदेश पर अपने शासन को सुदृढ बनाये रखने के लिए इसी परिस्थिति मे कोई अन्य शासक क्या-क्या कार्यवाही कर सकता था। मेरी धारणा यह है कि विजय के बाद, विजेता द्वारा लम्बे समय से शासित राज्य के साथ मिलाया जाने वाला प्रदेश, उसी राज्य का एक ही भाषा-भाषी भाग होता है, अथवा स्थिति इसके विपरीत होती है। अगर स्थिति यही हो तो उन पर नियन्त्रण बनाये रखना बहुत आसान होता है, विशेषकर जब कि विजित प्रदेश स्वतन्त्रता का आदी न हो। इन प्रदेशो पर अपना अधिकार

दृढ़ बनाये रखने के लिए भूतपूर्व शासक का वंशनाश ही काफी होता है। इसके अतिरिक्त यदि जनता की पुरानी जीवन-पद्धतियों से छेड़-छाड़ न की जाय और उसके रीति-रिवाजों को न बदला जाय, तो वह शान्त बनी रहती है। बर्गण्डी, ब्रिटानी, गैस्कनी, और नार्मण्डी के भी मामलों में यही तो हुआ था और ये प्रदेश एक अरसे से फ्रांस के ही साथ चले आ रहे हैं। यद्यपि यहां कुछ भाषागत भेद-भाव हैं, इन प्रदेशों के रीति-रिवाज एक-से हैं और वे मिल-जुलकर आसानी से गुजर कर सकते हैं। यदि शासक नये प्रदेशों पर अपना अधिकार बनाये रखना चाहता है, तो उसे दो बातों का ध्यान रखना होगा एक, पुराने शासक के वंश का नाश होना अनिवार्य है; दूसरे, उसे न तो जनता के रीति-रिवाज बदलने चाहिए और न ही कर व्यवस्था। इस प्रकार कुछ ही समय पाकर नव विजित प्रदेश पुराने राज्य के साथ मिलकर एक हो जायेगा।

लेकिन जब कभी नव विजित प्रदेश की भाषा, रीति रिवाज, पर-पराएं आदि भिन्न होती हैं, तो कठिनाइयां उठ खड़ी होती हैं। इन पर सौभाग्यशाली और तत्पर एवं परिश्रमी शासक ही अपना अधिकार बनाये रख सकता है। इसका सबसे अच्छा और सबसे अधिक प्रभावशाली तरीका तो यही है कि विजेता स्वयं विजित प्रदेश में रहने के लिए जाये। इससे नव विजित प्रदेश पर उसका अधिकार अधिक सुरक्षित, अधिक स्थायी होगा। यूनान में तुर्कों की उपलब्धि यही थी। तमाम उपाय करने के बावजूद यदि तुर्क विजेता वहां पर स्वयं निवास के लिए नहीं जाता, तो यूनान पर अधिकार बनाये रखना असम्भव होता। घटनास्थल पर उपस्थिति के कारण, विपत्ति के बीजों को फूटते हुए देख लेना और तत्काल उनका विनाश करना सम्भव होता है। अनुपस्थित रहने पर विपत्ति का पता तभी चलता है, जबकि वह गम्भीर हो चुकी होती है और उसका निदान सम्भव नहीं रहता। इसके अतिरिक्त, विजेता की निजी उपस्थिति के कारण उसके कारिन्दे और अधिकारी भी विजित प्रदेश को लूट-खसोट नहीं सकते। शासक तक सीधी पहुंच होने के कारण जनता सन्तुष्ट रहती है। यदि जनता उसके अनुकूल वृत्ति वाली है तो उससे और भी प्यार कर सकती है। इसके विपरीत मन स्थिति में शासित उससे

भयभीत भी रहती है । राज्य पर आक्रमण करने के इच्छुक लोग भी शासक की उपस्थिति के कारण सोचने विचारने के लिए विवश होते हैं। इसलिए नवविजित प्रदेश मे बस जाने वाले शासक को अपदस्थ करना कठिनतम कार्य हो जाता है।

एक दूसरा और बेहतर तरीका नव विजित प्रदेश मे दो-एक उपनिवेश (कालोनी) बसा देना है। इनके कारण वह प्रदेश बश मे रह जायेगा। अगर आप उपनिवेश नही बसायेंगे, तो आपको (विजित प्रदेश म) छावनिया बनानी पड़ेंगी, सशस्त्र सैनिक और तोपखाने तैनात करने होंगे। बस्तिया बसाने पर कोई अधिक खच नही होता एव शासक कोई व्यक्तिगत हानि सहन किये बिना उनकी स्थापना और सचालन कर सकता है। वह केवल उन्हीं लोगों को आघात पहुचाता है जिनकी भूमि और मकान लेकर बस्ती के नये निवासियो को देता है और ये लोग अत्यन्त अल्पसख्यक होते हैं और सदैव धन सम्पत्ति हीन एव बिखरे हुए रहने के कारण राज्य को किसी प्रकार की हानि नही पहुचा सकते। अन्य लोगो से कोई छेड छाड नही की जाती। वे इस भय से भी शान्त बने रहते हैं कि नये शासन म धन सम्पत्ति से वचित किये गये लोगो जैसी ही हालत उनकी भी न कर दी जाये। निष्कर्ष यह है कि बस्तिया बसाने मे बहुत कम खर्च आता है और ये अधिक विश्वसनीय भी होती हैं तथा कम हानिकर होती हैं। जैसा कि मैंने कहा है, सम्पत्ति से वचित किये गये लोग निर्धन होते हैं और बिखरे हुए रहते हैं, अतएव आपको वे किसी प्रकार की हानि नही पहुचा सकते। यहा इस बात की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए कि लोगो का या तो पोषण किया जाना चाहिए अथवा दमन क्योंकि मामूली आघात का प्रतिशोध तो वे ले सकते हैं घातक चोट का नही। इसलिए शासक जब कभी किसी को चोट पहुचाये तो इतनी गहरी चोट पहुचाये कि फिर प्रतिशोध का भय न रहे।

फिर भी यदि शासक (विजित प्रदेश मे) बस्तिया बसाने के बदले सैनिकों को ही भेजता है, तो व्यय बहुत अधिक होता है, क्योंकि सारा राजस्व तो प्रतिरक्षात्मक कार्यवाहियों पर खर्च हो जाता है और लाभ हानि मे बदल जाता है। इस प्रकार शासक जनता को कहीं अधिक चोट पहुचाता

है। देश के विभिन्न भागो मे अपनी सेना को तैनात करके वह सभी को दुश्मन बना लेता है और प्रजा के रोष के शिकार सभी लोग होते हैं। जो लोग उसके विरोधी हो जाते हैं, वे उसे हानि पहुचा सकते हैं, क्यो कि पराजित होते हुए भी वे अपने-अपने घरो मे बने रहते हैं। किसी भी प्रकार से देखें, प्रतिरक्षा का यह तरीका उतना ही व्यर्थ है, जितना बस्तियो का बसाना सार्थक।

इसके अतिरिक्त, मेरे बताये हुए आधार पर अपने राज्य से भिन्न प्रकार के प्रदेश में जाने वाले हर शासक को स्वय पास-पडोस की छोटी-छोटी शक्तियो का नेता और रक्षक बन जाना चाहिए एव प्रबलतर शक्तियो को कमजोर बनाने का प्रयास करना चाहिए। उसे ऐसी तमाम सावधानिया बरतनी चाहिए, जिनके कारण उसी जैसा कोई शक्तिशाली विदेशी उस प्रदेश पर आक्रमण न कर सके। प्राय किसी भी आक्रमण-कारी को न्योता देने वाले वे ही लोग होंगे, जो अतीव महत्त्वाकाक्षा अथवा भय के कारण विजेता शासक के शत्रु बन चुके हैं। इस प्रकार से एक बार यूनान मे इतोलियन लोग रोमनो को ले आये थे। यही नही, रोमनो द्वारा विजित हर प्रदेश मे उन्हे न्योता स्थानीय निवासियो ने ही दिया था। होता यह है कि जैसे ही कोई सम्पन्न विदेशी किसी प्रदेश पर आक्रमण करता है, उसे आस-पास की क्षीणतर शक्तिया अपना समर्थन प्रदान करती हैं, क्योकि वे अद्यतन शासक के प्रति ईर्ष्यालु होती हैं। जहा तक इन क्षीणतर शक्तियो का सवाल है, इन्हें अपने पक्ष मे कर लेने मे आक्रान्ता को कोई कठिनाई नही होती। वे स्वेच्छा से उसके द्वारा स्थापित राज्य मे विलय हो जाती हैं। उसे केवल इस बात का ध्यान रखना होता है कि ये क्षीणतर शक्तिया कभी बहुत अधिक शक्ति एव अधिकार से सम्पन्न न हो जायें। जो सशक्त हैं, उन्हें वह इन (क्षीणतर शक्तियो) के समर्थन से कुचल ही सकता है, और हर प्रकार से इस प्रदेश का स्वामी बन सकता है। जो भी शासक इन नुक्तो पर सावधानी से आचरण नही करेगा, वह अपने विजित प्रदेशो को जल्दी ही खो बैठेगा। उन पर अपना शासन बना रहने पर भी, उसे अगणित कठिनाइयो और विरोधो का सामना करना पडेगा।

रोमनो ने जिन प्रदेशो को विजय किया था, वहा वे इन बातों का बाकायदा ध्यान रखते रहे। उन्होंने बस्तिया बसायी। क्षीणतर शक्तियों का दम-खम बढाये बगैर वे उन्हे सन्तुष्ट करते रहे। शक्तिसम्पन्न तत्त्वो का दमन करते रहे, और उन्होने कभी किसी शक्तिसम्पन्न विदेशी को इन प्रदेशो मे सम्मान अर्जित नही करने दिया। यूनान इसका बहुत अच्छा उदाहरण है। यहा पर रोमनो ने इकियनो और इतोलियनो को तुष्ट किया। मकदूनिया के शासन को कुचल दिया, और एन्तियोक्स को उन्होने मार भगाया। तमाम सद्व्यवहार के बावजूद रोमनो ने इकियनो अथवा इतोलियनो को कभी अपने क्षेत्र का विस्तार नही करने दिया। फिलिप ने इन लोगो से दोस्ती गाठने की कोशिश की, मगर रोमनो ने उसका सिर कुचलकर ही यह दोस्ती होने दी उससे पहले नही, और अपनी *तमाम शक्ति के बावजूद एन्तियोकस को यूनान मे कभी किसी प्रकार* का अधिकार नही दिया गया।

इन परिस्थितयो मे रोमनो ने ठीक वही किया, जो कोई भी बुद्धिमान शासक करता। वे वर्तमान कठिनाइयो से ही नही भिड़े, बल्कि भविष्य की सम्भावनाओं को भी उन्होने देखा और उनका अग्रिम निराकरण किया। भावी कठिनाइयो का सही पूर्वानुमान करने से उनका निदान सहज हो जाता है। विपत्तियो के प्रकट होने की प्रतीक्षा करने से उनका उपचार सम्भव नही रहता। रोग निदान से परे जा चुका होता है। राजनीति की स्थिति भी वैसी ही है जैसा कि चिकित्सक लोग शरीर को गलाने वाले अथवा क्षय जैसे रोगो के बारे मे कहते हैं। प्रारम्भ मे उनका पता लगाना मुश्किल होता है। इलाज आसान हो मगर उसका पता पाकर इलाज नही किया गया, तो कुछ समय के बाद उसका पता लगाना आसान हो जाता है, इलाज मुश्किल। राजनीतिक अव्यवस्थाओ का पहले से पता पाकर उनका निराकरण शीघ्र ही हो सकता है (और केवल बहुत अधिक विवेकशील शासक ही इतना दूरदर्शी हो सकता है)। यदि इस अव्यवस्था का पूर्वानुमान नही लगाया गया और उसे इतना बढने दिया गया कि हर कोई उसे देख सके तो उसका निराकरण सम्भव ही नही रहता।

अतएव रोमन शासक आनेवाली विपत्तियो का पहले से ही पता लगाते

रहते थे और उनके निदान के लिए आवश्यक कार्यवाही करते रहते थे। वे युद्ध से बचने के फेर में इन विपत्तियों को निर्बाध बढ़ने नहीं देते थे, क्योंकि वे जानते थे कि युद्ध को टाला नहीं जा सकता, युद्ध का केवल स्थगन किया जा सकता है और इस स्थगन का लाभ दूसरे लोग उठाएंगे। वे फिलिप और एन्तियोकस से इटली में नहीं लड़ना चाहते थे, अतएव उन्होंने यूनान में ही इनके विरुद्ध युद्ध छेड़ने का फैसला कर लिया। उस समय वे युद्ध को टाल भी सकते थे। मगर उन्होंने ऐसा नहीं किया। जो बात आज हम अपनी पीढ़ी के प्रबुद्ध लोगों की जबान से सुनते हैं—कि वर्तमान से जितना लाभ उठा सकते हो, उठा लो, फिर पता नहीं अवसर मिले न मिले! यह प्रलोभन कभी उनके मन में भी नहीं आया। वे लोग तो अपने पराक्रम और दूरदर्शिता का ही अधिकतम लाभ उठाते थे। समय अपने प्रवाह में हर चीज को बहाये लिए जा रहा है—उसके प्रवाह में आपके हिस्से अच्छाई भी आ सकती है और बुराई भी।

आइये, फ्रांस की बात को ही लें। जिन तरीकों की चर्चा मैंने की है, क्या फ्रांस ने भी उनका इस्तेमाल किया? मैं चार्ल्स के बजाए लुई की चर्चा करना चाहूंगा। लुई बहुत समय तक इटली में जमा रहा, इसलिए उसके चरित्र का अध्ययन मैं और निकट से कर सका। आप देखेंगे कि पराये देश में अपने शासन को बनाये रखने के लिए जो कुछ भी किया जाना चाहिए, लुई ने सब कुछ उसके विपरीत किया।

शाह लुई वेनिस वालों की महत्त्वाकांक्षा के घोड़े पर सवार होकर इटली आये थे। वेनिस के शासक लोम्बार्दी का आधा भाग स्वयं हथियाना चाहते थे। मैं शाह लुई की कार्यवाही की निन्दा नहीं करना चाहता। वह इटली में पांव धरने की जगह चाहता था और वहां पर उसका कोई सहायक मित्र नहीं था। इसके विपरीत, शाह चार्ल्स की हरकतों के कारण, लुई के लिए सभी द्वार बन्द थे। अतएव वह जहां जो मिले, उसीको मित्र बनाने के लिए मजबूर था। अगर वह दूसरी गलतियां न करता तो इस मामले में उसकी नीति सफल भी हो गई होती। हुआ यह कि उसके हाथ में लोम्बार्दी के आते ही लुई को वह स्थान मिल गया, जो चार्ल्स ने खो दिया था। जेनोआ का भी पतन हो गया। फ्लारेन्स के शासक उसके मित्र

बन गए। मांविरस ओंव मान्तुआ, फरारा के ड्यूक, बेन्तिवोग्ली, फोर्ली की काउन्तेस, फॅन्जा, पीसारो, रिमिनी, कॅमेरिनो और पियोम्बिनो के नरेश,* लुक्का, पीसा, सिएना आदि के नागरिक, सभी उसकी मैत्री की इच्छा लेकर सामने आए। तब वेनिस के शासकों को यह अहसास हुआ कि उन्होंने जल्दबाजी से काम लिया है। लोम्बार्दी में दो नगरों को पाने के लालच में शाह लुई को उन्होंने तिहाई इटली का शासक बना डाला था!

अब सोचिए कि यदि लुई ने मेरे बताये हुए नियमों का पालन किया होता और अपने इन मित्रों की मैत्री को सभालकर रखा होता तो वह कितनी आसानी से इटली में अपने शासन को बनाए रख सकता था! उसके मित्र बहुसख्या म थे, वे कमजोर और भयभीत भी थे। कुछ चर्च से डरे हुए थे और कुछ वेनिस वालों से, अतएव वे उसका साथ देते रहने के लिए विवश थे और उनके माध्यम से वह अपनी रक्षा उन ताकतों से भी कर सकता था, जो अब भी प्रबल थीं, लेकिन मीलान म पहुचते ही उसने वह काम किया, जो उसे नही करना चाहिए था। उसने पोप अलेग्ज़ान्देर को रोमान्या पर अधिकार कर लेने म सहायता दी। उसे यह भी याद नहीं रहा कि इस काम से उसने अपने आपको कमज़ोर कर लिया है और मित्रों को शत्रु बना लिया है तथा आश्रितो को पराया कर दिया है और चर्च की वर्तमान धार्मिक सत्ता को इतनी अधिक सांसारिक सत्ता का बल देकर, उसे बहुत अधिक शक्तिसम्पन्न कर दिया है। एक गलती करने के बाद वह अन्य गलतिया करने के लिए विवश हो गया। पोप अलेग्ज़ान्देर की महत्वाकांक्षा को भग करने एव उसे तोस्काना का शासन हथियाने से रोकने के लिए, उसे स्वय इटली आना पड़ा। चर्च को प्रबलतर बनाकर और मित्रो की मैत्री खोकर ही उसने चैन नही लिया, बल्कि नेपल्स का राज्य प्राप्त करने के लोभ मे उसने स्पेन के शाह के साथ मिलकर उसे बाट लिया। प्रारम्भ मे जहा वह इटली का एकमात्र शासक था, वहा अब वह एक ऐसे प्रतिद्वन्द्वी को मैदान मे उतार लाया, जिसकी शरण मे उसने

---

* इनके नाम थे, क्रमश /एस्तोरे मं फॅदी गियोवान्नी दि कोल्ते ओ स्फोर्जा, पेन्दोल्फो मालातेस्ता, गियूलियो सीजर दा वेरानो और जेकोपो देप्लो एपियानी।

अपने महत्त्वाकांक्षी और असन्तुष्ट सहायक-मित्र जा सकते थे। वह चाहता तो नेपल्स के शाह को अपने वेतन भोगी के रूप मे तैनात कर सकता था।* इसके विपरीत उसने इस शाह को अपदस्थ करके एक ऐसे व्यक्ति को नियुक्त किया, जिसने समय पाकर स्वय उसी को बाहर खदेड दिया।

अधिक सत्ता हथिया लेने की इच्छा सामान्य एव स्वाभाविक है, यह बात मानी जा सकती है। इस इच्छा के पूरे हो जाने पर कभी किसी की निन्दा नही की जाती, प्रशसा ही होती है लेकिन जब ऐसी इच्छा रखने वाले शासको मे और अधिक पाने की योग्यता नही होती और वे फिर भी हर कीमत पर ऐसा करने की कोशिश करते हैं तो उनकी गलतियो के लिए उनकी निन्दा होनी ही चाहिए। फ्रास मे अगर नेपल्स पर अपनी सेना के बल पर हमला करने की सामर्थ्य थी, तो उसे ऐसा करना चाहिए था। अगर यह सामर्थ्य नही थी, तो उसे नेपल्स का विभाजन नही करना चाहिए था। जहा वेनिस वालो के साथ मिलकर किया गया लोम्बार्दी का विभाजन उचित ठहराया जा सकता है, क्योकि उससे लुई को इटली मे पाव जमाने का अवसर मिला, वहा इस दूसरे विभाजन की निंदा की जानी चाहिए, क्योकि इसकी कोई आवश्यकता नही थी।

इसलिए लुई से ये पाच गलतिया हुई—उसने क्षीणतर शक्तियो को नष्ट कर दिया, इटली मे पहले ही शक्तिसम्पन्न माने जाने वाले कुछ शासकों की शक्ति उसने बढा दी, उस देश मे वह एक प्रबल विदेशी शक्ति को खीच लाया, स्वय वह इटली से दूर बना रहा और उसने वहा कोई बस्तिया नही बसाई। अगर लुई जीवित रहता और एक छठी गलती न करता, तो यह पाच गलतिया भी उसके लिए घातक सिद्ध न होतीं। यह छठी गलती थी—वेनिस वालो को उनके लाभ से वचित करना। अगर उसने चर्च को प्रबलतर नही बनाया होता और स्पेन को इटली मे न्योता न होता, तो उसके लिए वेनिस के शासको को कुचलना आवश्यक भी होता एव उचित भी, लेकिन पहली दो कार्यवाहिया करने के बाद, उसे वेनिस

* नेपल्स के नरेश थे अरागान के फ्रेडेरिगो। उन्होंने 1501 में फ्रांसीसी सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया था।

वालो की बरबादी रोकनी चाहिए थी, क्योंकि शक्तिसम्पन्न बने रहने पर वे लोग अन्य शक्तियो को लोम्बार्दी पर आक्रमण करने से सदैव रोकते रहते। वेनिस वाले विदेशी आक्रमणकारियो का तब तक विरोध करते रहते, जब तक इस आक्रमण से लोम्बार्दी का शासन स्वय उन्ही का नही मिल जाता और कोई भी आक्रमणकारी फ्रांस के हाथो से वेनिस वालो को देने भर के लिए लोम्बार्दी का शासन छीनने का कष्ट न उठाता। नये आक्रमणकारी फ्रांस और वेनिस दोनो की सत्ता को चुनौती देने का साहस भी नही जुटा पाते।

यदि कोई यह कहे कि शाह लुई ने रोमान्या पर पोप अलेग्ज़ान्देर को केवल इसलिए अधिकार कर लेने दिया कि वह स्वय युद्ध से बचना चाहता था, तो मैं इन्ही तर्कों के आधार पर यह कहूगा कि किसी भी शासक को केवल युद्ध से बचने के लिए अपने आयोजन को भग नही होने देना चाहिए, फिर युद्ध कभी भी टलता नही है। वह तो केवल विरोधी के लाभार्थ स्थगित हो जाता है और अगर कोई व्यक्ति शाह लुई द्वारा पोप पर किये गए विश्वास की बात कहे, जिसके बदले मे पोप ने वचन दिया था कि वह रोमान्या के शासन के बदले मे लुई के विवाह सम्बन्ध को भग कर देगा और रुएन का कार्डिनल की उपाधि प्रदान करेगा, तो मेरा जवाब वही होगा, जो मैं आगे चलकर शासको की विश्वसनीयता और उनके वचन-पालन के विषय मे कहने वाला हू। अत शाह लुई के हाथो से लोबार्दी का शासन इसलिए निकल गया कि उन्होने ऐसे किसी भी नियम का पालन नही किया, जिसका पालन दूसरे देशों पर अधिकार करने एव उन पर अपना शासन बनाये रखने के इच्छुक अन्य शासक करते हैं। इसमे अकल्पनीय कुछ भी नही है। यह सब सामान्य है और उचित भी। मैंने इस विषय मे रुएन के साथ नान्तीज मे उस समय बातचीत की थी, जब रोमान्या पर *(पोप अलेग्ज़ान्देर के बेटे सीज़र बोर्गिया)* ड्यूक वैलेन्तिनो का अधिकार था। जब रुएन के कार्डिनल ने मुझसे कहा कि इतालवी लोगो को युद्ध का कोई ज्ञान नही है, तो मैंने उन्हें डपटकर जवाब दिया कि फ्रासीसी लोग राजनीति को नही समझते। अगर वे समझते होते तो चर्च को इतना प्रबल न हो जाने देते। इटली मे घटी घटनाओ के प्रवाह से स्पष्ट है कि फ्रांस ने

चर्च को एवं स्पेन को सशक्त बनाया और इन दोनों शक्तियों ने फ्रांस का सर्वनाश किया। इसीसे हम एक सामान्य सिद्धान्त बना सकते हैं, जो शायद ही कभी गलत सिद्ध होगा—जो भी व्यक्ति अथवा शासक अन्यों के शक्ति-सम्पन्न होने का कारण बनेगा वही अपनी बरबादी का कारण भी बनेगा, क्योंकि यह शक्ति या तो मौलिकता से उद्भूत होती है अथवा बाहुबल से। शक्ति-सम्पन्न हो चुका व्यक्ति इन दोनों को शक की निगाहों से देखता है।

४

सिकन्दर के द्वारा विजित दारा के साम्राज्य मे उसकी मृत्यु के बाद भी उसके उत्तराधिकारियों के विरुद्ध विद्रोह क्यों नहीं किया ?

किसी नव प्राप्त राज्य पर अपना शासन बनाये रखने से सम्बन्धित सभी कठिनाइयो की चर्चा करने के बाद, इस बात पर सचमुच हैरानी होती है कि कुछ ही वर्षों मे एशिया का शासक बन जाने वाले शहशाह सिकन्दर के विरुद्ध अपेक्षित व्यापक विद्रोह क्यो नही हुआ, जबकि उसकी मृत्यु के समय उसकी विजयाभियान अभी पूरा भी नही हुआ था ? इसके विपरीत, उसके उत्तराधिकारी निर्भयतापूर्वक शासन करते रहे। उनके प्रशासन मे जो भी कठिनाइयां खडी हुईं, वे उनकी अपनी महत्त्वाकाक्षाओ और आपसी प्रतिद्वद्विताओं के कारण ही खडी हुईं।

इस प्रश्न के उत्तर मे मुझे यही कहना है कि ज्ञातव्य इतिहास मे नामाकित सभी रियासतो का प्रशासन दो ही तरीको से चलाया गया है—या तो ऐसे राजा द्वारा, जो सभी शासितो को दास समझता है और जिसके मन्त्री उसीकी अनुकम्पा और अनुमति से प्रशासन मे उसकी सहायता करते हैं अथवा किसी ऐसे राजा एव उसके सामन्तो द्वारा, जिनके पद की स्थापना एव प्रतिष्ठा, राजा की अनुकम्पा पर नही, उनकी अपनी पुरानी वश-परम्परा पर आधारित होती है। इस प्रकार के सामन्तो की अपनी-अपनी रियासतें और अपनी-अपनी प्रजा होती है, जो उनके स्वामित्व को मान्यता और उनको स्वाभाविक स्नेह देती है। राजा एव उसके अनुचरो-दासो द्वारा

शासित राज्य मे राजा का प्रभुत्व गहनतर होता है, क्योकि देश-भर मे स्वामि-भक्ति का पात्र और अधिकारी एकमात्र वही माना जाता है। अन्य अधिकारियो अथवा मन्त्रियो की आज्ञा का पालन उनके पद के कारण किया जाता है, लेकिन इनके प्रति जनता को कोई लगाव नही होता।

इन दो भिन्न प्रकार के शासनो के समकालीन उदाहरण तुर्क सम्राट और फ्रास के सम्राट के रूप मे देखे जा सकते हैं। तुर्क साम्राज्य का शासन-सूत्र एक ही व्यक्ति के हाथो मे है, अन्य सभी प्रशासक उसीके अनुचर एव दास हैं। यह एक शासक अपने साम्राज्य को सज्याकियो* (प्रशासनिक इकाइयो) मे बाट देता है और इनके प्रशासन का दायित्व वह अलग-अलग प्रशासको को सौंप देता है और अपनी आवश्यकता के अनुसार इनको बदलता रहता है, लेकिन फ्रांस के सम्राट के चारो ओर लम्बे समय से प्रतिष्ठित सामन्तो की भीड लगी है, जिन्हे अपनी-अपनी रियासतो मे अपनी-अपनी प्रजा से मान्यता एव स्नेह प्राप्त है। इनके अपने-अपने विशेषाधिकार हैं। सम्राट अपने लिए सकट खडा किये बगैर इन विशेषाधिकारो को छीन नही सकता।

इसलिए इन दोनो साम्राज्यो की तुलना करने से ही पता चल जाएगा कि तुर्क साम्राज्य पर अधिकार करना कठिन है, लेकिन एक बार विजय हो जाने के बाद उस पर नियन्त्रण बनाये रखना आसान होगा। दूसरी ओर कई तरह से ऐसा लगेगा कि फ्रांसीसी साम्राज्य को आसानी से हथियाया जा सकता है, लेकिन उसे अपने अधीन बनाये रखने के लिए बहुत कठिनाई का सामना करना पडेगा।

तुर्क साम्राज्य को हथियाने मे पेश आने वाली कठिनाई का कारण यह है कि उस पर विजयाभियान के लिए किसी स्थानीय राजा या शासक के द्वारा आमन्त्रित किये जाने की कोई सम्भावना नही है और सम्राट के निकटस्थ लोगो के विद्रोह के बल पर अपने विजयाभियान की सफलता की भी आशा नही की जा सकती। इसके कारण मैं पहले बता चुका हू। वे सब लोग अपने स्वामी के प्रति स्वामिभक्ति के बन्धन मे बधे हुए अनुचर हैं

* तुर्क प्रदेशों के प्रशासको के लिए सबोधन

और उन्हें प्रलोभन देकर भ्रष्ट करना अपेक्षया कठिन है। उन्हें भ्रष्ट करने के बाद भी उनसे विशेष लाभ नहीं उठाया जा सकता, क्योंकि पहले दिये गए कारणों के अनुसार वे लोग जनता का नेतृत्व नहीं कर सकते इसलिए जो भी व्यक्ति तुर्क साम्राज्य पर, उसे जीतने की इच्छा से, हमला करेगा, उसे समूचा साम्राज्य एक इकाई के रूप में ग्रथित मिलेगा। ऐसी स्थिति में विजयाकांक्षी को शत्रु के घर में फूट फैलाने के बजाय अपने बाहुबल पर ही भरोसा करना होगा, लेकिन एक बार युद्ध के मैदान में तुर्क सम्राट को पराजित करने और उसकी सैन्य शक्ति को पुनर्गठन की तमाम सभावनाओं से परे तक ध्वस्त करने के बाद, उसके परिवार के अतिरिक्त, चिन्ता का कोई कारण बच नहीं रहेगा। इस शाही परिवार को भी समाप्त कर लेने के बाद विजेता के लिए भय की कोई बात ही नहीं रह जाएगी, क्योंकि प्रजा की दृष्टि में अन्यों का कोई महत्त्व ही नहीं होता। जैसे विजय से पूर्व विजेता को उनसे किसी सहायता की आशा नहीं थी, वैसे विजयोपरान्त उसे डरने की कोई जरूरत नहीं रह जाती।

फ्रांस की तरह के शासित राज्यों में स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत होती है। एकाध सामन्त को अपनी ओर मिला लेने से ही उन पर आक्रमण और अधिकार करना आसान हो जाता है। प्रत्येक राज्य में कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं, जो राज्य-विरोधी होते हैं और परिवर्तन के इच्छुक भी। ये तत्त्व उल्लिखित कारणों से आपके लिए राज्य की सीमाओं को खोल सकते हैं और आपके विजयाभियान को आसान बना सकते हैं, लेकिन विजय के बाद जब आप अपने शासन-तन्त्र को बनाये रखने की कोशिश करेंगे, तब आपके ये विजित और सहायक ही अनेकों कठिनाइयां खड़ी कर देंगे। यहां पर आपके लिए पुराने शासक का वंशनाश कर देना ही पर्याप्त नहीं होगा, क्योंकि विद्रोह का झण्डा खड़ा करने वाले सामन्त और दरबारी अब भी मौजूद होंगे और इन्हें न तो आप सन्तुष्ट कर पाएंगे और न ही नष्ट कर सकेंगे। इन लोगों को उपयुक्त अवसर मिलते ही आपके हाथ से यह राज्य निकल जाएगा।

अगर आप दारा की शासन-पद्धति का अध्ययन करें, तो आप पायेंगे कि वह तुर्क सम्राट की शासन-व्यवस्था से बहुत-कुछ मिलती-जुलती थी।

अत सिकन्दर के सामने पहला काम उसे पूरी तरह से कुचलना और उसके राज्य पर अधिकार स्थापित करना था। राज्य को जीत लेने के बाद और दारा के मारे जाने पर, पूर्वचर्चित कारणो से ही राज्यशासन पर सिकन्दर की पकड बडी मजबूत हो गयी। उसके उत्तराधिकारी अगर सगठित होते, तो वे निर्बाध रूप से इस राज्य पर शासन करते रहते। इस राज्य मे सच पूछिये तो उनके द्वारा स्वय भडकाये गए विद्रोहो के अतिरिक्त कभी कोई विद्रोह नही हुआ, लेकिन जहा तक फास के ढग पर शासित प्रदेशो का सवाल है, उनपर इतने निर्बाध रूप से शासन करना सम्भव नही होता। इसी तथ्य से स्पेन, फ्रास और यूनान मे रोमनो के विरुद्ध हुए अनेक विद्रोहो का स्पष्टीकरण मिल जाता है। ये देश अनेक रियासतो मे बटे हुए थे और इसीलिए यहा विद्रोह होते थे। इन रियासतो के शासको को पुराने दिन भूलते नही थे, इसीलिए रोमनो की इन पर अपने नियन्त्रण के विषय मे सदैव शका बनी रहती थी।

काफी समय पाकर जब रोमन शासन सुदृढ और शक्ति सम्पन्न हो उठा और जनता रियासतो को पूरी तरह भूल चुकी थी, तो रोमनो ने अपने कदम और मजबूती से जमा लिए। लेकिन बाद मे जब रोमन विजेता स्वय आपस मे ही लडने लगे, तो उनमे से प्रत्येक को अपने-अपने अधिकार और हैसियत के अनुसार विजित प्रदेश के किसी न किसी भाग से समर्थन मिलने लगा। पुराने सामन्तो और शासको का पूरी तरह से सफाया कर दिए जाने के कारण यह समर्थन रोमन प्रशासको को उनके निजी रूप मे मिलता था। इस बात को यदि ध्यान मे रखा जाए, तो किसी को इस बात पर आश्चर्य नही होगा कि सिकन्दर ने इतनी आसानी से एशिया पर अपना नियन्त्रण बनाये रखा, अथवा पाइरस एव उसी जैसे अन्य विजेताओ को अपने विजित प्रदेशो पर अधिकार बनाये रखने मे इतनी कठिनाइयो का सामना करना पडा। दोनो के बीच का विरोधाभास विजेताओ की योग्यता अथवा सामर्थ्य पर नही, विजित प्रदेशो के प्रशासनिक सगठनो पर निर्भर करता है।

६

अपने बाहुबल और पराक्रम से प्राप्त रियासतें

नितान्त नये शासक और नये संविधान द्वारा शासित रियासतो की चर्चा के दौरान मेरे द्वारा दिये गए आदर्श किस्म के दृष्टान्तो को सुनकर किसी को आश्चर्य नही होना चाहिए। लोग सदैव दूसरो की बनाई लीक पर चलते हैं और अनुकरण द्वारा अपनी समस्याओ का समाधान करते हैं। यद्यपि दूसरो की बनाई लीक का अनुसरण वे नही कर पाते और अपने आदर्श-पुरुषों जैसा पराक्रम भी उनमे नही होता। बुद्धिमान व्यक्ति वही है, जो महान् व्यक्तियो का अनुसरण करे और दक्ष सिद्ध हुए लोगो का अनुकरण भी। ऐसी स्थिति मे यदि उसका अपना पराक्रम उसके आदर्शों के अनुरूप नही होगा, तो कम-से-कम उसमे महानता की गन्ध तो होगी ही। उसे उन कुशल धनुर्धारियो की तरह व्यवहार करना चाहिए, जो निशाना दूर होने पर अपने धनुष की सामर्थ्य को आकते हैं और अपने लक्ष्य से काफी ऊचा निशाना साधते हैं। वे उतनी ऊचाई पर बाण नहीं मारना चाहते, बल्कि ऊचा निशाना साधकर किसी प्रकार से अपने लक्ष्य को पा जाते हैं।

इसीलिए मेरी धारणा है कि नये राज्य मे नवागतुक शासक को अपना शासन बनाए रखने मे पेश आने वाली कठिनाइया उसकी निजी योग्यता अथवा अयोग्यता की समानुपाती होती हैं और इस शासक का सामान्य नागरिक के स्तर से उठकर शासक बन जाना ही या तो उसमे असाधारण योग्यता का प्रतीक होता है अथवा उसके अत्यधिक भाग्यशाली होने का

प्रमाण। इस योग्यता अथवा सौभाग्य से ही कुछ हद तक उनकी मुश्किलें आसान हो जाती हैं। इसके बावजूद कोई व्यक्ति भाग्य पर जितना कम निर्भर करेगा, वह उतना ही प्रबल हो उठेगा। यदि नये शासक के पास और कोई राज्य-सम्पत्ति न हो, तो उसे विवशत: नवविजित प्रदेश में ही रहना पड़ता है और यह एक अच्छी ही बात है।

लेकिन यदि हम उन लोगों की ओर पलटें, जिन्होंने सौभाग्य से नहीं, अपनी योग्यता के बल पर राज्य पाया है, तो हम उनमें मूसा को पायेंगे, राम्युलस, साइरस, थीसियस और इसी किस्म के अन्य शासकों को पायेंगे। यद्यपि मूसा (बाइबिल के मोजेज) को हमें तर्क का विषय नहीं बनाना चाहिए, क्योंकि उसने तो ईश्वरेच्छा का पालन-भर किया, फिर भी हमें उस गरिमा और मर्यादा की तो प्रशंसा करनी ही चाहिए, जिसके कारण वह ईश्वर से संवाद करने के योग्य बन सका।

लेकिन हम साइरस और उसी जैसे उन शासकों की चर्चा करेंगे, जिन्होंने राज्यों को जीता अथवा उनकी स्थापना की। वे सब प्रशंसा के पात्र थे और उनके द्वारा की गई कार्यवाहियाँ एवं स्थापित परम्पराएं जाँच करने पर मूसा द्वारा किए गए कार्यों से कम महत्त्व की नहीं दिखतीं; यद्यपि मूसा को स्वयं ईश्वर जैसा महान् उपदेशक मिला था। तिस पर यदि हम इन शासकों के जीवन एवं गतिविधियों का विश्लेषण करें, तो देखेंगे कि भाग्य से उन्हें अवसर के सिवाय कभी कुछ नहीं मिला। भाग्य ने उन्हें वह कच्ची मिट्टी ही दी थी, जिसे ढालकर उन्होंने रूप और आकार दे दिया। इस अवसर के अभाव में उनका गुण भी मिट गया होता और उस गुण के अभाव में यह अवसर व्यर्थ निकल गया होता।

इस प्रकार दासता के बन्धन से मुक्त होने के इच्छुक इस्राइलियों के लिए मूसा का अनुसरण करने को तैयार रहना जरूरी था और मूसा के लिए भी यह एकदम अनिवार्य था कि वे उसे मिस्र में मिस्रियों की दासता और दमन की चक्की में पिसते हुए मिलें। रोम का शहंशाह और अपने देश का संस्थापक बनने वाले रोम्युलस के लिए भी आल्बा का परित्याग आवश्यक था और उसके जन्म के समय उसका मरण से सामना भी। साइरस को केवल इसी बात की आवश्यकता थी कि फ़ारस के लोग मेदेस्स

के प्रति विद्रोह के लिए प्रस्तुत हो और मेदेरस एक लम्बे समय तक शांति बना रहने के कारण कोमल हृदयवाला और पौरुषहीन हो चुका हो अगर एथेन्सवासी आपस मे इतने बिखरे हुए न होते, तो थीसियस अपना पराक्रम नही दिखा सकता था। इन लोगो को जो अवसर मिले, उनसे इनकी सफलता सम्भव हो सकी और इनके अपने अपवादात्मक पराक्रम ने इन्हे अवसर का लाभ उठाने के योग्य बनाया। परिणामत इनके देशो का नाम ऊचा हुआ और इनके देशवासी समृद्ध हुए।

जो लोग इन्ही महान् शासको जैसे पराक्रम से शासक बनते हैं, उन्हें अपनी रियासतो को पाने मे चाहे कठिनाई होती हो, उन पर शासन बनाए रखना उनके लिए आसान होता है। उनके मार्ग मे रियासतो को पाने के लिए भी जो कठिनाइया आती हैं, उनका आंशिक कारण वे नई परम्पराए और कानून भी होते हैं, जिनको लागू करने के लिए वे, शासन की स्थापना और सुरक्षा की दृष्टि से विवश होते हैं।

इस बात का सदैव ध्यान रखा जाना चाहिए कि किसी राज्य के सविधान को बदलने से ज्यादा कठिन कोई काम नही। इस काम की सफलता सर्वाधिक सदिग्ध होती है और इसी को पूरा करना सबसे खतरनाक भी होता है। नयी परम्पराओ अथवा कानूनो का सस्थापक उन तमाम लोगो को बैरी बना लेता है, जो पुरानी व्यवस्था में अन्तर्गत फले-फूले थे और नयी व्यवस्था मे जिनके फलने-फूलने की सम्भावना होती है, उनका समर्थन बडा क्षीण-सा होता है। इस समर्थन की क्षीणता का कारण कुछ तो उन प्रतिद्वन्द्वियों का भय होता है, जिन्हे वर्तमान कानून का सरक्षण प्राप्त है और कुछ इसलिए कि मानव स्वभावत शक्की-मिजाज होता है। जब तक वह अनुभव की कसौटी पर नई चीजो या परम्राओ का परीक्षण नही कर लेता, तब तक वह उन पर विश्वास नही करता।

इस प्रकार से नयी व्यवस्था के सस्थापक और उसके मित्र, दोनो ही खतरे मे होते हैं, लेकिन इस विषय पर विशद् चर्चा करने के लिए हमे नितान्त आत्मावलम्बी और परावलम्बी, दोनो किस्म की नव व्यवस्थाओ के बीच भेद करना होगा। इस भेद को समझना भी होगा। नयी व्यवस्था की स्थापना के लिए कुछ लोग बल-प्रयोग कर सकते हैं और कुछ लोग

समझाने-बुझाने का ही तरीका अपनाते हैं। दूसरा तरीका अपनाने वाले लोग सदैव कष्ट पाते हैं, क्योकि उन्हें उपलब्ध कुछ नही होता; लेकिन जब ये लोग अपने ही साधन-स्रोतो पर निर्भर करते हैं और अपनी बात बलात् मनवा भी लेते हैं, तो उन्हे कोई खतरा नही रहता। यही कारण है कि आज तक तमाम शस्त्रधारी सुधारक विजेता हुए और अहिंसा के उपासक नष्ट कर दिए गए।

जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हू, जनता होती ही दुर्बल हृदय है। उसे कोई बात समझा देना मुश्किल नही होता, समझाई हुई बात को उसके हृदय मे जमा देना मुश्किल होता है। इसलिए शासक को कुछ ऐसी ही व्यवस्था करनी चाहिए कि यह अविश्वास करने वाले प्रजाजनो को बलात् विश्वास दिला सके। मूसा, साइरस, थीसियस और रोम्युलस यदि नि शस्त्र होते तो कभी भी अपनी बात न मनवा सकते थे। जैसा कि स्वय हमारे युग मे फ्रा जिरोलामो सवोनारोला के साथ हुआ। जब जनता की आस्था उसमे नही रही, तो नयी परम्पराए और नये कानून उसके लिए मुसीबत बन गए। उसके पास आस्थावानो की एकता को बनाए रखने और अविश्वासी जनता को बलात् विश्वास दिलाने का कोई तरीका ही नही रह गया था। ऐसे लोगो को अपनी लक्ष्य-प्राप्ति मे बहुत कठिनाई का सामना करना पडता है, और उनके लिए सबसे खतरनाक वक्त वह होता है, जब वे लोग अपने कदम जमाने के लिए संघर्ष कर रहे होते हैं, लेकिन एक बार जब वे कदम जमा लेते हैं और उन्हें प्रजा का समादर मिलने लगता है और जब वे लोग अपने गुणात्मक प्रतिद्वन्द्वियों का नाश कर चुके होते हैं, तो वे स्थायी तौर पर सत्ता, सुरक्षा, सम्मान और समृद्धि के अधिकारी बन जाते हैं। अब मैं इन दृष्टातो की शृंखला मे एक और अपेक्षाकृत हलका-सा दृष्टात जोडना चाहता हू। यह व्यक्ति भी कुछ हद तक उनसे तुलना मे बराबर रहेगा; लेकिन मैं उसे अपनी ही श्रेणी के नमूने के रूप मे प्रस्तुत करूगा। मैं वस्तुत जेरोने साइराकूजाने की बात कर रहा हू। वह एक सामान्य नागरिक के पद से उठकर सिराक्यूज का शासक बन गया। सौभाग्य ने उसे भी अवसर के सिवाय कुछ नही दिया था। सिराक्यूज के शासको ने ही अपनी विपत्ति के समय उसे अपनी सेनाओ

का नेतृत्व करने के लिए चुना था। यहीं से उसने उनका शासक बनने का भी अधिकार प्राप्त कर लिया। एक सामान्य नागरिक होते हुए भी उसमें ऐसा कौशल था कि उसके जीवनीकार ने लिखा, '"' उसके पास राज्य के अतिरिक्त राजा के सभी गुण मौजूद थे।' यह उद्धरण रोमन इतिहासकार जस्टिन की कृतियों से लिया गया है, मगर सही नहीं है। उसने पुराने सैन्यबल को भंग कर दिया और एक नयी सेना का गठन कर डाला। उसने पुराने समझौते भंग करके नये समझौते किए। अपने ढंग के सैन्य-संगठन एवं मैत्री सम्बन्धों के बल पर वह जो चाहता कर सकता था। इसलिए अपने शासन की स्थापना के लिए उसे बड़ी मेहनत करनी पड़ी, लेकिन उस शासन को बनाए रखने में उसे कोई दिक्कत न हुई।

७

भाग्य से अथवा विदेशी सेना की सहायता से प्राप्त की गयी रियासते

सौभाग्यवश राजा बन जाने वाले सामान्य नागरिको को शासन पाने के लिए तो विशेष श्रम नही करना पडता। मगर राज्य स्थापना के बाद उस पर अपना अधिकार बनाए रखने के लिए उन्हें काफी कष्ट सहना पडता है। वे अपनी यात्रा तो मानो पखो के सहारे उडकर तय कर लेते हैं, लेकिन धरती पर पाव रखते ही उनकी समस्याओं का दौर शुरू हो जाता है। यह हालत उन लोगो की होती है, जो या तो सभी का अनुमोदन-समर्थन खरीदते हुए उच्चतम पद पर पहुचते हैं अथवा किसी की अनुकम्पा से शासन सूत्र पा जाते हैं। यूनान मे कई शासको के साथ यही हुआ। आयनिया और हैलिसपोन्त मे विजेता दारा ने दो क्षत्रप नियुक्त किए, जिससे कि वे इन नगरो का शासन सूत्र चलाते रहे और उसकी कीर्ति का विस्तार करें। यही बात उन शासको के विषय मे भी कही जा सकती है, जो सामान्य नागरिक थे और सैनिको को पथभ्रष्ट करके स्वय सम्राट् बन बैठे।

ऐसे शासक हमेशा उन लोगो की कृपा और सम्पत्ति पर निर्भर रहते हैं, जिन्होने उन्हें इतने ऊचे पद पर बैठाया होता है और यह कृपा एव सम्पत्ति दोनो ही तत्त्व बहुत चपल और अस्थिर होते हैं। ऐसे शासक अपने शासन को न तो बनाए रखना जानते हैं, न उसे बनाए रख सकते हैं। इसका कारण यही है कि यदि वह विशिष्ट प्रतिभा और कौशल से सम्पन्न न हो तो, सामान्य नागरिक मे शासन करने की योग्यता नही होती। यही नही, सामान्य नागरिक के पास अपनी वफादार सेना भी नही होती।

बलात् थोपी गई हर चीज की तरह रातो-रात स्थापित किए गए शासनतन्त्र की जडें गहरी नही होतीं। उसका प्रभाव भी गहरा नही होता।

परिणामत इस प्रकार के शासनतन्त्र विपत्ति का पहला झोंका आते ही नष्ट हो जाते हैं। यदि अकस्मात् शासक बन जाने वाले व्यक्ति में, भाग्य द्वारा अचानक झोली मे डाल दिए गए शासन और समृद्धि की रक्षा करने की कला और तकनीक को रातोरात सीखने की मेधा और कौशल नही है और यदि उसमें अपनी नींव परम्परा पुष्ट शासकों की तरह मजबूत बनाने की योग्यता नही है, तो उसका विनाश अवश्यम्भावी है।

गुण अथवा समृद्धि के बल पर शासक बन बैठने की इन दोनो सभावनाओ के दो उदाहरण मैं अपने अनुभूत इतिहास मे से देना चाहूगा। ये दोनो हैं— स्फोर्जा के फ्रासेस्को और सीजर बोर्गिया। फ्रांसिस्को मीलान का सामान्य नागरिक था, लेकिन उपयुक्त साधनों और अपने महान् गुणों के सहारे मीलान का ड्यूक बन बैठा, जो सत्ता और समृद्धि उसने लम्बे समय तक संघर्ष करके प्राप्त की थी, उसे अपने हाथो में बनाए रखने मे उसे जरा भी कठिनाई नही हुई। दूसरी ओर सामान्यतः ड्यूक वेलेन्तीनो कहलाने वाले सीजर बोर्गिया को अपने पिता की समृद्धि से शासन सूत्र मिला था, और जब पिता के भाग्य का सितारा डूबा, तो यह शासन भी जाता रहा। यद्यपि सीजर बोर्गिया ने दूसरो के बाहुबल और भाग्य के भरोसे जीते गए राज्य में अपनी स्थिति मजबूत बनाने के लिए वे सब तौर-तरीके अपनाए, जो कोई भी बुद्धिमान और सुयोग्य शासक अपनाता, फिर भी उसका ऐसा हाल हुआ।

जसा कि मैं पहले कह चुका हू, असाधारण गुण से सम्पन्न व्यक्ति अपने जीवन और उसकी तमाम सम्भावनाओ को खतरे मे डालकर भी प्राप्त किए गए प्रदेश म अपने शासन की मजबूत नींव डाल सकता है। यदि हम ड्यूक के जीवनक्रम को देखें तो पता चलेगा कि उसने अपने भविष्य के निर्माण के लिए काफी मजबूत नींव बनाई थी और मैं इस मामले मे ड्यूक की उपलब्धियो की चर्चा अनावश्यक नही समझता। किसी नये शासक को उपदेश देने के लिए सीजर की कार्यवाहियो के निष्कर्षों से बढकर सामग्री कहा से मिलेगी? यदि उसके द्वारा की गई स्थापनाए लाभकर सिद्ध नही हुईं, तो यह उसका दोष नही है। यह भाग्य की असाधारण *करनी है, जो उसकी विडम्बना बन गई।*

कुलीन परिवारो को अपनी ओर मिला लिया। तीसरे कॉलेज ऑव कार्डिनल्ज (पादरियो के प्रशिक्षण का केन्द्र और उनकी प्रशासक परिषद्) पर अपना नियन्त्रण बनाये रखने की यथासभव कोशिश की। एव चौथे अलेग्जान्देर की मृत्यु से पहले ही उसने इतनी सत्ता और शक्ति बटोरने का प्रयास किया कि एकाध प्रारम्भिक आक्रमण को अपने ही बलबूते पर सम्हाल सके।

इन चारो मे से अलेग्जान्देर की मृत्यु से पूर्व वह तीन उपाय पूरे कर चुका था। चौथा उपाय भी लगभग पूरा हो चुका था। अपने द्वारा सत्ता से वचित किये गये जितने शासको तक वह पहुच सका, उनको उसने मार डाला। बहुत थोडे-से उसके फैलते हुए जाल से बच निकले। रोम के कुलीन एव सम्मानित नागरिको को भी उसने अपनी ओर मिला लिया था और कॉलेज ऑव कार्डिनल्ज मे उसके ही समर्थको का गुट सबसे बडा था। जहा तक अपनी सत्ता के विस्तार का सवाल है, उसने टस्कॅनी का शासक बनने का सकल्प किया था। पेरुगिया और पियोम्बिनो पर पहले ही उसका शासन था, पीसा भी उसी के सरक्षण मे था। फ्रासीसियो के बारे मे उसे कोई चिन्ता करने की जरूरत नही थी, क्योकि स्पेनिश सेना के हाथो पराजित होकर फ्रास वाले नेपल्स की सत्ता पहले ही खो चुके थे और अब दोनो पक्ष उसकी मैत्री पाने का प्रयास कर रहे थे। वह पीसा पर झपट्टा मारने ही वाला था यदि वह ऐसा कर लेता, तो लुक्का और सिएना भी तुरन्त उसके सामने घुटने टेक देते। इसका कारण था कुछ तो इन रियासतो मे फ्लारेन्स वालो के प्रति व्याप्त डाह का भाव और कुछ भय की स्थिति, फ्लारेन्स वाले इस मामले मे कुछ भी न कर पाते।

जिस वर्ष अलेग्जान्देर की मृत्यु हुई, उस वर्ष तक वह बराबर सफल होता रहा। यदि वह पीसा पर आक्रमण की योजना मे सफल हो जाता तो इतनी अधिक शक्ति और सम्मान का अधिकारी बन जाता कि अपने बल-बूते पर खडा हो गया होता। इसके बाद उसे किसी दूसरे की सैनिक सहायता अथवा सौभाग्य पर निर्भर नही रहना पडता। वह अपने ही कौशल और *बाहुबल के सहारे सत्तारूढ बना रह सकता था*, लेकिन सीजर के तलवार पकडने के पाच साल के अन्दर ही अलेग्जान्देर चल

एव उनका स्नेह और समर्थन जीतने के लिए, यह सिद्ध करने का फैसला किया कि अतीत काल मे जनता पर की गई क्रूरताए उसने नही की थी। ये उसके मत्री के कठोर स्वभाव का सीधा परिणाम थी। इसके लिए सीज़र अवसर की प्रतीक्षा करता रहा। एक दिन प्रात: सीज़ीना के चौक में रीमिरो का शव दो टुकडो मे पडा पाया गया। शव के बगल मे लकडी का एक लट्ठा और खून से सना एक छुरा भी पडा था। इस घटना की भयावहता को देखकर प्रजा बहुत दिनो तक शान्त और स्तब्ध-सी बनी रही।

लेकिन छोडिए, हम इस विकर्षण से पूर्व जहां थे, वही लौट चलें। ड्यूक के हाथो मे काफी सत्ता और शक्ति आ गयी थी और अपने निकटस्थ प्रतिद्वन्द्वियो की शक्ति नष्ट करने एव अपनी सेना के गठन के बाद वह स्वय को अशत सुरक्षित भी महसूस करने लगा था। उसके अस्तित्व को बहुत तेजी से आने वाला कोई खतरा नही था। अपनी सत्ता का विस्तार करने का इच्छुक होते हुए भी उसे फ्रास के मामले मे काफी सावधानी से काम करना था, क्योकि उसे पता था कि शाह लुई उसकी सहायता नही करेगा, क्योकि देर से ही सही उसे अपनी नीतिगत भूलो का पता चल चुका था। अतएव सीज़र ने नये मैत्री सम्बन्धों की खोज शुरू की। जब फ्रास की सेनाए गाएना पर घेरा डाले हुए स्पेनिश सैनिको के विरुद्ध अभियान करने के लिए नेपल्स की ओर बढ रही थी, तो उसने उन्हे टालना शुरू किया। फ्रास के प्रति इस उपेक्षा के पीछे उसका इरादा स्पेनिश शासकों का समर्थन और सहायता पाना था। और अगर अलेग्जान्देर जीवित होता तो ड्यूक को सफलता भी मिल गई होती।

ये तो थी उसके भविष्य की त्वरित योजनाए। उसके परे उसकी चिन्ता का विषय यह था कि पोप के पद का अगला उत्तराधिकारी शायद उसके प्रति इतना मैत्री भाव न रखे और हो सकता है कि अलेग्जान्देर द्वारा दिया गया सब कुछ उससे छीन लेने का प्रयास करे। इस सम्भावना का मुकाबला उसने चार तरह से करने की योजना बनायी जिन शासको को उसने लूटा और बरबाद किया था, उनका वशनाश पहला तरीका था। इससे पोप इन अपदस्थ शासको को उसके विरुद्ध खडा नही कर पाता। दूसरे उसने रोम मे अवस्थित सभी सम्मानित नागरिको और

कुलीन परिवारों को अपनी ओर मिला लिया। तीसरे कॉलेज ऑव कार्डिनल्ज (पादरियो के प्रशिक्षण का केन्द्र और उनकी प्रशासक परिषद्) पर अपना नियन्त्रण बनाये रखने की यथासभव कोशिश की। एव चौथे अलेग्जान्देर की मृत्यु से पहले ही उसने इतनी सत्ता और शक्ति बटोरने का प्रयास किया कि एकाध प्रारम्भिक आक्रमण को अपने ही बलबूते पर सम्हाल सके।

इन चारो मे से अलेग्जान्देर की मृत्यु से पूर्व वह तीन उपाय पूरे कर चुका था। चौथा उपाय भी लगभग पूरा हो चुका था। अपने द्वारा सत्ता से वचित किये गये जितने शासको तक वह पहुच सका, उनको उसने मार डाला। बहुत थोडे-से उसके फैलते हुए जाल से बच निकले। रोम के कुलीन एव सम्मानित नागरिको को भी उसने अपनी ओर मिला लिया था और कॉलेज ऑव कार्डिनल्ज मे उसके ही समर्थको का गुट सबसे बडा था। जहा तक अपनी सत्ता के विस्तार का सवाल है, उसने टस्कैनी का शासक बनने का सकल्प किया था। पेरुगिया और पियोम्बिनो पर पहले ही उसका शासन था, पीसा भी उसी के सरक्षण मे था। फ्रासीसियो के बारे मे उसे कोई चिन्ता करने की जरूरत नही थी, क्योंकि स्पेनिश सेना के हाथो पराजित होकर फ्रास वाले नेपल्स की सत्ता पहले ही खो चुके थे और अब दोनों पक्ष उसकी मैत्री पाने का प्रयास कर रहे थे। वह पीसा पर झपट्टा मारने ही वाला था यदि वह ऐसा कर लेता, तो लुक्का और सिएना भी तुरन्त उसके सामने घुटने टेक देते। इसका कारण था कुछ तो इन रियासतो मे फ्लारेन्स वालों के प्रति व्याप्त डाह का भाव और कुछ भय की स्थिति; फ्लारेन्स वाले इस मामले मे कुछ भी न कर पाते।

जिस वर्ष अलेग्जान्देर की मृत्यु हुई, उस वर्ष तक वह बराबर सफल होता रहा। यदि वह पीसा पर आक्रमण की योजना मे सफल हो जाता तो इतनी अधिक शक्ति और सम्मान का अधिकारी बन जाता कि अपने बल-बूते पर खडा हो गया होता। इसके बाद उसे किसी दूसरे की सैनिक सहायता अथवा सौभाग्य पर निर्भर नही रहना पडता। वह अपने ही कौशल और बाहुबल के सहारे सत्तारूढ बना रह सकता था; लेकिन सीज़र के तलवार पकडने के पाच साल के अन्दर ही अलेग्जान्देर चल

बसा। उसकी मृत्यु के समय ड्यूक की सत्ता रोमाना मे मजबूत हो चुकी थी। मगर बाकी सब कुछ अभी तक हवा मे ही था, जबकि उसके दोनो आर दो शक्ति सम्पन्न शत्रु सेनाए खडी थी। ड्यूक बहुत उद्यमी, प्रबलचित्त और कुशल व्यक्ति था और इस बात को अच्छी तरह जानता था कि लोगो को या तो जीतकर अपनी ओर मिला ले अथवा उनको मार डाले। इतने कम समय मे अपनी सत्ता की जो नीव उसने डाली, वह इतनी मजबूत थी कि यदि ये दोनो शक्तिशाली शत्रु सेनाए उसके सिर पर सवार न होती और उसका स्वास्थ्य ठीक होता, तो वह हर कठिनाई का मुकाबला कर लेता।

उसकी सत्ता की नीव कितनी मजबूत थी, इसका पता कई बातो से लगता है। रोमान्या मे उसकी प्रतीक्षा एक महीने से अधिक की गयी। जब वह मृतप्राय था, तब भी रोम मे उसकी सत्ता को चुनौती देने वाला कोई नही था। बैगलियोनी, वितेल्ली और ओर्सिनी की सेनाए नगर मे घुसने के बाद भी किसी को उसके विरुद्ध विद्रोह के लिए नहीं उकसा सकी। अगर वह किसी मनचाहे व्यक्ति को पोप नही बना सकता था, तो किसी अनचाहे व्यक्ति को पोप बनने से रोक अवश्य सकता था। अलेग्जान्देर की मृत्यु के समय यदि वह स्वय स्वस्थ हुआ होता, तो उसके लिए हर काम आसान था। यही नही, जूलियस द्वितीय के चुनाव के दिन उसने स्वय मुझसे कहा था कि उसने अपने पिता की मृत्यु के बाद होने वाली हर बात को सोच-समझ रखा था। उसे केवल इतना ही पूर्वानुमान नहीं था कि पिता की मृत्यु के समय वह स्वय भी मृत्यु शैया पर पडा हुआ होगा।

ड्यूक की सारी बातें सुनने के बाद, मैं किसी प्रकार से उसकी निन्दा नही कर पाता। इसके विपरीत, मेरी धारणा है कि मैंने, दूसरो की सैनिक सहायता और सौभाग्य के बल पर सत्ता प्राप्त करने वाले लोगो के समक्ष उसका उदाहरण प्रस्तुत करके ठीक ही किया है। वह एक साहसी और महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति था, और उसने जो कुछ किया, उसके सिवाय उसके पास कोई चारा नही था। उसकी योजनाए अलेग्जान्देर की मृत्यु और उसकी अपनी बीमारी के कारण अपूर्ण रह गयी। इसलिए शत्रुओ के विरुद्ध अपनी मोर्चाबन्दी करने, नये मित्र बनाने, षड्यन्त्र अथवा बाहुबल

से विजय प्राप्त करने, प्रजा के मन में अपने प्रति स्नेह और भय उपजाने, अपने सैनिकों से अनुमोदन और सम्मान पाने के इच्छुक नये शासक के समक्ष ड्यूक से बेहतर आदर्श नहीं हो सकता। यदि नया शासक अपने समर्थ और सम्भावित शत्रुओं अथवा प्रतिद्वन्द्वियों को मिटाने, पुरानी परम्पराओं में सुधार करने, कठोर बनने और फिर प्रजा का प्यार पाने, उदार और महान बनने का फैसला करता है, तो उसे ड्यूक के पदचिह्नों का अनुसरण करना होगा। यदि नया शासक अपने द्रोही सैन्य बल को नष्ट करना चाहता है और नयी सेना का गठन करना चाहता है, यदि वह अन्य शासकों अथवा सम्राटों से ऐसे सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है कि या तो वे ससम्मान उसकी सहायता करने के लिए बाध्य हों अथवा उसे हानि पहुंचाने से पहले सोचने-समझने के लिए मजबूर, तो ड्यूक ही की परम्परा उसे निभानी पड़ेगी।

ड्यूक की निन्दा अथवा आलोचना सिर्फ एक मुद्दे पर की जा सकती है और वह है, पोप जूलियस का चुनाव। यहां उसने सही व्यक्ति को नहीं चुना। जैसा कि मैंने पहले कहा था, यदि वह अपनी पसन्द के व्यक्ति को पोप के पद पर बैठा नहीं सकता था, तो कम-से-कम अनचाहे व्यक्ति को उस पद पर बैठने से रोक अवश्य सकता था। उसे किसी भी हालत में ऐसे कार्डिनल का चुनाव पोप-पद के लिए नहीं होने देना चाहिए था, जिसे वह किसी जमाने में आघात पहुंचा चुका था और जो उससे भय-भीत रहता था। लोग भय अथवा घृणा के वश होकर ही आपको आघात पहुंचाते हैं। जिन लोगों को सीजर ने स्वयं चोट पहुंचायी थी, उनमें से सान् पिएरो अद विंक्यूला, कोलोना, सान ज्योर्जियो, अस्कानियो आदि भी थे। रूएन और स्पेनवासियों के अतिरिक्त, अन्य किसी का भी चुनाव किया जाता, तो वे उससे भयभीत रहते। कॉलेज ऑव कार्डिनल्ज में जो स्पेनी सदस्य थे, वे उसी के देशवासी थे और उसके अहसानमन्द भी और रूएन फ्रांस के राजा का समर्थन प्राप्त होने के कारण अपने-आप में काफी शक्तिशाली था। इसलिए ये दोनों पक्ष ड्यूक से भयभीत नहीं थे। ड्यूक का सर्वप्रथम लक्ष्य पोप पद के लिए किसी स्पेनी का ही निर्वाचन होना चाहिए था और उस चेष्टा में विफल होने पर उसे सान् पिएरो अद

विरूपा के स्थान पर, कृपल का चुनाव होने देना चाहिए था। बड़े आदमी नये उपकार अथवा सेवा के सामने पुराने बैर को भूल जाते हैं। यह धारणा गलत है और अपने-आप को भ्रम में डालने की चेष्टा मात्र है। इसलिए ड्यूक का चुनाव गलत रहा और वही अन्ततः उसकी बरबादी का कारण बना।

८

धूर्तता द्वारा सत्ता हथियाने वाले शासक

सौभाग्य और पराक्रम के अतिरिक्त भी सत्ता हथियाने के दो तरीके हैं। यद्यपि इनमे से एक की विशद् चर्चा लोकतन्त्र शीर्षक के अन्तर्गत होनी चाहिए, फिर भी मैं उसे छोड देना मुनासिब नही समझता। इनमे से एक किसी अपराधपूर्ण एव नीचकर्म के द्वारा सत्ता हथिया लेने का तरीका है, और दूसरा सहनागरिको की सहमति से किसी सामान्य नागरिक द्वारा सत्ता का सूत्र सभाल लेने का तरीका।

पहले तरीके की चर्चा करते हुए मैं दो उदाहरण प्रस्तुत करूगा—एक पुरातन इतिहास से और दूसरा आधुनिक से। इस सन्दर्भ मे उचित और अनुचित को लेकर कोई टिप्पणी मैं नही करना चाहता, क्योकि अनुकरण के इच्छुक लोगो के लिए प्रस्तुत उदाहरण स्वय मे स्पष्ट हैं।

सिसिली का आगाथोक्लीज न केवल एक सामान्य नागरिक था, बल्कि हीनतम, निकृष्टतम कोटि का जीवन-यापन कर रहा था। इस अधम स्थिति से उठकर वह सिराक्यूज का शासक बन गया। कुम्हार के बेटे इस आगाथोक्लीज ने अपने कार्यकारी जीवन मे हर स्तरपर अपराधी वृत्ति से काम लिया, लेकिन उसमे, अपने अपराधी कृत्यो के साथ-साथ, शौर्य भी इतना था कि सेना मे काम करते हुए वह एक साधारण सैनिक के पद से उठकर सेनापति के पद पर पहुच गया।

सेनापति के पद पर नियुक्त होते ही उसने शासक बनने का और बिना किसी के प्रति उत्तरदायी हुए उस सबका बलात् स्वामी बनने का सकल्प कर लिया, जो उसे स्वेच्छा से दे दिया गया था। अपनी इस महत्त्वाकाक्षा के सिलसिले मे उसने कार्थेगिनिया के हैमिलकार के साथ एक समझौता-सा कर लिया—हैमिलकार उन दिनो सिसिली मे सैनिक

अभियान कर रहा था।

फिर एक दिन उसने सिराक्यूज की सीनेट और वहां की प्रजा को इकट्ठा कर लिया। ऐसा लगा कि वह लोकतन्त्री पद्धति पर शासित उस राज्य के भविष्य से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण मामलों पर बात-चीत करना चाहता है। इसके बाद एक पूर्व निर्धारित संकेत के अनुसार उसने अपने सिपाहियों से तमाम सीनेटरों और नगर के अमीरों की हत्या करवा दी। इन लोगों के मारे जाने के बाद उसने बिना किसी प्रकार की आन्तरिक बाधा अथवा विरोध का सामना किये नगर पर अपना कब्जा कर लिया।

यद्यपि उस पर कार्थेगिनिया की सेनाओं ने दो बार चढ़ाई की और घेरा भी डाल दिया, मगर उसने न केवल सफलतापूर्वक नगर की रक्षा की, बल्कि अपने कुछ सैनिकों को नगर का बचाव करने के लिए छोड़कर शेष सैनिकों के साथ अफ्रीका पर हमला भी किया और कुछ ही समय में वह घेरा भी उठवा दिया एवं कार्थेगिनिया के सैनिकों की दुर्गति बना दी। वे उसके साथ समझौता करने के लिए बाध्य हो गये। इस समझौते में अफ्रीका उनके पास बचा रहा, जबकि सिसिली आगाथोक्लीज को मिल गया।

अतएव जो कोई भी इस व्यक्ति की कार्यवाहियों का अध्ययन-विश्लेषण करेगा, वह इस बात को समझ जायेगा कि उसके सैनिक जीवन में सामान्य सैनिक के पद से सेनापति बनने तक, भाग्य का कहीं कोई योगदान नहीं है, और जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, उसकी प्रगति के मार्ग में अनेक कठिनाइयां और खतरे मौजूद थे। इस प्रकार से उसने अपना राज्य प्राप्त किया था और उसे बनाये रखने के लिए भी उसे अनेक खतरनाक और दुस्साहसपूर्ण अभियान करने पड़े, फिर भी अपने सह-नागरिकों की हत्या, मित्रद्रोह, निर्ममता और अविवेक को गुण की संज्ञा नहीं दी जा सकती। इस तरह के तौर-तरीकों से कोई भी शासक सत्ता का उपार्जन कर सकता है, कीर्ति का नहीं। यों खतरों का मुकाबला करने और उनसे बच निकलने की आगाथोक्लीज की क्षमता की ओर ध्यान आकर्षित किया जा सकता है। विपत्तियों को सहन करने और उन पर विजय पाने की उसकी साहसिकता की भी दाद दी जा सकती है, और ऐसा लगता है कि

किसी भी महत्त्वपूर्ण सेनापति से कम उसका महत्त्व नही आका जा सकता। इसके बावजूद उसकी पाशविक क्रूरता, अमानवीयता और उसके असख्य अपराधपूर्ण कृत्यो आदि के कारण उसे महान् व्यक्तियो की पक्ति मे खडा होने का सम्मान नहीं दिया जा सकता। जो उसके भाग्य अथवा गुण की उपलब्धि नही थी, उसका श्रेय भी तो इन गुणो को नही दिया जा सकता।

हमारे अपने युग मे, पोप अलेग्जान्देर षष्ठ के कार्यकाल मे फर्मो का ओलिवरोत्तो हुआ है। वर्षों पूर्व बचपन मे ही उसके पिता की मृत्यु हो गई थी और उसका लालन-पालन उसके मामा गियोवानी के फोग्लियानी ने किया था। युवावस्था के प्रारम्भिक दिनो मे उसे पॉलो वितेल्ली के अधीन एक सैनिक की हैसियत से काम करने के लिए भेजा गया, जिससे वह उपयुक्त प्रशिक्षण पाकर ऊचा पद पा सके। जब पॉलो की मृत्यु हो गयी तो ओलिवरोत्तो ने उसके भाई वितेलोज्जो के अधीन रहकर भी काम किया। क्योकि वह मेधावी भी था और साहसी एव धैर्यवान् भी। इसलिए कुछ ही समय मे वह वितेलोज्जो का मुख्य सेनापति हो गया।

लेकिन उसे लगा कि दूसरो के आदेश मानना दासता का प्रतीक है, इसलिए फर्मो के कुछ ऐसे नागरिको की सहायता से, जिन्हें अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की अपेक्षा उसकी पराधीनता अधिक आकर्षक लगती थी और वितेलोज्जो के कुछ अनुयाइयो की सहमति से, उसने फर्मो पर अपना अधिकार जमा लेने का फैसला किया। उसने गियोवानी फोग्लियानी को पत्र लिखा कि वह बहुत दिनो से घर नही गया है। इसलिए अब वह घर आकर उससे (अपने मामा से) मिलना चाहता है। अपने नगर को देखना चाहता है और अपनी सम्पत्ति की जाच करना चाहता है। उसने अपने पत्र मे यह भी लिखा कि उसने आज तक सम्मान के अतिरिक्त अन्य किसी लाभ के लिए काम नही किया और कि वह अपने सह नागरिको को दिखाना चाहता है कि उसने इतना समय व्यर्थ नही गवाया है। इसलिए वह सम्मानपूर्वक लगभग १०० घुडसवार मित्रो और सेवको के साथ नगर-प्रवेश करना चाहता है।

ओलिवरोत्तो ने गियोवानी से अनुरोध किया कि वे उसके लिए ऐसे स्वागत की व्यवस्था करें, जिससे गियोवानी की शान बढे और ओलिव-

रोत्तो का सम्मान भी हो, क्योंकि आखिर वह गियोवानी का पालित पुत्र था। मामा गियोवानी ने अपने भांजे के स्वागत-सत्कार मे कोई कोर कसर न उठा रखी। उसने फर्मों के नागरिको के द्वारा उसका स्वागत-सत्कार करवाया और उसे अपने ही महल मे लाकर रखा।

इस बीच वह अपने जघन्य कृत्यों की गुप्त योजनाओ को कार्यान्वित करता रहा। ओलिवरोत्तो ने एक औपचारिक दावत की व्यवस्था की जिसमे उसने गियोवानी तथा फर्मों के प्रमुख नागरिको को बुलवाया। जब खाना-पीना हो चुका और ऐसी दावतो से सलग्न मनोरजन कार्यक्रम पूरे हो चुके, ओलिवरोत्तो ने बड़ी सावधानी और कुशलता से पोप अलेग्जादेर और उसके बेटे सीज़र की महानता और उनके अभियानो की चर्चा छेडी और कुछेक गम्भीर महत्वपूर्ण विषयो को छूना शुरू किया।

जवाब मे जब गियोवानी तथा अन्य लोगो ने भी इन गम्भीर विषयो पर बहस शुरू कर दी, तो वह अकस्मात् खडा हो गया और कहने लगा कि इन मुद्दो पर किसी सुरक्षित स्थान पर, गोपन रूप से बातचीत होनी चाहिए और इतना कहकर वह एक अन्य कमरे मे चला गया। गियोवानी एव उसके प्रमुख प्रजाजन भी उसी के पीछे कमरे मे चले गए। जैसे ही ये लोग अपने-अपने स्थानो पर बैठे, गुप्त जगहो मे छिपे हुए सैनिक उन पर टूट पड़े और गियोवानी तथा अन्य प्रजाजनो की हत्या कर दी गयी। इस हत्याकाड के बाद ओलिवरोत्तो अपने घोडे पर सवार हुआ और नगर का दौरा करता हुआ शासक-परिषद् के मुख्यालय तक जा पहुचा। इस मुख्यालय पर उसने घेरा डाल दिया। पार्षदो को भयभीत करके उसने उन्हे एक ऐसी सरकार की स्थापना के लिए बाध्य किया, जिसका राजा वह स्वय था। जिन जिन लोगो से उसे यह आशका थी कि वे उसके शासन का विरोध करेंगे और उसे आघात पहुचाने की चेष्टा करेंगे, उन्हे उसने मौत के घाट उतार दिया एव नयी नागरिक एव सैनिक परम्पराओ तथा सस्थाओ की स्थापना करके अपनी स्थिति को मजबूत बनाने मे जुट गया।

इस प्रकार जिस साल उसने रियासत पर अधिकार किया, उस साल न सिर्फ स्वय को फर्मों नगर मे जमा लिया, बल्कि पडोसी राज्यो के मुका-

बले मे अपने-आप को अभेद्य भी बना लिया। यदि सीजर बोर्गिया के धोखे मे वह न आ जाता, तो उसका भी पतन उतना ही कठिन होता, जितना आगाथोक्लीज का पतन था। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, सीजर ने ओर्सिनी और वितेल्ली को सिनिगौग्लिया मे फसा लिया था। ओलिवरोत्तो भी यही फसा हुआ था। पितृघात करने के एक वर्ष के भीतर ही उसका भी गला वितेलोज्जो के साथ ही घोट दिया गया। ओलिवरोत्तो का पराक्रम एव अपराधपूर्ण वृत्तिया वितेलोज्जो की ही देन थी।

किसी-किसी व्यक्ति को इस बात पर आश्चर्य भी हो सकता है कि आखिर आगाथोक्लीज और उसी जैसे अन्य शासक अपनी असख्य क्रूरताओ, मित्र अथवा पितृ द्रोही कृत्यो के बावजूद अपने देश मे कैसे सुरक्षित रह सके और कैसे विदेशी शत्रुओ को भी थामे रह सके ! आगाथोक्लीज के विरुद्ध उसके देशवासियो ने कभी कोई षड्यन्त्र नही किया। इसके विपरीत अन्य अनेक शासक अपनी क्रूरताओ के कारण प्रजा की घृणा के ऐसे पात्र बन गए कि शान्ति-काल मे भी अपने शासन को बनाये रखना उनके लिए कठिन हो गया, युद्धकाल की अनिश्चयता की तो बात ही दूसरी थी।

मेरी धारणा यह है कि क्रूरता का भी सही और गलत प्रयोग किये जाने की बात उठायी जा सकती है। यदि किसी बुरी बात की चर्चा इस स्तर पर क्षम्य हो, तो हम कह सकते हैं कि यदि एक बार की क्रूरता से समस्या का स्थायी समाधान होता हो और शासक की प्राण रक्षा उससे होती हो और उसके बाद निरन्तर क्रूरता का आश्रय न लेकर शासक जन कल्याण की ओर उन्मुख हो जाए तो हम कह सकते हैं कि उसने क्रूरता का सही इस्तेमाल किया है। क्रूरता के दुरुपयोग की स्थिति वह है जिसमे प्रारम्भ मे उसका इस्तेमाल कभी-कभार ही किया जाता है और समय गुजरने के साथ-साथ वह घटने अथवा बन्द हो जाने की बजाय बढती ही जाती है।

जो शासक दैवी और मानवी सहायता से पहले तरीके का इस्तेमाल करते हैं, वे आगाथोक्लीज की तरह अपनी स्थिति को सुदृढ करने का कोई न कोई उपाय ढूढ लेते हैं। दूसरे तरीके का इस्तेमाल करने वाले लोग शायद सत्तारूढ़ भी नहीं रह सकते। इसलिए इस बात पर ध्यान दिया

जाना चाहिए कि नये शासक को किसी राज्य पर अधिकार करते समय यह फैसला कर लेना चाहिए कि उसे किस-किस को कितना गहरा आघात पहुचाना होगा। उसे एक ही बार मे ये आघात पहुचाकर किस्सा खत्म करना चाहिए। निरन्तर इन चोटो को दुहराना नही चाहिए। इस प्रकार वह अपने शासितो के मन से चिन्ता और अनिश्चय को दूर कर सकेगा और जब चाहेगा, प्रजाजनो को, कुछ लाभ पहुचाकर, अपनी ओर मिला सकेगा।

जो भी शासक दब्बूपन के कारण अथवा गलत मन्त्रणा से इसके विपरीत व्यवहार करेगा, उसे विवश होकर सदैव तलवार हाथ मे थामे रहना पड़ेगा और वह निरन्तर नित्य नयी हिंसा से पीड़ित और आत्मरक्षा के विषय मे सदैव चिन्तित, अपने प्रजाजनो पर कभी भी विश्वास नही कर सकेगा। जो भी हिंसा आवश्यक हो उसे एक ही बार मे सम्पन्न करके उसका अध्याय समाप्त कर देना चाहिए। तभी प्रजा उसे भूल पाएगी और नये शासक के प्रति कम रुष्ट होगी। इसके बाद क्रमश धीरे-धीरे प्रजाजनो को सम्मान और उपहार दिये जाने चाहिए। विस्तृत हिंसा के मुकाबले मे इन उपहारों का 'स्वाद' जनता को बेहतर लगेगा।

सबसे बढकर शासक का व्यवहार अपने शासितो के प्रति ऐसा होना चाहिए, जिससे अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थिति मे उस व्यवहार को बदलना न पड़े। वरना होता यह है कि विपत्ति की घड़ी में दमन की आवश्यकता होने पर भी दमन करने मे विलम्ब हो जाता है और शासितो पर किए उपकारो के पीछे जनता को शासक की विवशता नजर आती है अतएव शासित उनके लिए किसी भी प्रकार से आभारी नही होते।

६

असैनिक राज्य

अब हम दूसरी ओर पलटते हैं, जहां एक सामान्य नागरिक किसी अपराधपूर्ण कृत्य अथवा साहसपूर्ण सैनिक अभियान के बल पर नहीं, बल्कि अपने सह नागरिकों की अनुकम्पा से अपने देश का शासक बन जाता है। इसे हम सर्वधानिक राज्य कह सकते हैं, जिसका शासक बनने के लिए व्यक्ति को न तो केवल पराक्रम की आवश्यकता होती है और न ही भाग्य-वैभव की, बल्कि एक विशिष्ट कोटि का चातुर्य चाहिए।

मेरी धारणा है कि इस पद्धति के अन्तर्गत कोई व्यक्ति प्रजाजनों अथवा सामन्तों की अनुकम्पा से शासक बन जाता है। प्रजाजन और सामन्त हर नगर में होते हैं और सभी जगह लोग यह चाहते हैं कि सामन्तगण उन पर शासन और उनका दमन न कर सकें, जबकि सामन्त लोग प्रजाजनों पर शासन और उनका दमन करने के लिए कटिबद्ध रहते हैं। इन दोनों परस्पर विरोधी महत्त्वाकांक्षाओं का इन तीन में से कोई एक परिणाम हो सकता है—राज्य किसी शासक की निजी सम्पत्ति बन सकता है, स्वतन्त्र नगर राज्य की स्थापना हो सकती है अथवा अराजकता फैल सकती है।

किसी रियासत की संरचना कभी प्रजाजनों द्वारा होती है और कभी सामन्तों द्वारा। दोनों में से जिस पक्ष को अवसर मिल जाए, वही अपनी कर गुजरता है। होता यह है कि जब कभी सामन्तों को यह महसूस होता है कि प्रजाजनों की प्रबलता उनके लिए असह्य होती जा रही है, तो वे अपनी ही मण्डली में से किसी एक का रुतबा बढ़ाना शुरू करते हैं और उसकी आड़ में अपने स्वार्थों की सिद्धि के लिए उसे शासक बना देते हैं।

इसी प्रकार जब सामन्तों का प्रभाव प्रजाजनों के लिए असह्य हो जाता

है, तो वे अपनी भीड में से किसी एक को उठाकर शासक बना देते हैं, जिससे कि उसके अधिकार की छत्र-छाया में रहकर अपनी रक्षा कर सकें।

प्रजाजनों के अनुमोदन से शासक बनने वाले व्यक्ति की अपेक्षा सामन्तों की सहायता से शासक बनने वाले व्यक्ति को अपनी सत्ता बनाए रखने में बहुत ज्यादा कठिनाई होती है। शासक की हैसियत से वह स्वयं को ऐसे अनेक लोगों से घिरा हुआ पाता है, जो स्वयं को उसका समकक्ष समझते हैं और इसलिए वह उनको अपनी इच्छानुसार निर्देश नहीं दे सकता। इसके विपरीत प्रजाजनों के अनुमोदन से शासक बनने वाला व्यक्ति भीड में अकेला खड़ा होता है और उसके आसपास के प्रायः सभी लोग आदेश लेने और उसे मानने के लिए प्रस्तुत होते हैं। इसके अपवाद स्वरूप इक्का दुक्का व्यक्ति ही होते हैं।

इसके अतिरिक्त दूसरों के हितों की हत्या किए बगैर ईमानदारी से सामन्तों को सन्तुष्ट करना असम्भव होता है; लेकिन प्रजाजनों को ईमानदारी से सन्तुष्ट किया जा सकता है। प्रजाजन, सामन्तों की अपेक्षा, अपने इरादों और आकांक्षाओं में कहीं ज्यादा ईमानदार होते हैं, क्योंकि सामन्त प्रजा का दमन करना चाहते हैं, जबकि प्रजा की आकांक्षा इस दमन से केवल बचने की होती है। यही नहीं, कोई भी शासक प्रजा के आक्रोश के विरुद्ध कभी अपनी रक्षा नहीं कर सकता, क्योंकि प्रजाजन असंख्य होते हैं। इसके विपरीत सामन्तों के मुकाबले में वह अपनी किलेबन्दी कर सकता है, क्योंकि वे अल्पसंख्यक होते हैं।

प्रजाजनों के नाराज होने पर अधिक से अधिक यही हो सकता है कि वे शासक का परित्याग कर दें, लेकिन यदि सामन्तगण बिगड़ उठें, तो वे शासक का परित्याग ही नहीं करते, बल्कि सक्रिय रूप से उसका विरोध भी करते हैं। सामन्त अधिक दूरदर्शी होते हैं और कहीं अधिक चतुर भी। वे लोग सदैव समय रहते ही अपने हितों की रक्षा के लिए कार्यवाही कर लेते हैं और उसी का पक्ष लेते हैं, जिसके जीतने की उन्हें आशा होती है।

फिर शासक को सदैव उन्हीं प्रजाजनों पर शासन करना होगा, जबकि सामन्तों के बगैर भी उसका काम बखूबी चल सकता है, क्योंकि वह उन्हें जब चाहे बना सकता है और जब चाहे अपदस्थ कर सकता है और इच्छा-

नुसार उनकी पदोन्नति अथवा पदावनति भी कर सकता है।

विवाद को और भी स्पष्ट करने के लिए मैं यह कहना चाहता हूं कि सामन्तो के विषय मे दो बातें याद रखी जानी चाहिए या तो वे पूर्णतया आपक भाग्य पर निर्भर करने लगें अथवा इसके विपरीत अपने ही भाग्य पर निर्भर करते रहें। आप पर निर्भर करने वाले सामन्त यदि वे लोभी न हो तो सम्मान और स्नेह के पात्र होते हैं। जो सामन्त आपके प्रभाव और ऐश्वर्य से परे, आत्म निर्भर बने रहते हैं, वे ऐसा दो कारणो से करते हैं, एक तो यह कि वे स्वभाव से ही कायर और सकीर्ण हृदय वाले हो, यदि ऐसा है तो आपको उनका लाभ उठाना चाहिए। विशेषकर उनका जो समझदार हैं और अर्थपूर्ण सम्मति दे सकते हैं, क्योकि आपकी सफलता के दौर म वे आपका सम्मान करेंगे और आपत्ति काल मे आपको उनसे किसी प्रकार का भय अथवा आशका नही होगी। दूसरी ओर यदि वे सामन्त जान-बूझकर और अपनी महत्त्वाकाक्षा के वश मे होकर आपके प्रभाव से मुक्त रहते हैं, तो यह स्पष्ट है कि वे आपकी अपेक्षा अपने हितो के प्रति अधिक सजग हैं। इस प्रकार के सामन्तो के मुकाबले के लिए शासक को प्रस्तुत रहना चाहिए। उनको उन्हें अपना घोषित शत्रु ही समझना चाहिए, क्याकि आपत्ति काल मे वे लोग सदैव उनकी बरबादी मे सहायक होंगे।

प्रजाजनो द्वारा शासक के पद पर बैठाए गए व्यक्ति को उनकी मैत्री के लिए प्रयास करना चाहिए और यह काम मुश्किल नही होता, क्योकि प्रजा केवल शासकीय दमन चक्र स मुक्त रहना चाहती है, लेकिन जा व्यक्ति जनता की इच्छा के विरुद्ध और सामन्तों की सहायता से शासक बनता है उसे सबसे पहले प्रजा का अनुमोदन प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। यदि वह प्रजा को (सामन्तो के शोषण और दमन के विरुद्ध) सुरक्षा का आश्वासन दे सके, तो यह काम काफी आसान है। इससे अनिष्ट की आशका नही रहती। वह उपकार करने लगे, तो लोग उसके प्रति और भी अधिक कृतज्ञता अनुभव करते हैं। अत प्रजा क्षण भर में अपने चुने हुए शासक से भी अधिक इस शासक के अनुकूल हो उठती है। प्रजाजनों को प्रसन्न करने के कई तरीके हो सकते हैं। परिस्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न तरीके अपनाए जा सकते हैं, इसलिए कोई जड बन्धन

अथवा नियम नही बताए जा सकते और मैं उनकी यहा चर्चा भी नही करूगा। मैं निष्कर्ष रूप मे इतना ही कहना चाहूगा कि शासक के लिए प्रजा को मित्र बनाए रखना जरूरी होता है, वर्ना आपत्तिकाल मे उसके पास कोई चारा नही रह जाएगा।

स्पार्टा का शासक पूरे यूनान का और रोम की विजयी सेना का मुकाबला कर सका और उनके मुकाबले मे अपनी एव अपने राज्य की रक्षा कर सका। इसके लिए उसे केवल यही करना पडा कि खतरे के समय उसने अपने कुछेक शासितो के विरुद्ध कार्यवाही की। यदि जनता उसके विरुद्ध होती, तो यह सक्षिप्त-सी कार्यवाही काफी न होती। 'जनता की नीव पर (शासन का) महल बनाने वाले दलदल मे महल खडे कर रहे है, जैसे पुरातन तर्क देकर किसी को भी मेरी इस धारणा का खण्डन नही करना चाहिए।

यदि कोई सामान्य नागरिक अपनी सत्ता का आधार जनता को बना लेता है और यह बात सदा के लिए सत्य मान लेता है कि जब भी उस पर शत्रु-पक्ष अथवा अपने शासनाधिकारियो की ओर से कोई विपत्ति आ पडेगी तो जनता उसे बचा लेगी, तब यह बात सही हो सकती है। (इस मामले मे वह अक्सर देखेगा कि उसकी धारणा गलत थी रोम मे ग्राच्ची और फ्लारेंस मे ज्योर्जियो स्काली का भी तो यही हस्र हुआ था।) लेकिन यदि कोई ऐसा शासक अपनी सत्ता का आधार जनता को बनाता है जो नेतृत्व कर सकता है और साहसी है, जो आपत्ति काल मे घबराता नही है, जो सावधानी बरतने से नही चूकता और जो अपने निजी गुणो और अपने द्वारा स्थापित परम्पराओ के बल पर लोगो की वफादारी जीत सकता है, तो जनता उसे कभी लज्जित या पराजित नही होने देगी, ऐसा शासक अपनी सत्ता को सदैव सुरक्षित पाएगा।

जब कभी सीमित शासकीय सत्ता के दायरे से निकलकर कोई राज्य निरकुशता के दायरे मे जाने लगता है, तो राज्यो मे, रियासतो म प्राय सकट खडा हो जाता है। निरकुशता की दिशा मे कदम उठाने वाले शासक या तो सीधे शासन करते हैं अथवा अपने शासनाधिकारियो के माध्यम से। शासनाधिकारियो के माध्यम से शासन करने वाले शासको की स्थिति

कमज़ोर एव अधिक खतरनाक होती है, क्योंकि वे पूर्णतया उन नागरिको की इच्छा पर आश्रित होते हैं, जो अधिकारी पद पर प्रतिष्ठित हैं और ये शासनाधिकारी, विशेषकर विपत्ति काल मे, बडी आसानी से, कभी उनके विरुद्ध सार्थक कार्यवाही करके और कभी उनके आदेशो का उल्लघन करके, उनको अपदस्थ कर सकते हैं। जब विपत्ति की घडी आती है, तो शासक के पास निरकुश सत्ता हथियाने का कोई समय नही होता, क्योकि शासनाधिकारियो से आदेश पाने के अभ्यस्त हो चुके शासित जन सकट काल मे सीधे शासक का आदेश नही मानेंगे। गडबडी के समय शासक को विश्वास पात्र व्यक्ति ढूढे भी नही मिलेंगे। इसलिए इस प्रकार का शासक *अपने शान्ति काल के अनुभवो पर ही निर्भर रहकर जनता को वाछित* प्रकार का शासन नहीं प्रदान कर सकता। शान्ति काल में हर आदमी उसके इशारो पर नाचता है, हर आदमी वायदे करता है और जब तक मौत दूर होती है तब तक सभी लोग मरने के लिए तैयार रहते हैं। लेकिन सकट की बेला में जब राज्य अपने नागरिको की बलि मागता है, तो कोई नजर नहीं आता। वफादारी का यह इम्तहान बडा खतरनाक होता है, क्योकि यह इम्तहान केवल एक ही बार लिया जा सकता है। इसलिए बुद्धिमान शासक को सदैव ऐसे उपाय करते रहना चाहिए, जिससे उसके नागरिक सदैव और सभी परिस्थितियो मे उस पर और उसके अधिकार पर निर्भर रहें, ऐसी हालत मे वे हमेशा उसके प्रति वफादार रहेगे।

१०

किसी राज्य की शक्ति का अनुमान कैसे हो ?

इस प्रकार की रियासतो या राज्यों की विशेषताओं की जाच करते समय हमे एक और बात का ध्यान रखना चाहिए और वह यह कि किसी शासक की शक्ति क्या इतनी है कि वह आवश्यकता पड़ने पर एकाकी आत्मनिर्भर होकर, सत्तारूढ बना रह सके ? अथवा क्या उसे सदैव किसी दूसरे की सहायता और सरक्षण की आवश्यकता पड़ेगी ? इस मुद्दे को और अधिक स्पष्ट करने के लिए मेरा कहना यह है कि मेरे खयाल से वही शासक एकाकी और आत्मनिर्भर बने रह सकते हैं, जिनके पास आक्रमणकारी शत्रु की सेना के मुकाबले के लिए बराबर की सेना भरती करने लायक जनशक्ति अथवा धन होता है। इसी प्रकार से उन शासको को सदैव दूसरो का सरक्षण प्राप्त करना चाहिए, जो शत्रु के मुकाबले मे अकेले मैदान मे नही डट सकते और पीछे हटकर अपने किले की दीवारों की आड में रहकर आत्मरक्षा के लिए विवश हो जाते हैं।

मैं पहले मामले पर पहले ही चर्चा कर चुका हू और बाद मे भी इस विषय मे मुझे जो कुछ सूझेगा मैं वही कहूगा। जहा तक दूसरे मामले का सवाल है, इतना ही कहा जा सकता है कि ऐसे शासको को आसपास के प्रदेशों अथवा राज्यों की चिन्ता न करके अपने-अपने नगरो की किलेबन्दी कर लेनी चाहिए। यदि कोई शासक अपने नगर की किलेबन्दी भली भाति कर लेता है और मेरे पूर्व कथनानुसार अपने प्रशासन की व्यवस्था कर लेता है, तो शत्रु उस पर हमला करते समय बहुत सावधान होगा। जिस काम मे असफलता की सम्भावनाएं स्पष्ट हो, उस काम को लोग हाथ डालना

पसन्द नही करते और स्पष्ट है कि किसी जनप्रिय शासक द्वारा सुदृढ किए गए किलेबन्द नगर पर हमला करना आसान काम नही होता।

जर्मन नगर असीमित स्वतन्त्रता का उपभोग करते हैं। कुछ सीमित प्रदेश पर ही उनका अधिकार होता है और वे सम्राट की आज्ञा का पालन तभी करते हैं, जब वे ऐसा करना चाहते हैं। ये नगर-राज्य न सम्राट से डरते हैं और न ही किसी पडोसी शक्ति से, क्योकि इन नगरो की किले-बन्दी इस प्रकार से कर ली गई है कि वहा के नागरिक जानते हैं कि उनको ध्वस्त करने के लिए किया गया सैनिक अभियान काफी लम्बा चलेगा। ऐसा इसलिए है कि इन तमाम नगरो के चारो ओर बडी ऊची-ऊची दीवारें और अच्छी-अच्छी खाइया बनाई गई हैं। उनके पास पर्याप्त तोप-खाना है और वहा भोजन, पेय जल और ईंधन का इतना भण्डार सदैव तैयार रखा जाता है कि साल-भर तक सारी प्रजा का काम चल सके।

इसके अतिरिक्त हर जर्मन नगर मे सार्वजनिक हानि उठाए बगैर जब सामान्य के लिए भोजन-वस्त्र की व्यवस्था करते समय एक वर्ष के लिए ऐसे काम-धन्धो का भी जाल बुन लिया जाता है, जिनसे सामान्य नागरिक को आजीविका का साधन मिल जाता है एव नगर के दैनन्दिन जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति उस काम से होती रहती है। यहा सैनिक अभ्यास को सदैव सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है और इसकी व्यवस्था कई एक कानूनो के अन्तर्गत कई एक सस्थाओ के द्वारा की जाती है।

इसलिए भली भाति सुरक्षित किए गए किसी नगर के शासक पर यदि प्रजा उससे घृणा नही करती है, तो हमला नही किया जा सकता, फिर भी यदि कोई हमला कर ही बैठे तो उसे शीघ्र ही तिरस्कृत एव अपमानित होकर अपना घेरा उठा लेना पडेगा, क्योकि कोई भी आक्रमणकारी अपनी सेना को लिए हुए साल-भर तक शिविर डाले पडा नही रह सकता। घटनाक्रम इतना चचल होता है कि साल-भर तक निर्विघ्न घेरा नहीं डाला जा सकता।

यह आपत्ति सहज ही उठाई जा सकती है कि यदि लोगो का सामान किले की दीवारो के बाहर पडा हो और शत्रु उसे आग लगा रहा हो तो शायद लोग भीतर बैठे नही रह सकेंगे एव घेरे की दीर्घकालिकता और

उनका सम्पत्ति प्रेम उन्हे शासक के प्रति अपना दायित्व भूल जाने के लिए बाध्य कर देगा।

इस आपत्ति के प्रति मेरा जवाब यह है कि कोई भी दुस्साहसी और शक्तिसम्पन्न शासक इस प्रकार की कठिनाइयो पर विजय पा सकता है। वह कभी जनता को यह आशा बधा सकता है कि उनके द्वारा सहे जा रहे कष्ट बहुत दिनो तक नहीं रहगे। और कभी उन्हे शत्रु की क्रूरता का भय दिखला सकता है। वह बहुत मुहफट किस्म के लोगो के विरुद्ध प्रभावकारी कार्यवाही भी कर सकता है। इसके अतिरिक्त शत्रु जब भी आएगा वह ग्रामीण क्षेत्रो को लूटता और आगजनी करके जलाता हुआ ही आएगा और वह यह काम तब करेगा, जब इस शासक के प्रजाजन नगर की रक्षा के लिए उत्साह से भरे हुए होंगे। इसलिए शासक के लिए चिन्ता का कारण और भी कम हो जाता है क्योकि इस उत्साह के मरते-मरते धन-सम्पत्ति की हानि हो चुकी होगी और हो चुका नुकसान ला इलाज होगा।

इसलिए प्रजाजन शासक के और भी निकट आ जायेंगे, क्योंकि नगर की रक्षा के दौर मे घर-बार जल जाने और खेती बाडी उजड जाने के बाद शासको और शासितो के बीच परस्पर उपकार और सौहार्द्र का बन्धन और भी गहरा हो जायेगा। मानव का स्वभाव ही ऐसा है कि वह किसी को लाभ पहुचाकर भी उतना ही उपकृत अनुभव करता है, जितना किसी से लाभ उठाकर। इसलिए इन सब बातो को ध्यान मे रखते हुए बुद्धिमान शासक के लिए, शत्रु के घेरे के दौरान, अपने प्रजाजनो के उत्साह और स्वामि भक्ति को तब तक प्रेरित किये रखना असम्भव नही होना चाहिए, जब तक कि उसके पास रसद के भण्डार और प्रतिरक्षा के साधन हैं।

११

धर्मगुरुओं की रियासतें

अब धर्मगुरुओ द्वारा शासित राज्यो की रियासतो की चर्चा बच जाती है, और यहा पर शासक के समक्ष जो भी कठिनाइया आती हैं, वे शासक के सत्तारूढ़ होने से पहले ही आती हैं, क्योकि इस प्रकार की रियासतो को जीता तो पराक्रम और भाग्य के बल पर जाता है, लेकिन उनको अपने अधीन बनाये रखने के लिए इनमे से किसी भी गुण की आवश्यकता नही पडती।

वस्तुतः इन पर धार्मिक परम्पराओ के बल पर शासन किया जाता है और ये परम्पराए भी ऐसी प्रबल होती हैं कि शासक जैसे चाहे रहे, जो जी चाहे करे, वे ही उसके राज्य शासन की रक्षा करती हैं। धर्म-गुरु ही ऐसे शासक होते हैं, जो राज्य तो करते हैं, मगर जिन्हें राज्य की प्रतिरक्षा नही करनी पड़ती, जिनके पास प्रजा होती है, मगर वे उस पर शासन नही करते और क्योंकि उन्हें अपने राज्यो की प्रतिरक्षा नही करनी पडती, अतएव वे वहा से हटाये भी नही जा सकते और उनकी प्रजा पर, क्योकि शासन करने वाला कोई नही होता, अतएव वे उसके विषय मे निश्चिन्त भी रहते हैं, और वे अपने शासक को अपदस्थ करके न कभी किसी अन्य को गद्दी पर बैठा सकते हैं, और न ही इसकी आशा करते हैं। इसलिए यही कुछ ऐसे राज्य हैं, जो सचमुच सुरक्षित भी हैं और भरे-पूरे भी।

लेकिन क्योकि इनका नियन्त्रण ऐसी शक्तियो के हाथ मे होता है, जिनका बोध मानव को नही हो सकता, इसलिए मैं उनके विषय मे बहस नही करूगा। वे उच्चतर कोटि के राज्य होते हैं और इनका शासन ईश्वर चलाता है, इसलिए कोई उद्दण्ड और दम्भी व्यक्ति ही इन्हे अपनी बहस का विषय बनायेगा।

फिर भी यदि कोई मुझसे यह पूछे कि चर्च ने कैसे इतनी व्यापक सासारिक सत्ता और शक्ति बटोर ली है, इतनी कि जहा अलेग्ज़ान्देर के समय तक अधिकारसम्पन्न इतालवी महाराजा और स्वय को महाराजा कहने वाले लोग ही नही, बल्कि हर सामन्त, जागीरदार और निम्नतम श्रेणी का अधिकारी, इसकी (चर्च की सम्पत्ति की, सत्ता की)* उपेक्षा कर सकता था, उसे नगण्य समझता था, वहा आज फ्रास के शहशाह भी इसके समक्ष कापते हैं, और आज चर्च के अगुआ फ्रास के शाह को इटली से खदेड सकते हैं, वेनिस के शासको को बर्बाद कर सकते हैं तो मैं इसके इतिहास को दुहरा लेना कोई अनुचित काम नहीं समझूगा, यद्यपि सत्ता के सग्रह की यह कहानी सर्वविदित है।

फ्रास के शहशाह चार्ल्स के हमले से पहले, इटली का शासन पोप, वेनिस, नेपल्स और फ्लारेन्स वालो, मीलान के डयूक आदि के हाथो मे था। इन शक्तियो के समक्ष मुख्यत दो ही ध्येय थे—एक तो यह कि कोई विदेशी आक्रान्ता इटली पर आक्रमण न करने पाये—दूसरे यह कि शक्ति-सम्पन्नो की इस मण्डली मे से कोई एक शासक सत्ता का विस्तार न कर ले। जिन लोगो पर विशेष रूप से नजर रखी जाती थी, वे थे पोप और वेनिस वाले। वेनिसवालो को नियन्त्रण मे रखने के लिए शेष सभी शासको का एक जुट होना जरूरी था, जैसा कि फरारा के मामले मे हुआ। यही नहीं, पोप को अपनी सीमाओं से बाधे रखने के लिए रोम के जागीरदारो का प्रयोग किया गया था।

ये जागीरदार ओर्सिनी और कोलोना नामक दो गुटो मे बटे हुए थे, अतएव इन दोनो पक्षो के बीच मतभेद की गुजायश हमेशा बनी रहती थी, और पोप के ऐन सामने शस्त्र धारण करके इन गुटो ने पोप की सत्ता को कमजोर और असुरक्षित बना रखा था। यद्यपि यदा-कदा सिक्सटस जैसा

* अपने शासन का क्षेत्रीय विस्तार करने की इच्छा से प्रेरित होकर वेनिस के शासकों ने १४८२ में फरारा के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी थी। तब वेनिस के विरुद्ध सिक्सटस चतुर्थ, नपल्स, फ्लारेंस और मीलान ने मिलकर मोर्चा बांध लिया था।

दुस्साहसी पोप भी सत्तारूढ हो जाता था, लेकिन उस जैसे शासक भी इस झमेले से जान नही छुडा पाते थे, चाहे वे अपनी सारी सम्पत्ति और सारे राजनय को प्रयोग मे ले आयें। यह स्थिति पोप का शासन काल छोटा होने के कारण होती थी। इसलिए किसी भी पोप को औसत दस वर्ष के शासन काल मे इनमे से किसी एक गुट को कुचलने का समय नही मिल पाता था और फिर मान लीजिए कि कोई एक पोप, उदाहरणत, कोलोना गुट को नष्ट भी कर दे, तो इस बीच किसी दूसरे पोप का उद्भव हो जाता था, जो ओर्सिनी का विरोधी होता था। वह कोलोना को पूर्वस्थिति प्रदान कर देता था, मगर ओर्सिनी को नष्ट करने का समय उसके पास भी नही होता था।

इसका अर्थ यह हुआ कि पोप की भौमिक अथवा सासारिक शक्ति और सत्ता का इटली मे सम्मान करने वाला कोई नही था, लेकिन तभी अलेग्ज़ान्देर षष्ठ का शासन काल प्रारम्भ हुआ और किसी अन्य पोप की अपेक्षा कही अधिक उसने यह सिद्ध कर दिया कि पोप अपने धन और सशस्त्र सेवाओ के बल पर बहुत कुछ कर सकता है। ड्यूक वैलेन्तीनो उसका उपकरण बन गया और फ्रासीसी हमला उसके लिए अवसर बन-कर आया और इन्ही के बल पर उसने वह सब कर दिखाया, जिसकी चर्चा हम ड्यूक के कार्यकलापो के क्रम मे कर आये है। यद्यपि उसका लक्ष्य चर्च का नही, ड्यूक का उद्भव ही था, फिर भी उसने जो कुछ किया उससे चर्च की महत्ता बढी, और उसकी मृत्यु के बाद, जब ड्यूक बर्बाद हो चुका था, चर्च को उसकी पसीने की कमाई, उसकी महनत का फल उत्तरा-धिकार मे मिला।

इसके बाद पोप जूलियस का उद्भव हुआ। उसके समय तक चर्च पहले ही व्यापक सत्ता का अधिकारी बन चुका था। रोम के जागीरदारो का नाश हो चुका था और रोमान्या पर चर्च का झण्डा फहरा रहा था, अलेग्ज़ान्देर की ही प्रबलता के कारण (ओर्सिनी और कोलोना) गुट समाप्त हो चुके थे। यही नही, उसे सम्पत्ति बटोरने का एक ऐसा साधन भी उपलब्ध हो गया, जिसका उपयोग अलेग्ज़ान्देर से पूर्व किसी ने नही किया था। जूलियस ने इन सबका इस्तेमाल जारी ही नही रखा, इनके

प्रयोग में सुधार भी किया।

उसने स्वय के लिए बोलोना को जीतने का और वेनिसवालो को कुचलने का फैसला किया। साथ-साथ उसने फ्रासीसियो को इटली से बाहर खदेड़ने की भी योजना बनाई। वह अपने इन सभी आयोजनो मे सफल हुआ और क्योकि उसने यह सब चर्च के उद्‌भव के लिए किया था, किसी व्यक्तिविशेष के लाभार्थ नही, अतएव उसके ये सभी अभियान उसके यश और कीर्ति के कारण बने। उसने ओसिनी तथा कोलोना गुटो को जिस स्थिति में पाया था, उन्हें वैसा ही रहने दिया यद्यपि इन गुटो मे कुछेक नेता ऐसे भी थे, जो झंझट खड़े करने की कला मे दक्ष थे। दो बातो ने उनको रोके रखा—एक थी चर्च की महत्ता, जिसकी बढती हुई शक्ति से वे आतकित हो उठे थे और दूसरे उनके बीच में विद्रोह की लहरें पैदा करने वाले कार्डिनल उनके साथ नही थे।

जब इन गुटो के बीच उनके कार्डिनल मौजूद होते हैं तो वे रोम मे और अन्यत्र भी पारस्परिक झगड़े-झंझटो को जन्म देते रहते हैं, और ये सामन्त-जागीरदार एक दूसरे की मदद के लिए अनिवार्यत. आते ही हैं। इस प्रकार धर्मोपदेशको की निजी महत्त्वाकाक्षाओ के कारण सामन्तो-जागीरदारो के बीच द्वन्द्व और विवाद खड़े होते रहते हैं।

जब परम् पावन पोप लियो सत्तारूढ़ हुए, तो पोप का राज्य बडी मजबूत स्थिति मे था और हमे आशा है कि उनके पूर्वजो द्वारा तलवार के बल पर स्थापित की गयी यह महत्ता एव यह प्रबलता उनकी सज्जनता और उनके अनेक अन्य गुणो का सहारा पाकर और भी महान् एव सम्मान का विषय बन जायेगी।

१२

सैन्य-संगठन और किराये के सैनिक

प्रारम्भ में अनुगणित रियासतो या राज्यो की विशेषताओ की चर्चा करने के बाद और किसी हद तक उनकी समृद्धि एव असफलता के कारणो की परिगणना करने के बाद और उनकी प्राप्ति एवं उनपर अधिकार बनाये रखने के अधिकतर तरीको को समझाने के बाद अब मुझे मोटे तौर पर इन भिन्न-भिन्न तरीकों का विश्लेषण करना है, जिनका सहारा लेकर ये राज्य स्वय को आक्रमण अथवा प्रतिरक्षा के लिए सगठित कर सकते हैं।

हम पहले कह चुके हैं कि राजा को राज्य की नीव मजबूत डालनी चाहिए, वरना उसपर कभी भी विपत्ति आ सकती है। नये और पुराने सकलित सभी प्रकार के राज्यो की मजबूत नीव का आधार होते हैं अच्छे कानून और अच्छा सैन्य सगठन और क्योकि अच्छे सैन्य बल के बगैर आप अच्छे कानून भी नही बना सकते एवं जहा कहीं सैन्य बल अच्छा है, वहा कानून भी अच्छे ही बनते हैं, इसलिए मैं कानूनो की चर्चा न करके शस्त्रधारी सैन्य की ही चर्चा करूगा।

कोई भी शासक अपनी प्रतिरक्षा का आधार या तो अपनी सेना को बना सकता है या किराये के सैनिको को अथवा सहायक सैन्य सगठन को अथवा मिले-जुले सभी प्रकार के सैन्य को। किराये के सैनिक और सहायक सैनिक कोटि के सगठन बेकार भी होते हैं और खतरनाक भी। अपने राज्य की रक्षा का आधार भाडे के सैनिको को बनाने वाला शासक न तो अपने शासन को सुरक्षित ही बना पायेगा और न ही स्थायी, क्योकि भाडे के इन सैनिको मे ऐक्य नही होता। वे सत्ता के भूखे होते हैं। उनमे अनुशासन नही होता और वफादारी का भी अभाव होता है। वे मित्रो के बीच शूरवीर होते हैं एव शत्रु के समक्ष कायर। उन्हें ईश्वर का भय नहीं

होता और अपने साथियो, सहमानवो मे उन्हे आस्था नही होती। वे जब तक युद्ध के मैदान मे नही जाते, तभी तक पराजित भी नही होते। शान्ति काल मे वे आपको लूटते हैं, और युद्ध काल मे शत्रु आपको लूटता है। इस सबका कारण यह है कि उन्हें मिलने वाले स्वल्प वेतन के अतिरिक्त युद्ध के मैदान मे लडाने वाला और कोई प्रलोभन या कारण नही होता और यह वेतन इतना काफी नही होता कि वे आपके लिए अपने प्राण होम देने के लिए तैयार हो जायें। जब आप युद्ध नही कर रहे हैं, तब वे आपकी सेना मे नौकरी करने के लिए सदा तैयार मिलेंगे, मगर युद्ध की घडी आने पर वे या तो आपको छोडकर भाग जायेंगे या बिखर जायेंगे। मुझे इस मुद्दे पर ज्यादा बहस करने की जरूरत नही होनी चाहिए, क्योंकि इटली की वर्तमान बरबादी का कारण वर्षों तक भाडे के सैनिको पर निर्भर प्रतिरक्षा व्यवस्था के अतिरिक्त कुछ भी नही है। यद्यपि कई बार कुछेक शासको ने इन भाडे के सैनिको से काफी लाभ भी उठाया है और दूसरे पक्ष के भाडे के सैनिको के मुकाबले मे हमारे पक्ष के भाडे के सैनिक वीर भी सिद्ध हुए हैं, लेकिन जब विदेशी शत्रुओ से पाला पडा तो उनकी बहादुरी का भेद खुल गया।

यही कारण था कि फ्रास के शहशाह चार्ल्स ने इटली पर अपनी छावनी मे ठहरे हुए सैनिक अफसरो के ही बल पर विजय पाई (अर्थात् उसे लडना ही नही पडा)[1] और जो कोई भी इटली की इस पराजय का कारण हमारे अपने पाप बताता है सच कहता है, लेकिन ये पाप वे नही थे, जिनके विषय मे कहने वाला[2] सोच रहा था, बल्कि वे थे, जिनकी चर्चा मैंने की है, क्योंकि ये पाप शासको ने किये थे, अतएव शासको को ही उनका फल भोगना पडा।

मैं किराये के सैनिको के इस्तेमाल से निकलने वाले खतरनाक परिणामो को और भी स्पष्ट कर देना चाहता हू। इन भाडे के सैनिको

---

१ मैकियावेली ने इसके लिए जो शब्दावली (Col gesso) इस्तेमाल की है, उसका अर्थ होता है खडिया के एक टुकडे से।'

२ तात्पर्य सवोनरोला से है।

के सेनापति या तो युद्ध की कला मे पारगत होंगे या अनाडी। यदि वे युद्ध कला में पारगत हैं, तो आप उनपर भरोसा नही कर सकते, क्योंकि वे अपनी ही धाक बैठाने के फेर मे होते हैं। इसके लिए या तो वे अपने स्वामी को, आपको अथवा आपके शत्रु को, आपकी आकाक्षाओ और आयोजनो से भी अधिक विवश करेंगे। और यदि उनका सेनापति पराक्रम-हीन है तो भी आपकी बरबादी की पूरी-पूरी सम्भावना होती है।

यदि कोई व्यक्ति यह कहना चाहे कि यह बात किसी भी सशस्त्र सेना के बारे में कही जा सकती है, तो मैं यह कहूगा कि सशस्त्र सेनाओ का नियन्त्रण या तो किसी शासक के हाथ मे होना चाहिए या लोकतन्त्री सरकार के। शासक को व्यक्तिगत रूप से सेना की कमान सभालनी चाहिए और सैनिको का नेतृत्व करना चाहिए। लोकतन्त्री सरकार को अपने ही किसी नागरिक को सेनापति पद पर तैनात करना चाहिए और यदि इस प्रकार से तैनात किया हुआ सेनापति अयोग्य सिद्ध हो तो उसे हटा दिया जाना चाहिए। इसके विपरीत यदि वह सेनापति योग्य सिद्ध होता है, तो उसके अधिकार को ससदीय कानूनो के बल पर सीमित किया जाना चाहिए।

अनुभव से यही सिद्ध होता है कि ठोस सफलता या तो शासको को मिलती है अथवा शस्त्र शक्ति से सम्पन्न लोकतन्त्र को। भाडे के सैनिकों से तो घाटा ही घाटा होता है और भाडे के सैनिको के बल पर जीने वाले लोकतन्त्र की अपेक्षा अपने नागरिको के ही बीच से सगठित सैनिक शक्ति वाले लोकतन्त्र के गुलाम बनाये जाने की सम्भावना कही कम होती है।

रोम और स्पार्टा सशस्त्र थे और कई शताब्दियों तक स्वतन्त्र बने रहे। स्विस लोग शक्तिसम्पन्न हैं और पूर्णतया स्वतन्त्र भी। पुरातन काल में भाडे के सैनिको पर निर्भरता का एक नमूना कार्थेगिनिया है। रोमनो के साथ प्रथम युद्ध के समाप्त होने पर, यद्यपि कार्थेगिनिया के अपने ही नागरिक सभी अधिकारी पदो पर आरूढ थे, फिर भी भाडे के सैनिको ने इस लोकतन्त्री राज्य को लगभग गुलाम ही बना लिया था।

इपामिनोण्डास की मृत्यु के बाद थीबा-वासियो ने मक्दूनिया के फिलिप को सेनापति नियुक्त कर दिया और जब वह एक युद्ध जीत गया, तो

उसने पीसा-वासियों की स्वतन्त्रता भी छीन ली। ड्यूक फिलिप्पो की मृत्यु के बाद, मीलान वालों ने वेनिस वालों के विरुद्ध अभियान में अपनी सेनाओं के नेतृत्व के लिए फ्रांसेस्को स्फोर्जा को नियुक्त किया और जब उसने करावेगियो के युद्ध में वेनिस वालों को पराजित कर दिया, तो स्वयं मीलान वासियों को ही अपने अधीन करने के लिए वह शत्रु पक्ष के साथ जा मिला। उसका पिता स्फोर्जा भी नेपल्स की सम्राज्ञी जोअन्ना के यहां नौकरी करता था, एक दिन वह बिना किसी पूर्व सूचना अथवा चेतावनी के उसे असहाय छोड़कर चल दिया। परिणामतः अपना राज्य बचाने के लिए उसे विवश होकर अरागन के शाह की कृपाकांक्षिणी बनना पड़ा।

यह ठीक है कि अतीत काल में फ्लारेंस तथा वेनिस वाले अपनी सत्ता के विस्तार के लिए भाड़े के सैनिकों का इस्तेमाल कर चुके हैं और इन भाड़े के सैनिकों के सेनापति अपने मालिकों की रक्षा के लिए बिना राज्य पर कोई दखल जमाये लड़ भी चुके हैं, लेकिन इस सम्बन्ध में मुझे इतना ही कहना है कि फ्लारेंस वाले इस मामले में सौभाग्यशाली थे। हम कुछेक ऐसे अच्छे सेनापतियों को ही लें जो उन्हें परेशान कर सकते थे। इनमें से एक सैनिक दृष्टि से असफल रहा, दूसरे की योजनाएं पूरी नहीं होने दी गयीं और एक अन्य को अपनी महत्त्वाकांक्षा की दिशा बदलनी पड़ी। गियोवानी एक्युतो सैनिक दृष्टि से विफल हुआ और इसीलिए उसकी स्वामिभक्ति की परीक्षा नहीं हो सकी, लेकिन इतनी बात सभी लोग मानेंगे कि यदि वह युद्धभूमि में सफल हो जाता, तो फ्लारेंस वासी उसके अधिकार में होते। स्फोर्जाओं को सदैव ब्रेक्चेश्ची का विरोध सहना पड़ा और इस प्रकार से ये दोनों पक्ष एक-दूसरे पर अंकुश रखे रहे। फ्रांसेस्को ने अपनी महत्त्वाकांक्षा को लोम्बार्डी की ओर मोड़ दिया। ब्रैचियो ने चर्च और नेपल्स के राज्य की ओर मुंह किया।

लेकिन आइये, देखें कि इससे कुछ ही देर पहले क्या हुआ था। फ्लारेंस वासियों ने एक बड़े चतुर व्यक्ति पॉलो वितेल्ली को अपना सेनापति नियुक्त किया। वितेल्ली ने बड़े निम्न पद से कार्यकारी जीवन शुरू किया और धीरे धीरे अपनी साख उसने काफी बढ़ा ली। यदि वह पीसा को जीत लेता, तो फ्लारेंस वासियों के पास उसकी इच्छाओं का अनुमोदन करने में

सिवाय कोई चारा न रह जाता, क्योंकि यदि वह उनके शत्रुओं से जा मिलता तो वे उसके मुकाबले में असहाय हो जाते और उसे अपना वेतन-भोगी बनाये रखने का परिणाम यह होता कि वे उसके आदेशों का पालन करने को बाध्य होते।

यदि वेनिस के विस्तार का अध्ययन किया जाए तो हम देखेंगे कि वेनिसवासियों ने मुख्य भूमि पर सैनिक अभियान करने से पहले जब अपनी सेनाओं को लेकर युद्ध लड़े, तब तक वे सुरक्षित भी रहे और उन्होंने यश एवं कीर्ति भी अर्जित की। अपने ही कुलीन जनों और नागरिकों की सेना को लेकर उन्होंने सर्वाधिक पराक्रम दिखाया, लेकिन जब उन्होंने मुख्य भूमि पर अपना अभियान शुरू किया, तो उनका पराक्रम जाता रहा और वे भी इटली की सैन्य परंपरा के अंग होकर रह गये। शुरू-शुरू में जब मुख्य भूमि के कुछ प्रदेशों पर उन्होंने अधिकार किया तो उनके समक्ष अपने सेनापतियों से भयभीत होने का कोई कारण नहीं था, क्योंकि अभी उनके उपनिवेश सीमित ही थे और उनकी साख काफी अच्छी थी, लेकिन जब इन उपनिवेशों का विस्तार हुआ और जब कार्माग्नोला उनका सेनापति था, तब उनको अपने तौर-तरीकों के गलत होने का अहसास हुआ।

उन्होंने कार्माग्नोला के पराक्रम और युद्ध कौशल को देखा था और उसी के नेतृत्व में वे लोग मीलान के ड्यूक को हटा चुके थे। फिर उन्होंने देखा कि वह युद्ध के संचालन में उत्साहहीन होता जा रहा है और उन्हें लगा कि अब वह उनके पक्ष के लिए और कोई युद्ध नहीं जीत सकेगा। लेकिन वे उसे अपदस्थ नहीं कर सकते थे, क्योंकि ऐसा करने से जीता हुआ प्रदेश खो जाने की आशंका थी। इसलिए सुरक्षा की दृष्टि से वे उसकी हत्या करने के लिए विवश हो गये।

इसके बाद उन्होंने अपने सेनापतियों के रूप में बर्गामो के बार्तोलोमिऊ, सान् सेवेरिनो के रूबर्तो, पितिग्लियानो के काउण्ट और इसी प्रकार के अन्य लोगों को नियुक्त किया। और जब सेना की कमान इन लोगों के हाथों में थी, तो वेनिस वालों को यह चिन्ता नहीं थी कि वे नये प्रदेश जीत सकेंगे या नहीं, बल्कि यह चिन्ता थी कि पहले जीते गये प्रदेश भी उनके हाथों में बने रह सकेंगे या नहीं ? वैला के युद्ध में भी यही स्थिति थी। जिस सारे

१३

सहायक, मिले-जुले और स्थानीय सैन्य दल

एक अन्य प्रकार की निरुपयोगी सेना होती है, सहायक सेना। यह तब खड़ी होती है, जब आप किसी शक्तिसम्पन्न राज्य से अपनी प्रतिरक्षा एवं सहायता के लिए सैनिक सहायता की मांग करते हैं। पोप जूलियस ने कुछ समय पहले ऐसा किया था। फरारा-अभियान मे भाड़े के सैनिकों ने जो निराशाजनक स्थिति खड़ी कर दी थी, उसे देखते हुए पोप सहायक सैन्य की ओर उन्मुख हुए और उन्होंने स्पेन के फर्डिनेण्ड के साथ मिलकर उसके सैनिक और सलाहकार बुला लिए।

अपने-आप मे ये सहायतार्थ आने वाली सेनाएं उपयोगी एव विश्वनीय हो सकती हैं, लेकिन उन्हें अपनी सहायतार्थ निमन्त्रण देनेवाले के लिए ये हमेशा बरबादी का कारण बनती हैं। यदि वे पराजित हो जाए, तो आप अधर मे टगे रह जाते हैं और अगर जीत जाए तो आप उनकी मुट्ठी मे बन्द होते हैं। पुरातन इतिहास इस प्रकार के उदाहरणो से भरा पडा है, लेकिन मैं पोप जूलियस द्वितीय द्वारा खडे किए गए उदाहरण को ही प्रस्तुत करके सन्तोष कर लूगा। फरारा को प्राप्त करने की धुन मे, जो उसने अपने-आप को एक विदेशी के हाथो मे डाल दिया, इससे ज्यादा गलत कार्य-वाही वह कुछ नहीं कर सकता था, लेकिन यह उसका सौभाग्य ही था कि इसके साथ ही कुछ और भी ऐसा घटित हुआ, जिससे वह बोये हुए काटो की फसल काटने की यातना से बच गया। जब उसकी सहायक सेनाओ को रवन्ना के स्थान पर खदेड दिया गया, तो स्विस लोग मैदान मे आ गए और उन्होंने विजेता सेनाओ को मार भगाया और इस प्रकार सभी को आश्चर्य-

चकित करते हुए और स्वय भी इस सौभाग्य से चौंधियाये हुए, पोप जूलियस महोदय बन्दी जीवन से बच गए। शत्रु भाग खड़ा हुआ, सो वह उन्हें नहीं पकड़ सका क्योंकि सहायतार्थ आये सैन्य दल अभियान मे पराजित हुए थे, अतएव वे उनके दबाव मे आने से बच गए।

फ्लारेन्स वालो के पास अपने कोई सैनिक दस्ते थे ही नहीं, इसलिए उन्होंने पीसा को जीतने के लिए दस हज़ार फ्रासीसी सैनिक भाड़े पर लिए और इस प्रकार से उन्होंने जो खतरा उठाया, वह उनके तमाम विपत्ति काल मे सबसे बड़ा खतरा था। कुस्तुनतुनिया के सम्राट् ने अपने पड़ोसी राज्य का झटका सहने के लिए दस हज़ार तुर्क सैनिक यूनान भेजे, मगर जब युद्ध समाप्त हो गया तो उन सैनिको ने यूनान छोड़ने से इनकार कर दिया और यहीं से यूनान पर नास्तिकों का अधिकार जमना शुरू हो गया।* इसीलिए जो कोई व्यक्ति सैनिक विफलता का मुह देखना चाहता हो उसी को इस प्रकार की सेना का इस्तेमाल करना चाहिए, क्योंकि ये सहायतार्थ आये सैनिक दस्ते भाड़े के सैनिको से ज्यादा खतरनाक होते हैं। ये सहायक दस्ते प्राणघाती होते हैं। वे संगठित सैन्य का अग होते हैं और वह सैन्य किसी अन्य की आज्ञा का पालन करता है। भाड़े के सैनिको को आपको हानि पहुचाने मे समय लगता है और अवसर की तलाश रहती है, क्योंकि वे सगठित और ठोस सेना का रूप नही ले पाते। वे आप ही के बल पर खड़े होते हैं और आप ही के वेतनभोगी होते हैं। भाड़े के सैनिको का नेतृत्व भी आप ही के द्वारा नियुक्त किसी सेनापति के हाथो मे होता है और व्यक्ति इतनी जल्दी इतनी अधिक मान्यता और अधिकार नही बटोर सकता कि आपको हानि पहुचा सके। सक्षेपत भाड़े के सैनिको की कायरता खतरनाक होती है और सहायक सैनिको की वीरता!

---

* बिजेन्तिया के सम्राट् कैण्टाक्यूजेनउ जॉन षष्ठ (ईस्वी सन् १२६२-१३८३) ने उस गृहयुद्ध मे भाग लिया। गृहयुद्ध १३४७ मे तब समाप्त हुआ, जब उसने तुर्कों की सहायता से कुस्तुनतुनिया पर अधिकार कर लिया और तब जॉन पचम से उसका समझौता हुआ। वह जॉन पचम का अभिभावक शासक रह चुका था। १३५२ में फिर गृहयुद्ध छिड़ गया और जॉन षष्ठ ने फिर से तुर्कों की सहायता ली। अन्तत उसने राज्य त्याग दिया।

इसलिए बुद्धिमान शासक हमेशा सहायक सेनाओ को छोडकर अपने ही सैनिक दस्तो को काम मे लाते हैं। वे अन्य सेनाओ की सहायता से युद्ध जीतने के बजाय, अपनी सेनाओ के बल पर युद्ध हारना बेहतर समझते हैं। उनका विश्वास होता है कि उधार मागे हुए शस्त्रबल से कभी सच्ची विजय नही पायी जा सकती।

यहा मुझे सीजर बोर्गिया और उसके व्यवहार को उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत करते हुए रचमात्र भी झिझक नही होगी। ड्यूक ने रोमान्या पर आक्रमण के लिए सहायक सैनिको का इस्तेमाल किया। वह वहा पर फासीसी सैनिक दस्तो को लेकर गया था। इनकी सहायता से उसने इमोला तथा फोर्ली पर अधिकार कर लिया। तभी वह इस निष्कर्ष पर पहुचा कि सहायक सेनाए खतरे से खाली नही हैं और उसने भाडे के सैनिक दस्तो की भरती शुरू कर दी। ओर्सिनी और वितेल्ली के सैनिको को भरती करते समय उसने समझा कि इसमे खतरा कुछ कम है।

इनका इस्तेमाल करते हुए उसने इनका व्यवहार भी सन्दिग्ध पाया। वे उसे स्वामिद्रोही और खतरनाक भी लगे, अतएव उसने उनसे भी पिण्ड छुडाया और अपनी निजी सेना का गठन कर लिया। कोई भी व्यक्ति ड्यूक की फासीसी सैनिकों पर निर्भरता के युग का और फिर ओर्सिनी तथा वितेल्ली पर उसकी निर्भरता के ज़माने का तथा अन्तत निजी सेना के बल पर किए गए विजयाभियानो का अध्ययन करके इन भिन्न-भिन्न प्रकार की सेनाओ की साख और विश्वसनीयता का अन्दाज़ लगा सकता है। वह हर स्तर पर पूर्ववर्ती, अधिक महत्त्वपूर्ण और अधिक दूरदर्शी एव अनुभव-सम्पन्न होता चला गया और उसे चारो ओर से वास्तविक सम्मान तभी मिला, जब लोगो ने देख लिया कि वह अपनी सेनाओ का एकमात्र मुखिया है।

मैं अर्वाचीन इतालवी दृष्टान्तो की ओर से विमुख नहीं होना चाहता था, फिर भी मैं सिराक्यूज के हायरो की उपेक्षा भी नही करना चाहता। मैं उसकी चर्चा पहले भी कर चुका हू। जैसा कि मैंने बताया था, जब सिराक्यूज़ वासियो ने उसे अपनी सेना का कमाण्डर नियुक्त किया, तभी उसने महसूस कर लिया कि भाडे के सैनिक दस्ते बेकार होते हैं। वे भी

भाडे पर सिपाहीगीरी करने वाले हमारे इतालवी दस्तो की तरह ही गठित थे। उसे उनको बनाए रखना भी असम्भव लग रहा था और उनका विघटन करना भी, इसलिए उसने उन सबको टुकडे-टुकडे करके बाट दिया और उसके बाद उसने पराये सैन्य से नही, अपनी सेना ही के बल पर युद्ध लडे।

मैं यहा बाइबिल के पुराने साक्षात्कार (ओल्ड टेस्टामेण्ट) से भी एक दृष्टान्त देना चाहता हू, क्योकि वह मेरी धारणा से मेल खाता है। डेविड ने फिलिस्तीनी चैम्पियन गोलियथ से जाकर लडने का प्रस्ताव साउल के सामने रखा और उसका साहस बढाने के लिए उसे साउल ने अपने शस्त्र और अपना जिरह-बख्तर भी पेश किया। इन शस्त्रो और जिरह-बख्तर की परीक्षा अपने हाथो मे और शरीर पर करने के बाद डेविड ने उन्हे लौटा दिया और कहा कि वह उनके बल पर शत्रु से ठीक से लड नही पायेगा। इसलिए उसने शत्रु का सामना अपनी कटार और अपनी गुलेल के बल पर ही करने का फैसला किया। सक्षेप मे कहा जाये तो दूसरे व्यक्ति के हथियार या तो आपकी पीठ पर टिक ही नही पाते अथवा आप पर बोझिल हो उठते हैं अथवा आपकी गतिविधियो मे बाधक बनते है।

जब ग्यारहवें लुई के पिता चार्ल्स सप्तम ने सौभाग्य एव पराक्रम के बल पर अग्रेज़ो के चगुल से फ्रास को छुडवाया था, तभी उसने अपनी निजी सशस्त्र सेनाओ के गठन की आवश्यकता महसूस कर ली थी और तभी उसने घुडसवार सेना तथा तोपखाना गठित किए जाने के लिए अध्यादेश जारी कर दिये थे।

बाद मे उसके बेटे लुई ने ये अध्यादेश रद्द कर दिए और स्विस सैनिको को भाडे पर तैनात करना शुरू किया और, जैसा कि आज हम देख सकते हैं, उसकी इस भूल ने अन्य कई भूलो के साथ साथ मिलकर फ्रास के सामने वे तमाम खतरे खडे कर दिए हैं, जिनसे वह राज्य आज आतकित रहता है। फ्रासीसी तोपखाने के स्थान पर स्विस सैनिको को दी गयी महत्ता से शेष सेना का मनोबल गिर गया है। तोपखाना एकदम समाप्त कर दिया गया है और घुडसवार दस्तो को विदेशी सैनिको की दया पर निर्भर बना दिया गया है। स्विस सैनिको के साथ ही युद्धस्थल मे जाने के आदी

हो चुके थे पुड़सार अब यह समझने लगे हैं कि परदेसी फौजो के बगैर वे कभी युद्ध जीत ही नही सकते। यही कारण है कि फ्रांसीसी सैनिक स्विस सैनिको का मुकाबला नही कर सकते और स्विस सैनिको की सहायता के बगैर किसी का मुकाबला भी नही कर सकते।

इस प्रकार फ्रांस ने कुछ भाड़े के सैनिक दस्तो का और कुछ नागरिक सेना का मिला-जुला प्रयोग किया है। यह मिश्रण पूर्णत सहायक सेना अथवा पूर्णत भाड़े के सैनिक दस्तो के आधार पर गठित सेना से कही बेहतर है और पूर्णतया नागरिक सेना से कही निम्नतर। फ्रांस का उदाहरण अपने-आप मे ही काफी होना चाहिए, क्योकि यदि वहा चार्ल्स के द्वारा बनाई गई व्यवस्था का निर्वाह अथवा विकास किया गया होता, तो वह देश अजेय हो जाता; लेकिन मानव इतना अदूरदर्शी प्राणी होता है कि वह भोजन करते समय स्वादिष्ट खाना खाता है और यह नही जानता कि वह विषैला भोजन है। इस बात को मैने शरीर को क्षीण करने वाले ज्वरो की चर्चा करते समय उठाया था।

जो शासक बुराइयो के अकुर फूटते ही उनका पता नही पा सकता, वह बुद्धि-विवेक से हीन है; लेकिन कुछेक शासक ऐसे होते हैं जो इसका पता पाने की योग्यता से सम्पन्न होते हैं। यदि हम रोमन साम्राज्य के पतन का प्रारम्भ देखें, तो पता चलेगा कि इस पतन का सूत्रपात गोथो की भाड़े के सैनिको के रूप मे भरती से ही हुआ था। इस अल्प-से बीज से ही रोमन साम्राज्य की शक्ति क्षीण होने लगी थी और रोमनो के खोये पराक्रम के उत्तराधिकारी बने गोथ।

इसलिए निष्कर्ष रूप मे मैं कहना चाहूगा कि जब तक कोई राज्य अपनी सेना नही रखता, तब तक वह कभी सुरक्षित नही हो सकता, बल्कि विपत्ति काल मे उसकी रक्षा के लिए शौर्य और स्वामिभक्ति का कोई भण्डार नही होने के कारण उसे भाग्य के भरोसे रहना पड़ता है। बुद्धिमान लोग सदैव यही कहते और मानते आये हैं : "उस सत्ता की ख्याति से बढ़कर कमजोर और चचल चीज कोई नहीं हो सकती, जो अपने सैन्यबल पर आधारित नही है।"

अपनी सेना वही होती है, जो अपने प्रजाजनो अथवा लोकतन्त्री नाग-

रिकों अथवा अपने आश्रितो मे से भरती की गई हो। अन्य सभी प्रकार की सेना या तो भाड़े की सेना होती है या सहायक सेना। मैंने ऊपर जिन चार शासकों की चर्चा की है, उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरणो से अपनी निजी सेना के गठन का तरीका समझ लेना कुछ कठिन नहीं होगा। और यदि कोई व्यक्ति सिकन्दर महान् के पिता फिलिप तथा अन्य अनेक लोकतन्त्रो एव शासको द्वारा अपने-आप को सशस्त्र करने एव सगठित किए जाने की विधियों को समझ सके तो वह भी अपनी सेना के गठन का काम आसान पायेगा। मैं स्वेच्छया इन शासकों द्वारा स्थापित परम्पराओ की दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता के आगे सिर झुकाता हू।

१४

शासक अपनी देश-रक्षक सेना का गठन कैसे करें ?

एक शासक को युद्ध की कला, युद्ध का आयोजन-संगठन और उसके लिए आवश्यक अनुशासन सीखने के अतिरिक्त किसी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। किसी शासक से युद्ध कला के अतिरिक्त किसी अन्य कला अथवा ज्ञान की अपेक्षा ही नहीं की जाती और यह कला इतनी उपयोगी है कि उत्तराधिकारी शासकों को अपना शासन बनाये रखने में मदद तो करती ही है, यह सामान्य नागरिक को शासक बन जाने में भी सहायता पहुंचाती है। दूसरी ओर हम यह भी देखते हैं कि शस्त्रबल के गठन की चिन्ता छोड़कर अपने भोग-विलास की चिन्ता करने वाले शासक शीघ्र ही अपदस्थ कर दिये जाते हैं। अपना राज्य गवाने का सर्वोपरि कारण है युद्धकला की उपेक्षा और किसी राज्य को जीतने का पहला तरीका है युद्ध कला में दक्षता।

सशस्त्र होने के कारण ही फ्रांसेस्को स्फोर्ज़ा एक सामान्य नागरिक के स्थान से उठकर मीलान का ड्यूक बन गया। उसके बेटे राज्यपद की कठिनाइयों से जी चुराने के कारण ही ड्यूक पद से उतारकर सामान्य नागरिक बना दिए गए। अगर आप निहत्थे हैं, तो आप अभागे हैं, क्योंकि अन्य कई बातों के अतिरिक्त, जनता आपसे नफरत भी करती है और जैसा कि मैं आगे चलकर स्पष्ट कहूंगा, यह एक ऐसा कलंक है, जिससे हर शासक को बचना चाहिए। किसी निहत्थे और सशस्त्र आदमी के बीच कोई तुलना हो ही नहीं सकती। कोई शस्त्रधारी व्यक्ति किसी शस्त्रहीन प्राणी का आज्ञाकारी अनुचर होगा अथवा कोई शस्त्रहीन व्यक्ति अपने

शस्त्रधारी नौकर-चाकरों के हाथों सुरक्षित रह सकेगा, यह बात सोचना ही गलत है।

इस बाद वाली स्थिति में दोनों पक्षों के बीच एक ओर सन्देह होगा और दूसरी ओर अवहेलना। इससे सहयोग असम्भव हो जाएगा। इसलिए युद्धकला को न समझनेवाला शासक अन्य अनेक विपदाओं को आमन्त्रित करने के अतिरिक्त न तो अपने सिपाहियों पर विश्वास कर सकता है और न ही उनसे सम्मान पा सकता है।

इसलिए उसे सैनिक अभ्यास की ओर से कभी मुह नहीं मोड़ना चाहिए। वस्तुत उसे शान्ति काल में युद्ध काल की अपेक्षा इस दिशा में अधिक ध्यान देना चाहिए। ये सैनिक अभ्यास भौतिक भी हो सकते हैं और मानसिक भी। जहा तक भौतिक अभ्यासों का सवाल है, उसे न केवल अपने सैनिकों को स्वस्थ, सगठित और सुप्रशिक्षित रखना चाहिए, बल्कि उसे स्वय भी हमेशा शिकार पर जाते रहना और इस प्रकार से अपने शरीर को कष्ट सहने वाला बनाए रहना चाहिए। अपने भ्रमण से भूगोल का व्यावहारिक ज्ञान अर्जित करते रहना चाहिए। पर्वतों के ढलान कैसे हैं? घाटियों के मुहाने कैसे हैं? मैदानों का फैलाव कैसा है?—यह सब उसे सीखना चाहिए। उसे नदियों और दलदलों का अध्ययन करना चाहिए और इस सबके लिए कठोर प्रयास करना चाहिए।

इस प्रकार का ज्ञान दो प्रकार से काम में आता है प्रथमत स्थानीय भौगोलिक स्थिति का स्पष्ट ज्ञान होने पर वह अपनी प्रतिरक्षा व्यवस्था का गठन भली भाति कर सकेगा। दूसरे स्थानीय परिस्थितियों का उसका ज्ञान एव बोध किसी भी ऐसी नयी बस्ती की विशेषताओं को समझने में सहायक होगा, जिसका परिचय उसके लिए आवश्यक हो। उदाहरणार्थ—टस्कनी के पर्वतों, घाटियों, मैदानों, दलदलों और नदियों में कई ऐसी बातें हैं जो अन्य प्रान्तों के पर्वतों, घाटियों, दलदलों एव नदियों में भी मौजूद हैं। इसलिए एक प्रान्त की भौगोलिक अवस्थाओं का पता होने पर व्यक्ति दूसरे प्रान्तों का भौगोलिक अध्ययन आसानी से कर सकता है। जो शासक यह नहीं कर सकता, वह कभी अच्छा सेनापति नहीं बन सकता। यह भौगोलिक योग्यता उसे शत्रु का पता लगाने में मदद दे सकती है, अपने

शिविर-स्थल का निर्धारण करने में सहायक हो सकती है। अभियान के समय अपनी सेना का नेतृत्व करना सिखा सकती है। युद्धस्थल में उसको व्यूह रचना में मदद दे सकती है, किसी नगर पर घेरा डालना सिखा सकती है। और दूसरों के ऊपर उसे लाभ पहुंचा सकती है।

इकियनों के नेता फिलोपोमेन की इतिहासज्ञों ने अन्य कई बातों के अतिरिक्त, इस बात के लिए भी तारीफ की है कि वह शान्ति काल में भी सैनिक व्यूह रचना के अतिरिक्त अन्य किसी बात की चिन्ता नहीं करता था। जब वह अपने मित्रों के साथ राजधानी से बाहर घूमने-फिरने जाता था, तो जहां-तहां रुककर उनसे बहस करने लगता था। यदि शत्रु उस पहाड़ी के ऊपर खड़ा हो और हम अपनी सेना के साथ यहां खड़े हों, तो हममें से कौन लाभकर स्थिति में होगा? अपनी पंक्तियों को भंग किए बगैर शत्रु को आप कैसे उलझाएंगे? यदि हम पीछे हटना चाहें तो कैसे और क्या कार्यवाही करेंगे? अगर शत्रु पीछे हट जाए, तो हमारे पास उसका पीछा करने का सर्वोत्तम तरीका क्या होगा?

और इसी प्रकार से मित्रों के साथ सैर-सपाटा करते हुए ही वह उन तमाम परिस्थितियों और सम्भावनाओं की व्याख्या करता चला जाता था, जो किसी सेना पर पड़ सकती हैं। वह उनके मत अभिमत भी सुनता था, अपनी बात भी कहता था और कार्य-कारण सम्बन्ध की स्थापना के द्वारा अपनी बात स्पष्ट करता था। इस प्रकार की निरन्तर मन्त्रणा के परिणाम-स्वरूप अपनी सेनाओं का नेतृत्व करते समय वह हर संकट का सामना करने में समर्थ होता था।

जहां तक बौद्धिक प्रशिक्षण का सवाल है, शासक को महान् व्यक्तियों के युद्धकालीन कार्यकलापों का अध्ययन करके, उनकी जय-पराजय के कारणों को जानने के लिए, इतिहास का वाचन करना चाहिए, जिससे वह पराजय से बच सके और सर्वत्र जयी हो सके। मुख्यतः उसे इतिहास का अध्ययन इसीलिए करना चाहिए कि महान् व्यक्तियों का वह भी अनुकरण कर सके। उन्होंने भी किसी प्रशंसित और सम्मानित ऐतिहासिक व्यक्ति को अपना आदर्श बनाया था और उसके कृत्यों एवं तौर-तरीकों को अपने सामने रखकर उनका अनुकरण किया था। कहा जाता है कि सिकन्दर ने

एंकलीज़ का अनुकरण किया था। सीज़र ने सिकन्दर का अनुकरण किया और स्किपियो ने साइरस का और जो कोई भी व्यक्ति ज़ेनोफ़न की लिखी हुई साइरस की जीवनी पढ़ेगा वही समझ सकेगा कि स्किपियो द्वारा अर्जित कीर्ति का कितना श्रेय साइरस के प्रति उसकी आस्था को दिया जा सकता है और किस सीमा तक स्किपियो के उच्चतर नैतिक प्रतिमान, उसका सौजन्य, उसकी मानवीयता और उदारता, ज़ेनोफन द्वारा अंकित, साइरस के चरित्र से मेल खाती है।

किसी बुद्धिमान शासक को इन नियमों का पालन करना चाहिए—उसे शान्ति काल में आरामपसन्द नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि उसे शान्ति काल का सदुपयोग तत्परता से करना चाहिए जिससे आपत्तिकाल में वह लाभ उठा सके। परिणामतः जब भाग्य का पासा पलटेगा, वह विपत्ति का सामना करने के लिए तैयार होगा।

१५

शासकों की निन्दा या स्तुति क्यों की जाती है ?

अब हमे यह देखना है कि किसी शासक को अपने शासितो अथवा मित्रो के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए। मैं जानता हू कि इस विषय पर पहले भी बहुत कुछ लिखा जा चुका है और मैं समझता हू कि इस सम्बन्ध मे मेरा कुछ कहना धृष्टता नही मानी जाएगी, क्योकि विशेषकर इस विषय की चर्चा करते समय, मैं कुछ मौलिक नियमों का निर्धारण करता हू, क्योकि मैं कुछ ऐसा ही कहना चाहता हू, जो जिज्ञासु व्यक्ति के लिए व्यावहारिक रूप से लाभकर हो सके, इसलिए मैंने बात को ऐसे ही ढग से पेश करने का इरादा किया है जो उसका यथार्थ रूप है। उनके कल्पित रूप को मैं पेश नही कर रहा हू।

कई लोगो ने निरस्तित्व लोकतन्त्रो की और शासनो की स्वप्निल शृ खला बना रखी है। आदर्श जीवन एव दैनिक जीवन के बीच की खाई इतनी बडी है कि आदर्श के फेर मे यथार्थ-व्यावहारिक जीवन की उपेक्षा करने वाला व्यक्ति आत्मरक्षा की बजाय आत्मनाश की राह पर चल निकलता है। सच्चाई तो यह है कि बहुत-से दुराचारियो के बीच फसकर सदैव सदाचार का ही पालन करने वाला व्यक्ति निश्चित रूप से मुसीबत में पड जाता है, इसलिए जो शासक अपना शासन बनाए रखना चाहता है, उसे सदाचारी न बनने की 'कला' भी सीखनी ही चाहिए और आवश्यकतानुसार उसका उपयोग करने या न करने की निर्णय-बुद्धि भी प्राप्त करनी चाहिए।

इसलिए काल्पनिक मुद्दो को अलग छोडकर और केवल उन्ही चीजो

की चर्चा करते हुए, जिनका सचमुच कुछ अस्तित्व है, मेरा कहना यह है कि जब कभी भी किसी व्यक्ति की (विशेषकर शासको की क्योकि उनकी ओर लोगो की नजर ज्यादा लगी रहती है) चर्चा होती है, उनके विभिन्न गुणो अथवा अवगुणो की वजह से ही उनकी निन्दा या स्तुति की जाती है। उदाहरणार्थ कुछेक को उदार कहा जाता है और अन्यो को कृपण, (मैं दूसरी श्रेणी वालो को 'लोभी' न कहकर उन्हें टस्कन विशेषण 'कृपण' से अभिहित कर रहा हूं, क्योकि जो व्यक्ति अपने स्वामित्व को व्यय करते हुए क्षुद्रहृदयता का परिचय देता है, उसे हम 'कृपण' कहते हैं जो व्यक्ति अन्यो के स्वामित्व को लूटने को उद्यत रहता है, उसे 'लोभी')[1]। कुछ लोगो को परोपकारी समझा जाता है, कुछ दूसरो को झपट्टू, कुछेक व्यक्ति क्रूर माने जाते हैं, कुछेक सहानुभूति से आपूरित, किसी एक को वफादार समझा जाता है, किसी दूसरे को द्रोही। कोई व्यक्ति स्त्रैण एव कायर के रूप मे विख्यात होता है और कोई व्यक्ति दुस्साहसी एव प्रचण्ड, कोई व्यक्ति सौम्य और शिष्ट होता है, कोई दम्भी, कोई व्यक्ति लम्पट होता है, और कोई नितान्त निष्कलक, कोई व्यक्ति सीधा और निश्छल होता है एव कोई धूर्त एव चालबाज, एक व्यक्ति ज़िद्दी होता है, दूसरा लचीले स्वभाव का, एक व्यक्ति गम्भीरचित्त होता है, दूसरा उथला एव चपलस्वभाव, एक व्यक्ति धर्मप्राण होता है, दूसरा शकालु स्वभाव का। मैं यह जानता हू कि हर व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि मेरे द्वारा गिनाई गई सभी अच्छी बातो को अपने चरित्र मे धारण करने वाला शासक सभी जगह प्रशसा का पात्र होगा।

लेकिन मानव स्वभाव ही ऐसा है कि शासक मे ये सभी गुण हो ही नही सकते, बल्कि वे लोग सर्दव इन गुणो का प्रदर्शन कर ही नही सकते, इसलिए शासक को इतना सजग और बुद्धिमान होना चाहिए कि वह उन दुर्गुणो के कारण होने वाली बदनामी से बचे, जिनके कारण राज्य ही खो जाने का भय बना रहता हो। उसे उन तमाम अवगुणो से भी बचना ही

1 मैकियावेली ने 'कृपण' के लिए इतालवी शब्द 'मिजेरो' तथा 'लोभी' के लिए 'एवारो' लिखे है।

चाहिए जो इतने खतरनाक नहीं होते, लेकिन यदि इनसे बचना सम्भव न हो तो कोई विशेष चिन्ता की बात भी नहीं। दूसरी ओर उसे उन तमाम अवगुणों का कलंक अपने माथे पर लेने से झिझकना भी नहीं चाहिए, जो राज्य की रक्षा के लिए आवश्यक बन चुके हों। मैं यह बात इसलिए कह रहा हूं कि हर बात को देखते हुए शासक देखेगा कि प्रत्यक्षतः गुण नजर आने वाली कई बातें व्यवहारतः उसे बरबाद कर सकती हैं, जबकि कई दुष्टतापूर्ण लगने वाली बातें उसकी सुरक्षा और समृद्धि का आधार हैं।

१६

उदारता बनाम कृपणता

मैंने ऊपर जिन गुणों का ज़िक्र किया है, उनमें से पहले को ही लें। मेरी धारणा है कि उदारता के लिए प्रख्यात होना अच्छा है, लेकिन यदि शासकीय कार्यवाहियों के पीछे की मूलभूत प्रेरणा उदारता के लिए ख्याति की इच्छा ही हुई, तो मुसीबत खड़ी हो जायेगी। बात यह है कि यदि आपकी उदारता सदिच्छा एवं ईमानदारी से प्रेरित है, तो उसकी ओर किसी का ध्यान तक नहीं जायेगा और आप कृपणता की कुख्याति से बच नहीं पायेंगे, इसलिए यदि आप अपनी उदारता के लिए प्रसिद्ध होना चाहते हैं, तो आपको पूरे आडम्बर के साथ अतिव्ययी होना पड़ेगा। और अति-व्ययी शासक शीघ्र ही अपने सभी साधनों को लुटा बैठेगा। अन्ततः अपनी प्रसिद्धि को बनाये रखने के लिए वह अपनी प्रजा पर अतिरिक्त बोझ डालने के लिए शोषणकारी कर लगाने के लिए और धनोपार्जन का हर सम्भव तरीका आज़माने के लिए विवश हो जायेगा। इससे उसकी प्रजा उससे घृणा करने लगेगी और प्रजाजनों की दरिद्रता के लिए ज़िम्मेदार होने के कारण, उसके प्रति तिरस्कार का भाव अपना लेगी। परिणामतः अनेक को आघात पहुँचाकर कुछेक का उपकार करने वाली उसकी इस उदारता के कारण वह छोटे से छोटे झटके के सामने भी कांप उठेगा तथा एक ही बार कोई बड़ा खतरा उत्पन्न होने पर उसकी विपदा बन जायगी। जब वह इस सत्य को समझेगा और अपनी मूल स्थिति को लौट चलने की कोशिश करेगा तो तुरन्त ही कृपणता के लिए बदनाम हो जायेगा।

जब कोई भी शासक अपने जीवन और शासन के हितों को आघात पहुँचाये बगैर इतनी उदारता नहीं बरत सकता कि प्रजा उसकी वाह-वाह करने लगे तो बुद्धिमत्ता इसी में है कि कृपणता के लिए फैलती हुई अपनी

बदनामी की चिन्ता ही न करे। समय पाकर, जब लोग यह देखेंगे कि शासक की मितव्ययिता के कारण उसका वर्तमान राजस्व ही प्रशासनिक व्ययभार वहन करने के लिए काफी सिद्ध हो रहा है और वह प्रजा पर नया बोझ डाले बगैर ही नये-नये उद्योग और अभियान चला सकता है, तो वे स्वयं ही उसकी मौलिक उदारता की दाद देने लगेंगे। इस प्रकार से वह उन लोगों के समक्ष अपनी उदारता का सिक्का जमा लेता, जिनसे वह कुछ लेता नहीं है और ऐसे लोग असंख्य होंगे और उन लोगों की नजरों मे कृपण सिद्ध होगा, जिनको वह कुछ देता नहीं है और ऐसे लोग कुछेक ही होते हैं।

हमारे अपने युग मे ऐसे शासकों ने अनेक महान् कार्य कर दिखाये हैं, जो अपनी कृपणता के लिए विख्यात रहे हैं और दूसरे शासक बरबाद हो गये हैं। पोप जूलियस द्वितीय ने पोप-पद जीतने के लिए अपनी उदारता का सिक्का जमाया, लेकिन बाद मे अपने युद्धों का व्ययभार वहन करने के लिए उसने इस सिक्के को जमाये रखने की कोई कोशिश नहीं की। फ्रांस के वर्तमान शासक ने प्रजा पर किसी प्रकार का अतिरिक्त करभार डाले बगैर कई एक लड़ाइयां लड़ी, क्योंकि उसकी दीर्घकालिक मितव्ययिता इन युद्धों का व्ययभार वहन करने मे उसके काम आयी। यदि स्पेन के वर्तमान शाह अपनी उदारता के लिए विख्यात होते तो वह इतनी सफलता से इतने सारे नये उद्योगों-अभियानों को शुरू और पूरा न कर पाते।

इसलिए यदि कोई शासक अपने शासितों को लूटने के लिए बाध्य नहीं होता, यदि वह अपनी और अपने राज्य की रक्षा करने मे समर्थ है, यदि वह दरिद्रता एवं शर्मिन्दगी के गर्त मे नहीं गिर जाता, यदि वह लोलुपता की नीति अपनाने के लिए विवश नहीं हो जाता, तो उसे कृपण कहलाये जाने की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। उसकी कृपणता एक ऐसा अवगुण है, जिसके बल पर उसका शासन बना हुआ है।

किसी-किसी व्यक्ति को आपत्ति हो सकती है। सीज़र अपनी उदारता के बल पर ही सत्तारूढ़ हुआ था और अन्य भी कई लोग अपने उदार व्यवहार एवं तदर्थ ख्याति ही के कारण उच्चतम पदों तक पहुंच सके। इस

आपत्ति के प्रति मेरा जवाब यह है : या तो आप शासक हैं अथवा शासक बनने वाले हैं। अगर आप शासक हैं, तो अपनी उदारता की कीमत आप ही को चुकानी पड़ेगी। अगर आप शासक बनने वाले हैं, तो आपको अपनी उदारता के लिए विख्यात होना ही चाहिए।

सीज़र उन लोगों में से एक था, जो रोम पर अपना शासन स्थापित करना चाहते थे, लेकिन शासन की स्थापना के बाद यदि वह जीवित रहता और अपने व्ययभार को कम नहीं करता, तो सत्ता से उसका पतन निश्चित था।

फिर भी कोई व्यक्ति उलटकर कह सकता है कि दुनिया में ऐसे भी शासक हुए हैं, जो अपने सैनिक अभियानों में भी असाधारण रूप से सफल रहे हैं और जो अपनी चरम उदारता के लिए भी विख्यात रहे हैं। इसके लिए मेरा उत्तर है कि शासक वही कुछ दूसरों को देता है, जो उसका अपना होता है अथवा उसके शासितों का होता है अथवा वह दूसरों की ही सम्पत्ति दान करता रह सकता है। अपनी अथवा प्रजाजनों की धन-सम्पत्ति का दान करते समय उसे मितव्ययी होना चाहिए। दूसरों की सम्पत्ति दान ,देते समय उसे अपनी उदारता पूरे पैमाने पर दिखानी चाहिए। अपनी सेनाओं को लेकर विजयाभियान पर निकला हुआ शासक, जो लूट-मार पर जीवन-यापन करता है, जो धमकाकर धन-सम्पत्ति ऐंठता है, वह शत्रु की सम्पत्ति का वितरण कर रहा होता है और उसे खुले हाथों दान देना ही चाहिए, अन्यथा सैनिक उसके पीछे-पीछे नहीं चलेंगे। आप सीज़र, साइरस और सिकन्दर की तरह, उस धन-सम्पत्ति का वितरण उदारतापूर्वक कर सकते हैं, जो आपके प्रजाजनों की नहीं है। अजनबियों के स्वामित्व के बटवारे में अपने राज्य में आपकी साख पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता, बल्कि इससे यह साख बढ़ती ही है। आपको आघात तभी पहुंचना है जब आप अपना माल लुटाते हैं।

उदारता से बढ़कर आत्म पराजयी चीज कोई नहीं . इसे व्यवहार में लाते-लाते आप इसे बरतने में असमर्थ हो जाते हैं और आप या तो दरिद्रता और वितृष्णा के शिकार हो जाते हैं अथवा दरिद्रता से बचने की चेष्टा में घृणा एवं लोलुपता के शिकंजे में आ जाते हैं। एक शासक को सबसे ज़्यादा

जिस चीज से बचने की जरूरत है, वह है तिरस्कार एवं घृणा और आपकी उदारता इन्ही दोनों के जबड़ो में आपको धकेलती है। इसलिए कृपण होने की कुप्रसिद्धि सह लेना बेहतर है, क्योंकि इससे आप कलंकित भले ही हों, घृणा के पात्र नहीं बनते। लोलुपता और उसके परिणामस्वरूप मिलने वाली घृणा एवं तिरस्कार के लिए पायी गयी बदनामी के बल पर उदारता का ढिंढोरा पीटते रहना ठीक नहीं।

१७

आतंक बनाम लोकप्रियता

मेरे द्वारा ऊपर गिनाए गए अन्य गुणो को ले लें। मेरा कहना यह है कि शासक को अपनी करुणा के लिए विख्यात होने की कामना करनी चाहिए, अपनी क्रूरता के लिए नही। इसके बावजूद उसे इतना सजग भी होना चाहिए कि वह करुणा का दुरुपयोग न कर बैठे। सीज़र बोर्गिया को क्रूर माना जाता था; लेकिन उसकी इस क्रूरता ने ही रोमान्या का सुधार किया, एकता स्थापित की, शान्ति एवं व्यवस्था कायम की।

सोचने-समझने से महसूस होगा कि सीज़र मे फ्लारेंस के लोगो की अपेक्षा अधिक करुणा थी। फ्लारेंस के लोगो ने क्रूरता की कुख्याति से बचने के लिए, पिस्तोइया को नष्ट हो जाने दिया।[1] इसलिए जब तक शासकीय कार्यवाही से प्रजा की एकता और स्वामिभक्ति बनी रहती है, तब तक उसे क्रूरता-सम्बन्धी बदनामी से नही डरना चाहिए। अपने कठोर व्यवहार से दो-एक उदाहरण प्रस्तुत करके वह उन शासको की अपेक्षा अधिक कोमलहृदय सिद्ध होगा, जो करुणातिरेक के कारण हत्याओ तथा बलात्कारो से आपूरित अव्यवस्था फैलने देते हैं। इन हरकतो से सदैव समाज का नुकसान होता है, जबकि शासक के आदेश से किये गये प्राण-हरण का प्रभाव केवल व्यक्ति-विशेष पर पड़ता है।

सभी शासको मे से, नये शासक के लिए क्रूरता-सम्बन्धी बदनामी से बचना मुश्किल होता है, क्योकि नवविजित प्रदेश मे बहुतेरे खतरे मौजूद रहते हैं। वर्जिल ने दीदो के मुख से कहलवाया है :

---

१. पिस्तोइया फ्लारेंस का अधीनस्थ नगर राज्य था। १५०१-२ में जब दो स्थानीय गुटों में संघर्ष छिड़ गया तो फ्लारेंस के शासकों ने बलात् वहां पर [illegible] की। मैकियावेली को इस सारे संकट का निजी अनुभव था।

आवश्यकता से प्रेरित कटु यथार्थ और मेरे राज्य का नयापन,
मुझे यह सब करने
और सर्वत्र अपनी सीमाओ की रक्षा करने
के लिए बाध्य करता है।

[ऐनीड १,५६३]

फिर भी शासक को हर कार्यवाही धैर्यपूर्वक करनी चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि वह अपने साये से ही न डरने लगे। उसके व्यवहार का नियमन मानवीय करुणा तथा विवेक के बल पर होना चाहिए, जिससे बहुत अधिक आत्मविश्वास उसे जल्दबाज न बना दे और बहुत अधिक अविश्वास उसके अस्तित्व को ही असह्य न बना सके।

इससे यह सवाल उठता है कि प्रजा का प्यार पाना बेहतर है या उसके भय का विषय बनना ? अथवा इसकी उल्टी बात ठीक है ? उत्तर मे कहा जा सकता है कि शासक तो दोनो ही बातें चाहता है, लेकिन दोनो बातो को एक साथ मिलाना कठिन होता है। इसलिए यदि आप जनता को प्रीति और भय दोनो नही पा सकते, तो प्रजा के भय का ही विषय होना बेहतर है। लोगो के विषय मे एक बात सामान्य रूप से कही जा सकती है—वे कृतघ्न, अस्थिर-चित्त, झूठे और मक्कार होते हैं। वे खतरो से बचना चाहते हैं और धन के लोभी होते हैं। जब आप उनका भला करेंगे, तो वे आपके होगे, उस स्थिति मे वे लोग आपके लिए अपना खून बहा देंगे, अपनी जमीन-जायदाद का, जान तक का खतरा उठाने को तैयार हो जायेंगे। अपने बच्चो को कुर्बान कर देंगे; लेकिन तभी तक, जब तक कि खतरा दूर है; लेकिन जब खतरा सामने आयेगा, तो वे आपके विरोधी बन जायेंगे।

जो भी शासक वायदो पर पूर्णतया निर्भर करने लगता है और अन्य कोई सजगतामूलक कार्यवाही नही करता, वह अपनी बरबादी को अवश्यम्भावी बना रहा है। जो मैत्री महानता और उदार चेतना के बजाय धन की थैलियो से खरीदी जाती है, वह बहुत दिनो तक नही चलती और उसका लाभ कुछ नही होता। लोग जिसे प्यार करते हैं, उसे आघात पहुचाते हुए चिन्तित नहीं होते। जिससे डरते हैं, उसे चोट पहुचाते हुए घबराते है। प्यार का बन्धन ही ऐसा होता है कि लोग जब अपना लाभ देखते

हैं, तभी उसे भग कर देते हैं; लेकिन भय का बन्धन दण्ड के भय से मज़बूत होता रहता है और यह दण्ड सदैव प्रभावकारी होता है।

लेकिन शासक को, यदि वह प्रजा का प्यार नही पा सकता तो, अपना आतक उसी सीमा तक फैलाना चाहिए, जिस सीमा तक पहुचकर वह घृणा का पात्र न बन जाये। घृणा के अभाव मे भी भय की स्थापना हो सकती है और यदि शासक अपने शासितो तथा नागरिको की धन-सम्पत्ति एव उनकी स्त्रियो को अपने स्वामित्व अथवा भोग का विषय नही बनाता तो वह घृणा से सदैव बचा रह सकता है। इसके बावजूद, यदि कभी किसी का प्राणहरण आवश्यक हो जाता है, तो वह तभी करना चाहिए, जबकि उसका कुछ स्पष्ट कारण हो, औचित्य हो; लेकिन सबसे बढकर शासक को अन्य लोगो की सम्पत्ति के लोभ से बचना चाहिए, क्योकि लोग अपने पिता की मृत्यु की बात अपनी पैतृक सम्पत्ति के छिन जाने की बात की तुलना मे जल्दी भूल जाते हैं। किसी की सम्पत्ति छीन लेने का बहाना कभी भी खोजा जा सकता है और लूट-खसोट के बल पर जीने वाले शासक के लिए अन्यों की सम्पत्ति को हडपने के बहाने ढूढना सदा सम्भव रहता है। इसके विपरीत किसी के प्राणहरण का बहाना खोजना अपेक्षाकृत कठिन काम है और उन बहानो का निर्वाह और भी कठिन।

लेकिन जब शासक किसी विशाल सैन्य का नेतृत्व कर रहा हो और सैनिक अभियान पर हो तो उसे क्रूरता-सम्बन्धी अपनी ख्याति की चिन्ता नही करनी चाहिए; क्योकि इस प्रकार की धाक जमाये बगैर वह अपनी सेना को एकता के सूत्र मे बाधकर और अनुशासित नही रख सकेगा।

हन्नीबल की प्रशसनीय उपलब्धियो मे से एक यह भी है : यद्यपि उसने एक विशाल सेना की कमान सम्भाल रखी थी, जिसमे अगणित जातियो और धर्मों के लोग थे और यह सेना विदेशो में अभियान भी करती रही तब भी उस सेना मे कभी कोई मतभेद नही हुआ। चाहे व्यवस्था ठीक रही हो या गलत। न तो सेनाओ मे आपस मे कभी झगडा-झझट हुआ और न ही सेनापतियो के विरुद्ध विद्रोह। इस सारे ऐक्य, अनुशासन और सगठन का सारा श्रेय उसकी अमानवीय क्रूरता को है। उसके अन्य अगणित गुणों के साथ मिलकर इसी विशेषता ने उसे अपने सभी सैनिको के भय का

विषय एवं सम्मान का पात्र बनाया। यदि वह क्रूर न होता, तो उसके अन्य गुण व्यर्थ हो गए होते। इतिहासज्ञ ने, इस बात की ओर कोई ध्यान न देकर, एक ओर उसकी उपलब्धियों की प्रशंसा की है और उन उपलब्धियों की कारणरूपी इस विशेषता की निन्दा।

स्किपियो अपने युग का तथा तमाम ज्ञातव्य इतिहास का भी अद्वितीय व्यक्तित्व था। उसे देखकर यह सिद्ध किया जा सकता है कि (क्रूरता के बगैर) उसके अन्य गुण व्यर्थ हो गए होते। उसकी सेना ने स्पेन में उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया था और इसका एकमात्र कारण उसकी अतिरिक्त उदारता थी, जिससे उसके सैनिक आवश्यकता से अधिक आजाद होते चले गए। फेबियस मैक्सिमस ने सीनेट में उसकी इस उदारता के लिए निंदा की और उसे रोमन सेनाओं को भ्रष्ट करने के लिए उत्तरदायी ठहराया फिर जब स्किपियो के एक अफसर ने लोकरी को लूटा तो स्किपियो ने न तो अपने अफसरों को सन्तुष्ट किया और न ही इस अफसर को आज्ञा के उल्लघन के लिए दण्डित किया और यह सब सिर्फ इसीलिए हुआ कि वह स्वभाव से अत्यन्त उदार था।

कुछ सीनेटरों ने स्किपियो के व्यवहार का औचित्य सिद्ध करने के लिए बहस की और यह तर्क पेश किया कि कुछ लोग होते ही ऐसे हैं, जो स्वय तो गलतियाँ करने से बचे रह सकते हैं, मगर दूसरों की गलतियों को सुधार नहीं सकते, लेकिन यदि स्किपियो अपने सेनापतित्व काल में अपने इस उदार स्वभाव के अनुसार ही चलता रहता, तो उसकी कीर्ति और ख्याति समाप्त हो गई होती। जब वह सीनेट के आदेशानुसार कार्य करता रहा, तो उसका यह घातक गुण न केवल छिपा रहा, बल्कि उसके यश का भी कारण बना।

अतएव प्रजा के स्नेह का पात्र अथवा भय का विषय होने के इस सवाल को लेकर मैं इसी निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि बुद्धिमान शासक को उसी का भरोसा रखना चाहिए, जो उसके बस में हो, जो उसके बस में नहीं, उसका भरोसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि लोग प्यार तभी करते हैं, जब वे प्यार करना चाहते हैं, लेकिन डरते तब हैं, जबकि शासक उन्हें डराना चाहता है। जैसा कि मैंने पहले कहा था, उसे केवल घृणा का पात्र बनने से बचना चाहिए।

१८

शासक अपने वचन का पालन कैसे करे ?

इस बात को सभी महसूस करते हैं कि शासक के लिए अपने वचन का पालन करना और अपने व्यवहार मे कपटी होने की अपेक्षा स्पष्टवादी होना एक प्रशसनीय गुण है, फिर भी समकालीन इतिहास इस बात का गवाह है कि उन्ही शासको की उपलब्धिया महान् रही हैं, जिन्होने बडे ऊपरी मन से वचन दिए, जिन्हें प्रजाजनो को भुलावे मे डाले रखने की कला ज्ञात थी और जो अन्तत ईमानदारी से अपने सिद्धान्तो का पालन करने वाले लोगो पर विजयी हुए हैं।

इसलिए आपको यह बात भली-भाति समझ लेनी चाहिए कि सघर्ष के दो ही तरीके हैं एक विधि-विहित और दूसरा बल-प्रयोग का। पहला तरीका मानव स्वभाव के अनुकूल है और दूसरा पशुओ के लिए उचित; *लेकिन क्योंकि पहला तरीका अक्सर अपर्याप्त सिद्ध होता है, इसलिए* व्यक्ति को दूसरे तरीके का भी प्रयोग करने के लिए प्रस्तुत होना ही चाहिए। इस प्रकार शासक मे पशु और मानव, दोनो की प्रकृति के समुचित प्रयोग का विवेक होना चाहिए।

पुरातन लेखक शासको को यह बात एक रूपक के माध्यम से समझाया करते थे। एकिलीज तथा अन्य अनेक पुरातन युगीन शासको को अश्व-प्राण (Centaur) चिरॉन के पास लालन-पालन के लिए भेज दिया गया, जिससे कि वह उन्हे अपने ढग से प्रशिक्षण दे सके। इन महान् शासको के आदिगुरु का आधा शरीर मानव का और आधा पशु का दर्शाने से तात्पर्य यही है कि शासक को दोनो के स्वभाव के अनुसार व्यवहार करने मे

पारगत होना चाहिए, वरना उसका अस्तित्व भी खतरे मे पड जाएगा।

अब जब कि शासक को पाशविक व्यवहार भी सीखना ही पड़ता है उसे इसका प्रशिक्षण लोमडी और शेर से लेना चाहिए, क्योकि शेर बिछाए गए जाल के मुकाबले मे असहाय होता है एव लोमडी भेडियो के मुकाबले मे असहाय होती है। इसलिए फन्दों को पहचानने के लिए व्यक्ति को लोमडी होना चाहिए और भेडियो को डराकर भगाने के लिए सिंह। जो लोग केवल सिंहों की तरह व्यवहार करते हैं वच्च मूर्ख होते हैं।

इसलिए निष्कर्ष यही निकलता है कि कोई भी बुद्धिमान शासक किसी ऐसे वचन का निर्वाह नही कर सकता और न ही उसे करना चाहिए, जिससे उसे नुकसान होता हो और जब उस वचन को पूरा करने के बाध्य-कारी कारण समाप्त हो चुके हो। यदि सभी लोग भले होते तो यह उपदेश ठीक नहीं होता, लेकिन सामान्यत मनुष्य इतने नीच स्वभाव का प्राणी है कि वह आपके प्रति अपने वचन का निर्वाह नही करता। अतएव आपको भी उसके प्रति अपने वचन का पालन नही करना चाहिए और अपनी बदनीयती को मनभावन रगो मे रगने के लिए आवश्यक बहानो की कोई कमी कभी भी किसी शासक के पास नही हो सकती।

शासको द्वारा सन्धियो और समझौतो को अपनी बदनीयती द्वारा अवैध और अर्थहीन बनाए जाने के असख्य उदाहरण दिए जा सकते हैं। जो शासक लोमडी के स्वभाव को सफलतापूर्वक अपना लेते हैं, वे ही सबसे अच्छे रहते हैं, लेकिन फिर भी व्यक्ति को अपनी कार्यवाहियो को उपयुक्त रग मे प्रस्तुत करने की ओर झूठे एव मक्कार होने की कला का ज्ञाता होना चाहिए। मनुष्य मात्र इतना भोला, परिस्थितियो का ऐसा शिकार, होता है कि ठग को हमेशा कोई-न-कोई ऐसा प्राणी मिल जाएगा, जो ठगे जाने के लिए तैयार होगा।

एक ऐसा ताजा उदाहरण है जिसे मैं छोडना नही चाहता। अलेग्ज़ान्देर षष्ठ सदैव लोगो को ठगता रहता था और ठगने की ही बात सोचता रहता था। उसे अपनी ठगी के जाल मे फसने वाले लोग हमेशा मिल जाते थे। उससे अधिक प्रभावपूर्ण ढग से शपथ खाने वाला, और किसी बात की सच्चाई की कसम खाकर अड जाने वाला दूसरा कोई

आदमी नहीं था, फिर भी उसकी घोखाधडी सदैव वाछित फल ही देती थी, क्योकि वह इस कला मे पारगत था।

इसलिए मैंने ऊपर जिन गुणो की परिगणना की है, किसी शासक मे उन सब गुणो का होना जरूरी नही है; लेकिन शासक मे उन गुणो के होने का आभास जरूर होना चाहिए। मैं तो यहा तक कहना चाहता हू कि यदि उसमे ये गुण हो और वह उनके अनुसार व्यवहार करता हो, तो वह उन्हें विनाशकारी पाएगा। हा, वह इन गुणो का मुखौटा ही पहने हुए है, तो ये गुण उसके काम आएगे। उसे करुणहृदय, प्रतिज्ञा का पालन करने वाला, छल-छद्म से परे और समर्पित व्यक्तित्व का स्वामी नजर आना चाहिए और वस्तुत उसे ऐसा होना भी चाहिए, लेकिन उसके इस गुणाधार स्वभाव का सयोजन ऐसा होना चाहिए कि आवश्यकता पडने पर वह इन गुणो के विपरीत भी व्यवहार कर सके।

आपको यह बात जरूर समझ लेनी चाहिए कि कोई भी शासक, विशेषकर नया शासक, उन तमाम गुणो को अपना नही सकता, जिनके कारण उसके गुणवान् होने की प्रसिद्धि होती है, क्योकि अपने राज्यशासन को बनाए रखने के लिए उसे प्राय विश्वासघात करना पडता है। करुणा एव दयालुता का परित्याग करना पडता है, धर्म के विरुद्ध काम करना पडता है। इसलिए उसका स्वभाव लचीला होना चाहिए, जो परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार ढाला जा सके। जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, यदि हो सके तो उसे सत्यपथ से मुह नही मोडना चाहिए; लेकिन आवश्यकता पडने पर उसे कुपथ पर चलने मे भी सक्षम होना चाहिए।

तो एक शासक को इतना सजग होना चाहिए कि वह एक शब्द भी ऐसा न कहे जो मेरे द्वारा परिगणित पाचो गुणो से प्रेरित मालूम न हो। उसे देखने और सुनने वाले लोगो को यही लगना चाहिए कि वह करुण-हृदय, सज्जन, दृढ प्रतिज्ञ, ईमानदार, दयालु एव धर्मप्राण व्यक्ति है और इस अन्तिम गुण का मुखौटा पहनना सबसे ज्यादा जरूरी है। लोग प्राय हाथो से नही, आखो से चीज़ो की परख करते हैं। सभी लोग आपको देख तो सकते है, मगर आपके निकट सम्पर्क मे आने की सुविधा कुछेक लोगो को ही प्राप्त होती है। इसलिए हर व्यक्ति आपके मुखौटो [illegible]

सकता है, आपके यथार्थ स्वरूप को अनुभव करने वाले कुछेक ही लोग होते हैं और ये कुछेक लोग उन तमाम लोगों का निषेध या खण्डन करने का साहस नहीं कर सकते, जिन्हें सत्ता की सारी महत्ता का समर्थन प्राप्त है। जब किसी की शिकायत सुनने वाला कोई न्यायालय नहीं होता, तो लोगों की, विशेषकर शासकों की कार्यवाहियों की सार्थकता उनके परिणामों के ही आधार पर जांची जाती है। इसलिए शासक को अपना राज्य जीतने तथा अपना शासन बनाए रखने की दिशा में सक्रिय होना चाहिए तभी उसके तौर-तरीकों को सदैव सम्मानजनक समझा जाएगा और सर्वत्र उनकी प्रशंसा की जाएगी। जनसामान्य सदैव मुखौटों तथा परिणामों से प्रभावित होता है। इस सन्दर्भ में केवल जनसामान्य की ही चिन्ता की जा सकती है। राज्य द्वारा समर्थित इन बहुसंख्यकों के मुकाबले में अल्पसंख्यकों के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।

एक समकालीन शासक, जिसका नाम न लेना ही बेहतर होगा, शान्ति और सत्य के सिवाय और किसी बात का उपदेश नहीं देता।* और वह इन दोनों का कट्टर दुश्मन है। यदि वह इन दोनों गुणों में से किसी एक का भी आदर या व्यवहार करता तो अब तक कई बार अपनी साख और अपना राज्य खो चुका होता।

* एरागन के फर्डिनेण्ड से तात्पर्य है।

१६

अवहेलना और घृणा से बचने की आवश्यकता

परिगणित गुणो मे से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गुण की चर्चा करने के बाद, अब मैं अन्य गुणो की चर्चा सक्षेप मे करना चाहता हू। जैसा कि मैं पहले ही समझा चुका हू कि शासक को हर उस चीज से बचने के लिए कटिबद्ध रहना चाहिए, जो उसे (प्रजाजनो की) अवहेलना और घृणा का पात्र बना सकती है। जब तक वह ऐसा करता रहेगा, तब तक वह अपना कर्त्तव्य पूरा करता रहेगा और मेरे द्वारा परिगणित अन्य अवगुणा के लिए निन्दा का भागी होते हुए भी किसी प्रकार का खतरा नही उठाएगा। जैसा कि मैं कह चुका हूं, वह यदि अन्यो की सम्पत्ति के प्रति लोलुपता और आक्रमण का रुख अपनाएगा और अपने प्रजाजनो की स्त्रियो के प्रति लालची निगाहें उठाएगा तो सबसे ज्यादा घृणा का पात्र बनेगा। उसे इन अवगुणो से बचना चाहिए। जब तक वह अपने प्रजाजनो के अधिकाश की सम्पत्ति और सम्मान को नही लूटता, तब तक वे सन्तुष्ट रहते हैं। उस हालत मे उसे कुछेक लोगो की हलचलो से ही निपटना होता है और उनसे कई प्रकार से और बडी आसानी से निपटा जा सकता है।

यदि वह अस्थिर चित्त, ओछे स्वभाव का, स्त्रैण, कायर और सकल्प-हीन होने के नाते विख्यात है तो लोग उसकी अवहेलना करेंगे। शासक को इस प्रकार की ख्याति से ऐसे ही बचना चाहिए जैसे प्लेग की महामारी से बचा जाता है और उसे अपने व्यवहार मे गरिमा, साहस, सयम और सबलता का प्रदर्शन करना चाहिए। अपने शासितो के आपसी झगडो का निपटारा करते समय उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि उसका निर्णय अपरिवर्तनीय हो और उसके प्रति जनसामान्य की धारणा ऐसी होनी

चाहिए कि कोई व्यक्ति कभी उसको धोखा देने या छलने की कल्पना भी न कर सके।

जो शासक इस प्रकार की धारणा अपने विषय मे (जनसामान्य के मन मे) बैठा देता है, वह बहुत अधिक सम्मान का पात्र बन जाता है। अत्यधिक सम्मानित व्यक्ति के विरुद्ध षड्यन्त्र रचना अथवा खुला आक्रमण करना कठिन होता है।

शासक को दो चीजो से डरना चाहिए। शासितो द्वारा राज्य के भीतर की जाने वाली ध्वसात्मक कार्यवाही से और विदेशी शक्तियो द्वारा किए जाने वाले आक्रमण से। आक्रमण से बचने के लिए उसके पास अच्छी और समर्थ सेना का होना और अच्छे मित्रो का होना आवश्यक है और अगर उसके पास प्रबल सेना है तो उसके मित्र सदैव अच्छे होगे। यदि विदेशी शक्तियो के साथ सम्बन्ध अच्छे होगे तो राज्य के घरेलू मामले भी सुचारु रूप से चलते रहेंगे यदि वे पहले ही षड्यन्त्र द्वारा खराब न कर दिए गए हो।

यदि किसी शासक ने मेरी राय के अनुसार जीवन-यापन किया है और उसी के अनुकूल अपने प्रशासन की व्यवस्था की है और अगर वह स्वय ही घुटने नही टेक देता है, तो विदेश मे अराजकता फैलने पर भी वह अपने राज्य के विरुद्ध किए गए हर हमले का मुकाबला कर सकेगा। ठीक वैसे ही, जैसे स्पार्टा के नेबिस ने किया था। अब जहा तक उसके प्रजाजनो का सवाल है, विदेशो मे किसी प्रकार की गडबडी न होने पर शासक को सबसे अधिक चिन्ता अपने विरुद्ध किए जाने वाले गुप्त षड्यन्त्रो की होनी चाहिए। यदि वह घृणा का पात्र बनने से बचा रहता है और जनता को सन्तुष्ट रखता है तो वह षड्यन्त्रो से भी अपने-आप को बचा सकता है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, यह नितान्त आवश्यक है।

आन्तरिक षड्यन्त्रो के विरुद्ध शासक द्वारा की जाने वाली किले-बन्दियो मे सबसे सशक्त व्यवस्था यही हो सकती है कि शासक जनता की घृणा से बचे। ऐसा इसलिए कि षड्यन्त्रकारी सदैव यही समझता है कि वह शासक की हत्या करके प्रजा को सन्तुष्ट कर रहा है, लेकिन यदि उसे यह ध्यान हो कि इससे प्रजा का क्रोध उमड पड़ेगा, तो वह कभी भी अपनी

योजना को कार्यान्वित नही कर सकेगा, क्योंकि षड्यन्त्रकारी के मार्ग मे असख्य बाधाए हुआ करती हैं। अनुभव से यह सिद्ध होता है कि षड्यन्त्र तो कई रचे जाते हैं, मगर उनमे लक्ष्य प्राप्ति मे सफल कुछेक ही होते हैं। इसका कारण यह है कि षड्यन्त्रकारी को अन्य कई लोगो की भी सहायता अपेक्षित होती है और सहायक वही लोग हो सकते हैं, जो उसकी धारणा के अनुसार, असन्तुष्ट होते हैं, लेकिन जैसे ही वह (षड्यन्त्रकारी) किसी असन्तुष्ट व्यक्ति के सामने अपने मन की बात कहता है, उसे (असन्तुष्ट व्यक्ति को) तुष्टि का साधन मिल जाता है, क्योंकि असन्तुष्ट व्यक्ति को यह विश्वास हो जाता है कि अब वह अपनी सारी जानकारी के बल पर अपने मन की मुरादें पूरी कर सकता है।

यह देखते हुए कि सूचना मात्र शासक को देकर काफी लाभ उठाया जा सकता है, जबकि दूसरा (षड्यन्त्रकारी के द्वारा प्रस्तावित) विकल्प अत्यन्त खतरनाक एव सफलता की दृष्टि से सन्दिग्ध है कोई असाधारण मित्र अथवा शासक का नितान्त निर्मम एव कट्टर शत्रु ही आपका साथ (षड्यन्त्र के कार्यान्वयन मे) देगा।

सक्षेप मे कहू तो यह कि षड्यन्त्रकारी के पक्ष मे भय, ईर्ष्या और दण्डित होने की विकराल सम्भावना होती है। शासक के पक्ष मे प्रशासन की गरिमा, कानून के बन्धन, उसके मित्रो के साधन और शासन के सभी स्रोत उसकी रक्षा के लिए तैनात होते हैं। इस सबमे प्रजा की सद्भावना भी मिला दीजिए, तो शासक के विरुद्ध षड्यन्त्र करने की बात ही अचिन्तनीय हो उठती है, क्योंकि जहा सामान्य स्थिति मे षड्यन्त्रकारी को षड्यन्त्र की सफलता से पहले ही दण्ड का भय होता है, वहा इस स्थिति मे उसे सफलता के बाद भी दण्ड का भय होता है, क्योंकि प्रजा भी उसी की विरोधी होती है। वह अपना अपराध कर बैठेगा और प्रजा के आक्रोश के कारण कहीं शरण नही पा सकेगा।

मैं इसके असख्य उदाहरण प्रस्तुत कर सकता हू, लेकिन केवल एक ही दृष्टान्त देकर मैं सन्तुष्ट हो जाऊगा। घटना हमसे एकाध ही पीढी पहले की है। कैनेश्ची ने बोलोना के शासक, वर्तमान एन्नीबेल के पितामह एन्नीबेल बेन्तिवोग्ली के विरुद्ध षड्यन्त्र किया और उनकी हत्या कर दी।

उनका उत्तराधिकारी केवल गियोवानी बच रहा, जो अभी नवजात शिशु ही था। इस हत्याकाण्ड के तुरन्त बाद प्रजा ने जोश खाया और कैन्नेश्ची वंश का सफाया कर दिया। जनता के इस आक्रोश के पीछे उस समय बेन्तिवोग्ली घराने के लिए व्याप्त सद्भावना का ही बल था, यह सद्भावना इतनी अधिक थी कि एन्नीबेल के देहावसान के बाद, बोलोना में उस परिवार का एक भी सदस्य ऐसा नहीं बचा जो गद्दी संभाल सके। बोलोना के नागरिक एक ऐसे व्यक्ति की खोज में फ्लारेंस गये, जिसके बारे में सुना गया था कि वह अभी तक एक लोहार का पुत्र समझा जाता है, लेकिन वास्तव में बेन्तिवोग्ली है। उन्होंने नगर का शासन उसे सौंप दिया और वह व्यक्ति उस दिन तक शासन करता रहा, जिस दिन तक गियोवानी स्वयं गद्दी सम्हालने लायक नहीं हो गया।

इसलिए मैं तो इसी निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि यदि शासक को प्रजा की सद्भावना प्राप्त हो तो उसे षड्यन्त्रों की चिन्ता नहीं करनी चाहिए, लेकिन अगर प्रजा उसके विरुद्ध हो और उससे घृणा करती हो तो उसे हर व्यक्ति से, हर चीज से डरना चाहिए। सुसंगठित राज्य एवं बुद्धिमान शासक हमेशा यही कोशिश करते हैं कि उनके सामन्त उनसे भड़कें नहीं और प्रजा उनसे सन्तुष्ट एवं प्रसन्न रहे। किसी भी शासक के समक्ष यह सर्वोपरि कर्त्तव्य होना चाहिए।

हमारे अपने युग के सुसंगठित एवं सुशासित राज्यों में से एक फ्रांस है। उसमें अगणित अमूल्य परंपराएं हैं, जिनपर शासन की स्वायत्तता और सुरक्षा निर्भर करती है। इनमें से सर्व प्रथम है—संसद और उसकी सत्ता। फ्रांसीसी साम्राज्य के संस्थापक ने शक्तिसम्पन्नों की महत्त्वाकांक्षा और अविनय को ध्यान में रखते हुए, उनके मुंह में हड्डी देकर उन्हें नियन्त्रण में रखना जरूरी समझा। दूसरी ओर वह प्रजाजनों को भी आश्वस्त रखना चाहता था जो सामन्तों से डरते एवं उनसे घृणा करते थे। वह शासक की हैसियत से इस सारी कटुता का दायित्व अपने ऊपर नहीं लेना चाहता था, क्योंकि वह न तो सामन्तों के साथ पक्षपात के लिए प्रजा की नज़रों में खटकना चाहता था और न ही प्रजा के साथ दयालुता बरतने के लिए सामन्तों की धृष्टता का शिकार होना चाहता था।

इसलिए उसने सामन्तो के दमन एव दीनो के साथ पक्षपात करने के लिए एक स्वतन्त्र अभिकरण स्थापित कर दिया, जो दोनो के बीच मे शासक को लाये ही नहीं। इससे अच्छी और इससे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण कोई परम्परा हो ही नही सक्ती थी, जो राज्य को भी सुरक्षित रख सके और राजा को भी।

इसी से एक और महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाला जा सकता है। वह यह कि शासको को तमाम अप्रिय कानूनों तथा निर्णयो का क्रियान्वयन दूसरो के हाथों मे सौंप देना चाहिए और उपकार करने के साधन अपने हाथ मे रखने चाहिए। मैं फिर कहता हू कि शासक को सामन्तो का सम्मान करना चाहिए। लेकिन प्रजाजनो की घृणा भी नही अर्जित करनी चाहिए।

रोमन सम्राटो के जीवन-मरण की परिस्थितियो के कई एक अध्येता शायद यह सोच लें कि इन सम्राटो के कृतित्व से ही मेरे कथन का खण्डन हो जाता है। कुछेक शासक जो निरन्तर शुद्धतावादी जीवन बिताते रहे हैं और जिनमे चरित्रबल भी बहुत था, इन गुणों के बावजूद, अपदस्थ कर दिए गए अथवा इनमे से कई एक को तो उन्ही के अपने अनुचरो ने षड्यन्त्र करके मार डाला।

मैं इन आपत्तियो का उत्तर देने के लिए, इनमे से कुछेक सम्राटो के चरित्रो को चर्चा का विषय बनाऊगा और यह सिद्ध करूगा कि उनके पतन के भी कारण वही थे जो मैंने गिनाए हैं। मैं उदाहरण भी ऐसे ही प्रस्तुत करूगा जो इस युग के अध्येताओ के सुपरिचित हैं। मैं अपनी परिगणना और विवेचन को उन्ही सम्राटो तक सीमित रखूगा जो दार्शनिक मार्कस से लेकर मैक्सिमाइनस तक के दौर मे गद्दी पर बैठे थे। ये शासक थे—मार्कस आरेलियस, उसका बेटा कॉमोडस, पर्टिनैक्स, जूलियन, सेवेरस, उसका बेटा कैराकाला, मैक्रिनस, हेलियोगेबालस, अलेग्जान्देर, और मैक्सिमाइनस।*

* इन शासकों के मैकियावेली द्वारा प्रस्तुत जीवन वृत्तान्त हेरोडियन लिखित मार्कस आरेलियस के देहान्त से गोर्डियन तृतीय के सत्तारूढ़ होने तक के रोमन साम्राज्य के इतिहास पर आधारित है। यहा वर्णित अनेक घटनाए हेरोडियन के जीवन काल में ही घटित हुई थीं। मैकियावेली ने निश्चय ही हेरोडियन लिखित इतिहास के १४९३ ई० मे कवि और लारेंजो द मेडिची के मित्र पोलिज़ियानो द्वारा प्रकाशित लातीनी अनुवाद का प्रयोग किया होगा। मूल कृति यूनानी भाषा में लिखी गई थी।

यहा ध्यान देने की बात यह है कि जहां अन्य शासको को सामन्तो की महत्त्वाकाक्षा और प्रजाजनो की अविनय से निबटना पडता है, वहा रोमन सम्राटो को एक तीसरी कठिनाई का भी सामना करना पडा। उन्हे अपने सिपाहियो की क्रूरता और लोलुपता से भी निबटना होता था।

यह एक कठिन काम था और इसी के कारण कइयो का पतन भी हुआ क्योकि प्रजाजनो और सिपाहियो को एक साथ सन्तुष्ट करना कठिन था। प्रजाजन शान्तिप्रिय होते थे, अतएव ऐसे ही शासक को पसन्द करते थे, जो नित्य नये बखेडे खडे न करता रहे। सिपाही युद्धप्रिय शासक को ही प्यार करते थे, क्योकि वह दुस्साहसी, क्रूर और लूट-पाट का शौकीन होता था। सिपाही चाहते थे कि शासक प्रजाजनो पर इन अवगुणो से युक्त व्यवहार करे, जिससे उन्हे अधिक वेतन मिल सके और वे स्वय अपनी लोलुपता और क्रूरता का खुलकर उपयोग कर सकें। परिणामत वे सम्राट्, जिनमे सिपाहियो एव प्रजाजनो को एक साथ नियन्त्रण मे रखने के लिए आवश्यक स्वाभाविक अधिकार और साख नही होती थी, मुसीबत में पड जाते थे। इनम से अधिकाश, विशेषकर नये-नये सत्ताधारी, जब इन दोनो परस्पर विरोधी तत्त्वो को सन्तुष्ट करने की आवश्यकता महसूस करते थे, तो प्राय सिपाहियो को रिझाते रहते थे और प्रजाजनों को आघात पहुचाने मे नही झिझकते थे।

यह नीति उनके लिए आवश्यक थी। शासक किसी न किसी वर्ग की घृणा के पात्र बन ही जाते हैं, इसलिए उनकी पहली चेष्टा यही होती है कि वे एक साथ सभी वर्गों के सभी लोगो की घृणा के पात्र न बन जाए। जब सभी वर्गों की सामूहिक घृणा से बचना असम्भव नज़र आता है, तो वे सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न वर्गों की घृणा से बचने की हर सम्भव चेष्टा करते हैं। इसलिए वे शासक, जो नये होने के कारण असाधारण सहायता-समर्थन के आकाक्षी होते थे प्रजाजनों की अपेक्षा अपने सिपाहियो का साथ देने के लिए आसानी स तैयार हो जाते थे। इसके बावजूद, चाहे वे सैनिको की नजर मे अपनी साख जमाए रखने की कला नही जानते थे, उन्हें इस नीति से लाभ ही हुआ।

अतएव, उल्लिखित कारणो से हुआ यह कि मार्कस आरेलियस, पर्टि-नेक्स और अलेग्ज़ान्देर जो सबके सब बिना झगडे-झंझट के जीवनयापन करते रहे, जो न्याय प्रिय थे, क्रूरता से घृणा करते थे, करुणामय और शिष्ट स्वभाव वाले थे, सभी का अन्त दुखद ही हुआ। इनमें से एकमात्र अपवाद मार्कस था, जो अपने जीवनकाल मे और उसके बाद भी सम्मान का पात्र बना रहा, क्योकि राज्य उसे उत्तराधिकार मे मिला था। उसके लिए उसे न अपने सिपाहियो का आभार मानने की आवश्यकता थी और न ही प्रजाजनो के सामने झुकने की।

मार्कस एक व्यक्ति की हैसियत से कई गुणो का भण्डार था और इन गुणो के कारण वह सभी के सम्मान का पात्र बन गया था, इसलिए वह आजीवन सैनिको तथा अपने प्रजाजनो को सफलतापूर्वक नियन्त्रण मे रख सका। उसे कभी किसी की घृणा अथवा अवहेलना नही भोगनी पडी।

लेकिन पर्टिनेक्स अपने शासनकाल के प्रारम्भ मे सकट मे पड गया। उसे सिपाहियो की इच्छा के विपरीत सम्राट् बनाया गया था। ये सिपाही कामोडस के नेतृत्व मे स्वच्छन्द जीवन बिताने के आदी हो चुके थे, इस-लिए पर्टिनेक्स ने उनके ऊपर जो शिष्टता का बोझ डालना चाहा, उसे वे बरदाश्त नही कर सके। इसलिए सम्राट् स्वय उनकी घृणा का पात्र बन गया और अपने बुढापे के कारण उनकी अवहेलना का शिकार भी।

और यहा इस बात की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि बुरे कामो से ही नही अच्छे कामो के कारण भी लोगो की घृणा का पात्र बन सकता था। इसलिए जैसा कि मैं कह चुका हू अपना शासन बनाए रखने का इच्छक शासक बुराई करने के लिए विवश हो जाता है, क्योकि जब शासन की निरन्तरता का आधार बनने वाले लोग भ्रष्ट होते हैं—चाहे वे प्रजाजनो हों, सिपाही हो अथवा सामन्त गण—तो शासक को भी भ्रष्टाचार के ही तरीको मे उन्हे सन्तुष्ट करना पडता है। और उस अवस्था मे सत्कार्य आपके शत्रु होते हैं।

आइये, अलेग्ज़ान्देर को ले लें। उसे कई बातो का श्रेय दिया जाता है। कहा जाता है कि वह इतना अच्छा व्यक्ति था कि उसने अपने १४ वर्ष

के शासनकाल में कभी भी किसी व्यक्ति को मुकदमा चलाये बगैर फांसी पर नही चढाया। इसके बावजूद वह प्रजा की अवहेलना का शिकार हो गया। उसकी सेनाओ ने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र किया और उसे मार डाला क्योंकि उसे स्त्रैण समझा जाता था, क्योंकि वह अपनी मा की आज्ञानुसार शासनकार्य करता था।

इसके विरोधाभास के रूप मे कामोडस, सेवेरस, एन्तोनिनस कैराकाला और मैक्सिमाइनस की चर्चा की जाये, तो आप पायेंगे कि वे लोग चरम कोटि के लोलुप और क्रूर शासक थे। ऐसा कोई कुकर्म नही है जो उन्होंने अपने सैनिको को प्रसन्न करने के लिए अपनी प्रजा के विरुद्ध नही किया और सेवेरस के अतिरिक्त इन सभी शासको का अन्त दु खद हुआ। सेवेरस इतना पराक्रमी शासक था कि सनिको की मैत्री बनाये रखकर भी, और जनता पर कठोर शासन करता हुआ भी वह अन्त तक सफलतापूर्वक सत्ता-रूढ रहा। ऐसा इसलिए हुआ कि उसके सैनिक उसके पराक्रम से इतने प्रभावित थे और प्रजा इतनी आतकित थी कि सैनिक उसके प्रति आदर से आपूरित और सन्तुष्ट रहते थे और प्रजाजन आश्चर्यचकित एव किंकर्त्तव्य-विमूढ होकर रह जाते थे।

इसका कारण यह था कि नये शासक की हैसियत से सेवेरस की उपलब्धिया सचमुच असाधारण एव चकाचौंध करने वाली थी। मैं यह दिखाना चाहता हू कि वह लोमडी तथा सिंह दोनो की भूमिकाए निभाने की कला मे पारगत था और जैसा कि मैं कह चुका हू, नये शासक को इन दोनो के स्वभाव का अनुकरण करने योग्य होना चाहिए।

सेवेरस सम्राट् जूलियन के आलसी स्वभाव से परिचित था। स्लावोनिया मे अपने अधीन काम करने वाली सेनाओ को उसने रोम पर धावा बोलने के लिए और पर्टिनेक्स का बदला लेने के लिए तैयार कर लिया। पर्टिनेक्स को प्रीटोरियाई गारद के जवानो ने मौत के घाट उतारा था। इसी प्रतिशोध का बहाना लेकर और सम्राट् बनने की अपनी महत्त्वाकाक्षा का कोई भी सकेत दिए बगैर, उसने सेना को रोम की ओर कूच करा दिया और अभी इटली वालो को उसके कूच का पता भी नही चला था कि वह वहा जा पहुचा। उसको सिर पर आया देखकर सीनेट के भयाक्रान्त सदस्यो

ने उसे सम्राट्-पद के लिए चुन लिया और जूलियन की हत्या कर दी।

इस शुरुआत के बाद, पूरे राज्य का स्वामी बनने के लिए उसके मार्ग मे दो बाधाए रह गयी। एक बाधा एशिया मे थी, जहा एशियाटिक सेना के कमाण्डर पेसेनियस नाइजर ने स्वय को सम्राट् घोषित कर दिया था। दूसरी बाधा पश्चिम मे थी, जहा अल्बिनस सम्राट् बनने की अभिलाषा सजोये बैठा था। दोनो को एक साथ शत्रु बना लेना खतरनाक था—इसी बात को समझते हुए सेवेरस ने अल्बिनस को धोखा देने और नाइजर पर आक्रमण करने का फैसला कर लिया। उसने अल्बिनस को लिखा कि यद्यपि सीनेट ने उसे सम्राट् चुना है, फिर भी वह इस सम्मान म उसे साझी-दार बनाना चाहता है। उसने अल्बिनस को 'सीज़र' का सम्मान प्रेषित किया और, सीनेट मे प्रस्ताव पारित करवाकर उसे सह-सम्राट् बना दिया। अल्बिनस इस धोखे मे आ गया।

लेकिन जैसे ही एक बार सेवेरस ने नाइजर को पराजित करके उसकी हत्या कर दी और पूर्वी क्षेत्रों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया, वह रोम की ओर पलटा। वहा पहुचकर उसने सीनेट मे शिकायत की कि अल्बिनस ने उसके प्रति कृतघ्नता का बरताव किया है और उसको धोखे से मार डालने का षड्यन्त्र किया है। सेवेरस ने कहा कि इसी कुचेष्टा के कारण उस पर सैनिक अभियान करना और अल्बिनस को उसकी कृतघ्नता का दण्ड देना ज़रूरी हो गया है। इसके बाद उसने फ्रास मे उस पर धावा बोल दिया और उसका राज्य ही नही, उसके प्राण भी ले लिये।

सेवेरस के कृत्यो का सावधानी से अध्ययन करने वाला हर व्यक्ति यह पायेगा कि एक ओर उसमे क्रुद्ध सिंह की-सी विशेताए थी और दूसरी ओर चतुर लोमडी जैसे गुण और यह भी कि सभी लोग उसका सम्मान करते थे, सभी लोग उससे प्यार भी करते थे, जबकि उसके सिपाही उससे घृणा नही करते थे। अब यदि एक नौसिखिया शासक सेवेरस जितनी बडी सत्ता का नियन्त्रण और निर्वाह करने की योग्यता रखता है, तो यह कोई चमत्कारिक उपलब्धि नही मानी जानी चाहिए। कारण यह था कि एक ओर उसकी लूट-पाट ने प्रजा के मन मे उसके प्रति जो घृणा पैदा कर रखी थी, उससे उसकी रक्षा वह व्यापक प्रतिष्ठा करती रही, जो उसके प्रति

अधिक मन में व्यापा था।

उसका बेटा एन्तोनिनस कैराकाला भी अत्यन्त गुणवान व्यक्ति था। उसके गुणों से प्रजा चमत्कृत थी और सैनिक उससे प्यार करते थे। स्वभावत वह सैनिक था, कठोर परिश्रम कर सकता था और किसी प्रकार का भी कोमल व्यवहार उसे नापसन्द था—चाहे वह भोजन कर रहा हो अथवा सरकारी काम-काज मे लगा हो। इसी कारण से उसके सैनिक स्वभावत उस पर समर्पित थे। इसके बावजूद उसकी भयावह एव अपूर्व विकरालता एव क्रूरता के कारण (असख्य व्यक्तियो की हत्या के अतिरिक्त, बहुसख्य रोमनो तथा सिकन्दरिया के तमाम नागरिको को भी उसने मौत के घाट उतारा था) सर्वत्र सभी लोग उससे घृणा करने लगे थे। उसके निकटतम सहयोगी और कर्मचारी भी उससे भयभीत रहने लगे। परिणामत उसी के सैनिको ने उसे एक बार घेर लिया और एक सेंचुरियन ने उसकी हत्या कर दी।

यहा ध्यान देने की बात यह है कि यदि कोई उन्मत्त कट्टरपन्थी व्यक्ति शासक की हत्या का प्रयास करता है तो उसकी मार से कोई शासक नही बच सकता, क्योकि जो व्यक्ति स्वय मृत्यु से नही डरता, वह कुछ भी कर सकता है। वह शासक को भी मार सकता है, लेकिन किसी भी शासक को इस सम्भावना से डरने की अधिक आवश्यकता नही है, क्योकि ऐसी हत्याए बहुत कम होती हैं, फिर भी शासक को सदैव यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी ऐसे व्यक्ति को किसी प्रकार का गम्भीर आघात या हानि न पहुचाये, जो राज-काज के सिलसिले मे उसके निकट ही बना रहता हो। एन्तोनिनस से इसी नुक्ते पर भूल हो गयी। जिस सेंचुरियन ने उसकी हत्या की, एन्तोनिनस ने उसके भाई को अपमानित एव लाछित करके मौत के घाट उतारा था। उसके बाद वह इस सेंचुरियन को लगातार धमकिया देता रहा और इसे अपने अगरक्षक दस्ते मे भी बनाये रहा। इस प्रकार के अविवेकपूर्ण व्यवहार का परिणाम उसके लिए सकट का ही कारण बन *सकता था और अन्तत ऐसा ही हुआ भी।*

लेकिन आइये, कामोडस की ओर बढ़ें। साम्राज्य का शासन चलाना उसके लिए एकदम आसान था, क्योकि मार्कस आरेलियस का बेटा होने के

नाते साम्राज्य उसे विरासत मे मिला था। उसे केवल अपने पिता के पद-चिह्नो पर चलने की आवश्यकता थी। इतने-भर से वह अपने सैनिको एव प्रजाजनो को सन्तुष्ट रख सकता था, लेकिन वह क्रूर और पाशविक प्रवृति का स्वामी था। अतएव जनता को लूटने-खसोटने के लिए उसने सिपाहियों को रिझाना शुरू किया। सिपाही इससे दुराचारी और व्यसनी हो गए। दूसरी ओर वह अपनी मर्यादा और गरिमा को ही भूल बैठा। वह प्राय: मल्लो और तलवारबाजो से लडने के लिए अखाडे मे उतर आया था और अपनी राजकीय मर्यादा के विरुद्ध अन्य भी कई काम करता था। परिणामत सिपाही उसकी उपेक्षा करने लगे। इसलिए एक ओर प्रजा उससे घृणा करती थी, दूसरी ओर सिपाही उसकी अवहेलना करने लगे थे। अन्तत वह एक ऐसे षड्यन्त्र का शिकार हुआ, जो उसके प्राण ले बैठा।

अब हमे मैक्सिमाइनस के चरित्र का अध्ययन करना है। वह बडा युद्ध-प्रिय व्यक्ति था और अलेग्जान्देर की स्त्रैणता से तग आए हुए सिपाहियो ने उसे अलेग्जान्देर की मृत्यु के बाद सम्राट् पद के लिए चुन लिया। वह बहुत दिनो तक शासन नही कर सका, क्योकि उसकी दो हरकतें उसे लोगो की घृणा और अवहेलना का पात्र बना गयी। पहली बात यह कि वह बडे निम्न वश का था। किसी जमाने मे थ्रेस मे वह गडरिया रह चुका था और हर व्यक्ति को यह बात पता थी। अतएव वह सबकी नजरो से गिर गया। दूसरे यह कि सिंहासनारूढ होते ही उसने रोम जाकर स्वय को सम्राट् घोषित कराने की औपचारिकता की उपेक्षा कर दी, फिर अपने राज्याधिकारियों के माध्यम से उसने रोम मे तथा साम्राज्य के अन्य अनेक हिस्सो मे अनेक प्रकार के अत्याचार करवाये। अत जनता उसे बर्बर समझने लगी।

इस प्रकार उसके निम्न वशी होने के कारण सर्वत्र उसके प्रति विकराल आक्रोश फैल गया और उसकी क्रूरता के भय के परिणामस्वरूप लोग उससे घृणा करने लगे। सबसे पहले अफ्रीका मे विद्रोह हुआ और फिर रोम के नागरिको की मदद पाकर सीनेट ने विद्रोह कर दिया। पूरे इटली मे उसके विरुद्ध षड्यन्त्र होने लगे। इस षड्यन्त्र मे उसके अपने सैनिक शामिल हो गए। ये सैनिक एक्विलेया पर घेरा डाले हुए थे। मगर उस नगर-दुर्ग पर अधिकार पाना उन्हे असम्भव लग रहा था। अन्तत सम्राट् की क्रूरता से

तंग आकर वे उसी पर पलट पड़े। जब उन्होंने देखा कि सम्राट के अनेकों शत्रु बन चुके हैं, उनके मन से उसका भय और आतंक जाता रहा और उन्होंने उसकी हत्या कर डाली।

मैं हेलियोगे बालस अथवा मैक्सिमस अथवा जूलियन की चर्चा नहीं करना चाहता, क्योंकि वे सभी की व्यापक घृणा के पात्र थे। अतएव बहुत दिनों तक शासन नहीं कर सके। इसके विपरीत मैं यही कहकर अपना वक्तव्य समाप्त करूंगा कि हमारे समकालीन शासकों को सिपाहियों को तुष्ट करने के लिए की जाने वाली असाधारण और कष्टकर कार्यवाहियों का झंझट इतना नहीं करना पड़ता। उन्हें सिपाहियों का कुछ तो ध्यान रखना ही पड़ता है, लेकिन इसके बावजूद यह समस्या जल्दी ही निपट जाती है, क्योंकि आधुनिक शासकों के पास रोमन साम्राज्य की सेनाओं की तरह से गठित स्थायी सेनाएं नहीं होतीं, जो विजित प्रदेशों के प्रशासन एवं सरकार का स्थायी अंग बन चुकी हों। इसलिए यदि रोमन काल में प्रजाजनों की अपेक्षा सैनिकों की मांगें पूरी करना आवश्यक होता था, तो केवल इसी-लिए कि प्रजाजनों की अपेक्षा सैनिकों के हाथों में अधिक अधिकार होते थे।

हमारे अपने युग में तुर्क सम्राट् एवं सुलतान* के अतिरिक्त हर शासक के लिए सिपाहियों की अपेक्षा प्रजाजनों को तुष्ट करना आवश्यक है, क्योंकि नागरिकों के हाथों में अधिक अधिकार हैं। मैंने तुर्क सम्राट् को अपवादस्वरूप प्रस्तुत किया है, क्योंकि उसके पास स्थायी तौर पर बारह हज़ार सिपाहियों का तोपखाना और पन्द्रह हज़ार घुड़सवार सेना रहती है और यह विशाल सेना उसके साम्राज्य की सुरक्षा तथा सुदृढ़ता के लिए आवश्यक है। इसलिए उसे इन सैनिकों की वफ़ादारी के अलावा हर दूसरी बात की उपेक्षा करनी पड़ती है। इसी प्रकार सुलतान का भी शासन उसके सैनिकों के अधिकार में है। अतएव प्रजा की परवाह न करते हुए भी उसे सैनिकों की वफ़ादारी की चिन्ता करनी पड़ती है।

---

* मैकियावेली के युग में तुर्क सम्राट् था सलीम प्रथम और सुलतान से उसका अभिप्राय मिस्र के शासक से है।

आपको इस बात की ओर ध्यान देना चाहिए कि सुलतान का राज्य अन्य तमाम राज्यों से कुछ भिन्न है। वह बहुत कुछ पोप के साम्राज्य की तरह है। न तो उसे उत्तराधिकारी साम्राज्य कहा जा सकता है और न ही निजी सम्पत्ति। यहां भूतपूर्व शासक की सन्तान को सिंहासनारूढ़ नहीं कराया जाता, बल्कि अधिकारसम्पन्न व्यक्तियों द्वारा निर्वाचित व्यक्ति ही सम्राट् बनता है। यह व्यवस्था बहुत पुरानी है। अतएव इसे नवोदित राज्य नहीं कहा जा सकता। यहां नए राज्यों के सामने आने वाली सामान्य कठिनाइयां कभी खड़ी नहीं होतीं। यद्यपि शासक नया होता है, राज्य की परम्पराएं पुरानी होती हैं और उनकी रचना ही इस प्रकार से की गई है कि नवनिर्वाचित शासक को उत्तराधिकारी सम्राट् की तरह से स्वीकार किया जा सकता है।

लेकिन आइए, हम अपने मूल विषय की ओर लौटें। मेरा कहना यह है कि मेरी बात को समझने वाला हर व्यक्ति यह महसूस करेगा कि उल्लिखित सम्राटों का पतन या तो घृणा के कारण हुआ या अवहेलना के कारण। वह व्यक्ति यह भी समझ सकेगा कि अलग-अलग रास्ते अपनाते हुए भी इन शासकों में से एक का अन्त सुखद हुआ और अन्य सभी का दुखद। नये-नये शासक होने के नाते, पर्टिनेक्स और आलेग्ज़ान्देर के लिए मार्कस आरेलियस की नकल करने की चेष्टा बेकार और विनाशकारी थी, क्योंकि मार्कस आरेलियस उत्तराधिकार के अन्तर्गत शासनारूढ़ हुआ था। इसी प्रकार कैराकाला, कामोडस और मैक्सिमाइनस आदि के लिए सेवेरस की नकल करना घातक सिद्ध हुआ, क्योंकि उसका अनुकरण करने के लिए आवश्यक पराक्रम उनके व्यक्तित्व में नहीं था।

इसलिए किसी नये राज्य में सत्तारूढ़ होने वाला नया शासक न तो मार्कस आरेलियस का अनुकरण कर सकता है और न ही सेवेरस के पद-चिह्नों पर चल सकता है, बल्कि उसे सेवेरस के चरित्र से वही विशेषताएं ग्रहण करनी चाहिए, जो उसके राज्य की स्थापना के लिए आवश्यक हों और मार्कस आरेलियस के चरित्र से वे गुण अपनाने चाहिए, जो उसके शासन को बनाए रखने के लिए सहायक हो सकें और जो राज्य को दृढ़ता-पूर्वक स्थापित करने के बाद उसकी कीर्ति का विस्तार करें।

२०

दुर्ग तथा अन्य सुरक्षा-उपकरणों की उपयोगिता

अपने राज्यों पर अधिकार बनाए रखने लिए कुछेक शासक अपने शासितो को नि शस्त्र कर देते हैं, कुछ अपने शासित नगरों को बाट देते हैं, कुछ शासक जान-बूझकर अपने प्रति शत्रुता का वातावरण पैदा करते हैं, कुछ अन्य शासक उन लोगो का मन जीतने का प्रयास करते हैं, जो प्रारम्भिक स्तर पर सन्दिग्ध रहे हैं, कुछ शासक दुर्ग बनवाते हैं और कुछ शासक उन्हें मटियामेट कर देते हैं।

इनमे से किसी भी नीति पर कोई निर्णायक टिप्पणी करना असम्भव है। जिन राज्यों में ये विशिष्ट नीतिया अपनायी गई हैं उनकी विशिष्ट परिस्थितियों का अध्ययन करने के बाद ही कुछ कहा जा सकता है, फिर भी मैं यथासम्भव साधारण तौर पर इस विषय पर चर्चा करूगा।

कभी भी किसी नये शासक ने अपने शासितो को नि शस्त्र नही किया है, बल्कि कई बार नि शस्त्र शासितो को शस्त्र दिए गए हैं। यह इसलिए क्योंकि शासितो को शस्त्र देने का अर्थ स्वय को सशस्त्र बनाना ही होता है। इससे सदिग्ध व्यक्ति वफादार दोस्त बन जाता है और पहले से ही वफादार चले आ रहे नागरिक मात्र प्रजाजन के दर्जे से उठकर आपके पक्के पक्षधर हो जाते हैं।

फिर राज्य-भर के हर नागरिक को शस्त्र देना व्यवहारत सम्भव नही होता, लेकिन जिनको आप यह विशेषाधिकार प्रदान करते हैं, उनकी मदद से शेष नागरिकों पर कठोर नियन्त्रण करना सहज हो जाता है और जब यह भेद-भाव शासितो की समझ मे आ जाएगा, तब ये शस्त्रधर

शासित आपके प्रति और भी उत्तरदायी हो उठेंगे। शेष लोग भी यह समझ कर कि अधिक खतरा उठाने वालो तथा अधिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करने वालो के लिए शासक द्वारा अधिक उपकृत किया जाना, पुरस्कृत किया जाना अनिवार्य है, आपको क्षमा कर देंगे, लेकिन जैसे ही आप अपने शासितो को नि शस्त्र करने लगते हैं, वैसे ही आप अपनी कायरता अथवा सन्देह को अभिव्यक्त करते हुए उनके प्रति अपना अविश्वास प्रकट करते हैं और उन्हे नाराज़ कर लेते हैं। अब चाहे आप कायरता वश ऐसा करें अथवा सन्देहवश, उनकी घृणा के पात्र तो बन ही जाते हैं।

अब स्थिति यह हो जाती है कि आप बहुत दिनो तक नि शस्त्र बने रहने का खतरा तो उठा नही सकते, अतएव आप भाडे के सैनिको का आश्रय लेते हैं और इनका हाल मैं पहले ही बयान कर चुका हू। अगर ये भाडे के सैनिक विश्वसनीय भी हो तो इतने विश्वसनीय कभी नहीं हो सकते कि सामर्थ्यवान शत्रु के मुकाबले मे आपकी रक्षा कर सकें अथवा आपके अविश्वास के पात्र शासितो के षड्यन्त्रो से आपको बचा सकें। इसीलिए मैंने कहा कि नये राज्य मे आया नया शासक सदैव अपने शासितो को शस्त्र देता है और इस प्रकार के उदाहरणो से इतिहास अटा पडा है।

लेकिन जब कोई शासक अपने मूल प्रदेश म किसी नव विजित प्रदेश को जोडता है, तब उसे अवश्य ही अपने नये शासितो को नि शस्त्र कर देना चाहिए। इस नियम का अपवाद केवल ऐसे व्यक्ति बनाए जाने चाहिए, जिन्होंने विजयाभियान के दौरान नये शासक का साथ दिया हो। यही नही इन अपवादो को भी समय और अवसर पाकर कमजोर और स्त्रैण बनाया जाना चाहिए और ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि आपके द्वारा शासित सारे प्रदेशो एव उपनिवेशो मे आपके अपने सिपाही ही सशस्त्र रह जायें।

हमारे बुद्धिसम्पन्न समझे जाने वाले विद्वानो एव पूर्वजो को अक्सर यह कहते सुना गया था कि पिस्तोया को गुटो के द्वारा और पीसी को दुर्गों के बल पर नियन्त्रण मे रखना आवश्यक था, इसलिए वे अपने शासित नगरो म फूट के बीज बोया करते थे, जिससे उनका आसानी से शासन किया जा सके।

उन दिनों इटली में एक प्रकार का स्थायित्व विद्यमान था, स्थिरता थी, अतएव यह सलाह निस्सन्देह बुद्धिमत्तापूर्ण मानी जाती थी, लेकिन मेरा खयाल है कि अब यह सिद्धान्त आज की दुनिया में ठीक नहीं होगा। मैं यह विश्वास ही नहीं कर सकता कि असन्तोष और फूट के बीज बोने से कभी भी कोई भलाई हो सकती है। इसके विपरीत इस प्रकार की फूट के शिकार हुए नगरों का शत्रु का हमला होने पर अनिवार्यतः तुरन्त पतन हो जाता है। कमजोर पक्ष सदैव शत्रु से जा मिलेगा तथा दूसरा पक्ष उनका मुकाबला नहीं कर सकेगा।

मेरा विचार है कि मेरे द्वारा उल्लिखित बातों से ही प्रभावित होकर वेनिस के शासकों ने अपने शासित नगरों में गुएल्फ तथा ग्रिवेलाइन गुटों को पालना शुरू किया था।[1] यद्यपि इन शासकों ने इन गुटों के बीच कभी भी रक्तपात नहीं होने दिया, फिर भी ये इस मनमुटाव को बढ़ावा देते रहते थे, जिससे आपसी मतभेदों में ही उलझे हुए नागरिक कभी भी उनके विरुद्ध एकता के सूत्र में न बंध सकें।

लेकिन जैसा कि हम देख चुके हैं कि घटनाएं इन शासकों की योजना के अनुसार नहीं चलीं—जब वेनिस के शासकों को वैला के मैदान में खदेड़ा गया तो एक गुट ने साहस बटोरकर उनसे पूरा राज्य छीन लिया। इसलिए इस प्रकार के साधनों को अपनाने वाले शासक को कायर समझा जाता है। किसी भी शक्ति-सम्पन्न और दृढ़ शासन में इस प्रकार की प्रतिद्वन्द्विताओं को कभी सिर नहीं उठाने दिया जाता। इनसे शासक को केवल शान्तिकाल में लाभ पहुंच सकता है, क्योंकि वह इन्हीं के बल पर अपने शासितों पर आसानी से नियन्त्रण रख सकता है, लेकिन युद्धकाल में इस

१ ये नाम शायद राजमुकुट की प्राप्ति के लिए चली वेल्फ़ तथा वाइबलिंगेन परिवारों की आपसी प्रतिद्वन्द्विता से गढ़े गए हैं। इटली के मध्ययुगीन इतिहास में अपले तौर पर पोप (गुएल्फ़) तथा सम्राट (गिबेलाइन) के समर्थकों को इन्हीं नामों से अभिहित किया जाता था। स्थानीय एवं पारिवारिक द्वन्द्वों के कारण सारा मामला और भी उलझ-सा गया, लेकिन गिबेलाइन लोग अपेक्षाकृत कुलीन एवं सैनिक परम्परा वाले होते थे और गुएल्फ़ लोग उद्योग व्यापार के धनी होते थे।

नीति की कमज़ोरिया प्रकट हो जाती हैं।

इसमे सन्देह नही कि किसी शासक की महानता, कठिनाइयो तथा विरोधियो पर विजय पाने की उसकी क्षमता पर निर्भर करती है। इसलिए भाग्य जब किसी नये शासक की महत्ता का महल बनाने पर आता है और नये शासकको उत्तराधिकार मे सत्ता पानेवाले शासक की अपेक्षा अपनी साख जमाने की आवश्यकता बहुत अधिक होती है, तो उसके लिए शत्रु ढूढ निकालता है और उन्हें उससे भिड जाने के लिए प्रेरित करता है, जिससे उस शासक को उनपर विजय पाने का बहाना मिल जाये और इस प्रकार उसे उस सीढी पर चढने का अवसर मिल जाए जो शत्रु ने उसे उपलब्ध करा दी है। यही कारण है कि बहुत-से लोगो का यह विश्वास है कि बुद्धिमान शासक को अवसर मिलते ही, बडी चतुराई से, अपने प्रति कुछ विरोध के बीज बोने चाहिए, जिससे कि इस विरोधी मोर्चे को जीतकर वह अपनी प्रतिष्ठा बढा सके।

प्राय शासको का, विशेषकर नये शासको का, यह अनुभव रहा है कि उनके शासनकाल के प्रारम्भ मे सदिग्ध नज़र आने वाले लोग उस समय विश्वसनीय मित्र नज़र आने वाले लोगो की अपेक्षा अधिक वफादार एव उपयोगी सिद्ध होते हैं। सिएना के शासक पेण्डोलफो पेत्रुची ने अपना शासन अन्यो की अपेक्षा अपने सदिग्ध शासितो की सहायता से अधिक चलाया।

लेकिन यहा किसी भी प्रकार का सामान्य सिद्धान्त नहीं बनाया जा सकता क्योकि परिस्थितिया हर मामले मे भिन्न-भिन्न होती हैं। मैं केवल इतना ही कहूगा कि ऐसे लोगो को अपनी ओर मिला लेने मे किसी शासक को कभी भी कठिनाई नही हो सकती जो प्रारम्भ में उसके शत्रु रहे हो, लेकिन जिन्हें किसी के आश्रय की आवश्यकता हो और ऐसे लोग पूरी वफादारी से उसकी सेवा करने के लिए और भी अधिक विवश होते हैं, क्योकि वे महसूस करते हैं कि शासक के मन मे उनके प्रति प्रारम्भ मे बनी बुरी धारणाओ को अपने सत्कार्यों द्वारा मिटाना जरूरी है। इसीलिए शासक उन्हें अपने तथाकथित वफादार सेवको की अपेक्षा—जो अपने आपको इतना सुरक्षित महसूस करते हैं कि उसके हितो का ध्यान नही करते, अधिक उपयोगी पाता है।

बात इसी विषय से सम्बद्ध है। इसलिए मैं नये प्रदेशो को जीतने वाले शासको को याद दिला दू कि यदि आपने तोडफोड की कार्यवाहियो को प्रोत्साहन देकर नया प्रदेश जीता है, तो आपको अपने सहायको के इरादो के बारे मे भली-भाति सोच-विचार कर लेना चाहिए। यदि इन सहायकों की कार्यवाहियो का आधार शासक के प्रति स्वाभाविक स्नेह नही है, बल्कि वर्तमान शासक के प्रति असन्तोष है, तो उसे उनकी मैत्री को अपने साथ बनाए रखने मे काफी कष्ट होगा और कठिनाई भी क्योकि अपना समय आने पर वह भी उन्हे सन्तुष्ट नही कर पायेगा। यदि हम सावधानी से इसके कारणो की जाच करें और पुरातन एव आधुनिक दृष्टातो का अध्ययन करें तो हम पायेंगे कि शासक वर्तमान प्रशासन से असन्तुष्ट होकर उसके मित्र बनने वाले और उसके आक्रमण का समर्थन करने वाले लोगो की अपेक्षा उन लोगो की मैत्री आसानी से पा सकता है जो वर्तमान प्रशासन से सन्तुष्ट थे और विजेता का विरोध करते थे।

अपने विजित प्रदेशो पर अपनी पकड मजबूत बनाए रखने के लिए शासक लोग दुर्ग बनवाते रहे हैं। ये दुर्ग उनके विरुद्ध विद्रोह का षड्यन्त्र करने वाले लोगो की गतिविधियो का नियन्त्रण करने मे और किसी आकस्मिक आक्रमण के मुकाबले के लिए शरणस्थली के रूप मे सहायक होते हैं।

मैं इस नीति का समर्थन करता हू, क्योकि यह प्राचीन काल से ही व्यवहार मे लायी जा रही है, फिर भी हमारे अपने युग म श्रीमन्त निकोलो वितेल्ली ने मित्ता दी कास्तेलो पर अपनी पकड मजबूत करने के लिए ही वहा के दो दुर्गों को तहस-नहस कर दिया था। उर्बिनो के ड्यूक गाइदो-बाल्दो, सीजर बोर्गिया द्वारा अपने उपनिवेश से खदेडे जाने के बाद जब वहा लौटा तो उसने अपने विजित प्रदेश म अवस्थित तमाम किलो को धूल मे मिला दिया। उसने यही सोचा था कि ऐसा करने से उसका राज्य उसस छीनना कठिन हो जायेगा। जब वे बोलोना की ओर लौटे तो बेन्ती-वोग्ली ने भी इसी प्रकार की नीति का अनुसरण किया। इसलिए हम सहज ही देख सकते हैं कि दुर्गों की उपयोगिता अथवा उपयोगहीनता परिस्थितियो पर निर्भर करती है और यदि वे एक दिशा मे लाभकर होते हैं तो

किसी दूसरी दिशा मे हानिकर भी हो सकते हैं।

इसी बात को इस प्रकार से कहा जा सकता है कि जो शासक विदेशी आक्रमण की अपेक्षा अपने ही शासितो से अधिक भयभीत रहता है, उसे दुर्ग बनवाने चाहिए। जो शासक आन्तरिक विद्रोह से ज्यादा बाहरी आक्रमण के प्रति चिन्तित हो उसे दुर्गों का विचार ही नही करना चाहिए। फ्रासेस्को स्फोर्जा द्वारा बनवाया गया मीलान का परकोटा स्फोर्जा परिवार के विरुद्ध अव्यवस्था के किसी भी अन्य स्रोत की अपेक्षा कही अधिक विद्रोहो का स्रोत रहा है और बना रहेगा।

इसलिए सर्वोत्तम दुर्ग रचना यही हो सकती है कि शासक अपने शासितो की घृणा से बचे। यदि अपने किले बनवा रखे हैं और प्रजाजन आपसे घृणा करते हैं, तो ये दुर्ग आपकी रक्षा नही कर सकेंगे। एक बार अगर प्रजा ने आपके विरुद्ध शस्त्र उठा लिए तो उन्हे बाहर से मिलने वाली सहायता की कमी नही रहेगी।

हमारे अपने युग मे फोर्ली की काउन्तेस के अतिरिक्त एक भी ऐसा उदाहरण नही है, जिसके मामले म किसी किले ने अपने शासक की सचमुच रक्षा की हो। हा, फोर्ली को उसके प्रेमी काउण्ट जिरोलामो की हत्या के बाद प्रजा के आक्रमण के समय एक दुर्ग मे ही शरण मिली थी। इसी दुर्ग में रहकर वह मीलान से सहायता आने की प्रतीक्षा करती रही और अपना राज्य वापस लेने का मौका ढूढती रही। परिस्थितिया ऐसी विकट थी कि प्रजा को बाहर से सहायता ही नही मिल सकी।

लेकिन बाद म उसके लिए भी किलो की कोई उपयोगिता न रही। सीज़र बोर्गिया ने जब उस पर आक्रमण किया और प्रजाजन जाकर आक्रान्ता से ही मिल गए, तो किले बेकार हो गए। इसलिए पहले ही की तरह बाद मे भी उसके लिए किले बनवाने की अपेक्षा प्रजाजनो की शत्रुता से बचना ही सुरक्षा का बेहतर उपाय सिद्ध होता। अतएव सभी कुछ सोचने विचारने के बाद मैं उन सबकी प्रशसा करता हू, जो दुर्ग बनवाते हैं और जो दुर्ग नही बनवाते, लेकिन मैं हर उस व्यक्ति की निन्दा करूगा, जो प्रजा की घृणा के प्रति उपेक्षा भाव लेकर दुर्गों की क्षमता को अपनी आस्था का आधार बना लेता है।

२१

सम्मान प्राप्त करने के लिए शासक क्या करें ?

महान विजयाभियानो तथा निजी योग्यता के चौंकाने वाले प्रदर्शन से बढकर शासक की प्रतिष्ठा बढाने का और कोई साधन नही हो सकता हमारे अपने समय मे स्पेन के शहशाह एरागन के फर्डिनेण्ड हैं। उसे एक नया शासक समझा जा सकता है, क्योकि पहले वह एक कमजोर राजा माना जाता था और उस मान्यता से उठकर उसने ईसाई विश्व का प्रथम सम्राट् होने की कीर्ति एव ख्याति अर्जित कर ली है। यदि आप उसकी उपलब्धियो का अध्ययन करें तो पायेंगे कि वे सब अभूतपूर्व एव तेजोमयी थी। अपने शासनकाल के प्रारम्भ मे उसने ग्रैनाडा पर आक्रमण किया और इसी अभियान से उसकी व्यापक सत्ता की नीव पड गयी। पहले तो बिना किसी विकर्षण मे फसे और बिना किसी हस्तक्षेप से भयभीत हुए उसने अभियान शुरू किया। उसने इसका सदुपयोग कास्तील के बैरनो की शक्तियो को उलझाये रखने के लिए किया, क्योकि युद्धक्षेत्र मे अपनी तमाम चेष्टाओ को और चेतना को केन्द्रित कर लेने के कारण इन बैरनो के पास देश के भीतर गडबडी पैदा करने का कोई अवसर ही नही रहा। इस प्रकार उन्हे देश के भीतर घट रहे घटनाक्रम की जानकारी दिए बगैर ही फर्डिनैण्ड ने अपनी प्रतिष्ठा बढा ली एव उनके ऊपर अपनी पकड मजबूत कर ली।

चर्च से एव प्रजाजनो से प्राप्त धन के बल पर वह अपनी सेना को बनाए रखने मे समर्थ रहा और एक लम्बे युद्ध के कारण अपनी स्थायी सेना की मजबूत नीव भी उसने डाल ली। बाद मे वह इसी उपलब्धि के लिए विख्यात भी हुआ। यही नही भविष्य मे व्यापकतर अभियान करने के लिए धर्म की ही आड मे उसने एक क्रूर धार्मिक अभियान किया, जिसमे उसने

मोरिस्को लोगो को राज्य से खदेड दिया। इससे अधिक कारुणिक अथवा चौकाने वाला कोई अभियान हो ही नही सकता।[1]

धर्म का ही लबादा ओढकर उसने अफ्रीका पर हमला किया, इटली पर कूच किया और हाल ही मे फ्रास पर भी धावा बोला है। इस प्रकार उसने सदैव महान् कार्यो की योजना बनायी है और उन्हे पूरा किया है। इससे उसके शासित सदैव आश्चर्यचकित तथा रोमाचित से रहते हैं। उन्हे सदैव इन अभियानो के परिणामो की प्रतीक्षा रहती है और उसकी ये कार्यवाहिया एक निरन्तर शृखला की तरह चलती रहती हैं—कुछ इस प्रकार से कि उसने दो अभियानो के बीच चुपचाप शासक के विरुद्ध षड्यन्त्र करने का अवसर ही कभी प्रजा को नही दिया।

शासक को आन्तरिक प्रशासन-सम्बन्धी अपनी क्षमताओ का भी चमत्कारपूर्ण प्रदर्शन करते रहना चाहिए। ये क्षमताए ऐसी हो, जैसी मीलाक के बर्नाबो ने प्रदर्शित की थी। किसी नागरिक के सामान्य नागरिक जीवन मे किए गए अपवादात्मक रूप से अच्छे या बुरे काम के लिए उसे पुरस्कृत अथवा दण्डित कुछ ऐसे ढग से किया जाना चाहिए कि सारी घटना शासितों की चर्चा का विषय बन जाये। इन सबसे बढकर अपने हर कृत्य के माध्यम से शासक को अपनी प्रतिष्ठा असाधारण योग्यताओ से सम्पन्न एक महान् व्यक्ति के रूप मे स्थापित करनी चाहिए।

अपने-आप को सच्चा दोस्त या सच्चा दुश्मन होने अर्थात् अपने-आप को किसी एक पक्ष का निर्भीक पक्षधर घोषित करने से भी प्रतिष्ठा बढती है। तटस्थता की अपेक्षा यह नीति सदैव अधिक लाभकर सिद्ध होगी। उदाहरणार्थ यदि आपकी पडोसी शक्तिया आपस मे गुत्थम-गुत्थ हो उठती हैं और उनमे से कोई एक जीत जाती है, तो आप खतरे मे हो भी सकते हैं और नही भी हो सकते। दोनो ही स्थितियो मे आपको अपने पक्ष की खुलकर घोषणा कर देने और जमकर लडने से लाभ रहेगा, क्योकि

१ मैकियावेली सम्भवत ग्रैनाडा के, १४ वर्ष से अधिक आयु के उन तमाम मुसलमानो के निकाले जाने की बात कर रहा है जिन्होने ईसाइयत स्वीकार नहीं किया था। यह घटना ईस्वी सन १५०२ की है। इसका श्रेय फर्डिनेन्ड की बजाय इसाबेला को अधिक है। मूर लोग तो स्पेन से अन्तत १६१० में निकाले गए थे।

यदि इन शक्तियों की जय-पराजय आपकी सुरक्षा को प्रभावित करती है और आप अपना पक्ष घोषित नही करते, तो आप विजेता की कृपा पर निर्भर होंगे, जबकि पराजित पक्ष आपकी दयनीय स्थिति पर हसेगा और आपके पास किसी का सरक्षण पाने अथवा किसी के यहा शरण लेने का कोई औचित्य नही रह जाएगा। विजेता कभी सदिग्ध व्यक्तियो को मित्र नही बनना चाहता, क्योकि ये (तटस्थ रहने वाले) लोग कठिनाई की घडी मे उसकी मदद नही करते। पराजित व्यक्ति भी आपका तिरस्कार कर देता है, क्योकि आप उसकी विपत्ति की घडी मे सदल-बल उसकी सहायता करने नही गए थे।

एण्टियोकस इतोलियन लोगो के निमन्त्रण पर वहा से रोमनो को मार भगाने के लिए ही यूनान गया था। उसने अपने दूत रोमनो के मित्रो एकियनो के पास भेजे और उन्हे तटस्थ बने रहने के लिए प्रोत्साहन दिया। दूसरी ओर रोमनो ने एकियनो को अपनी ओर से लडने के लिए आमत्रित करना शुरू किया। मामला एकियनो की परिषद में बहस के लिए उठाया गया इसी परिषद मे एण्टियोकस का वह राजदूत भी मौजूद था, जो उन्हे तटस्थता के लिए प्रेरित कर रहा था। राजदूत की इस सलाह के जवाब मे रोमन राज्याध्यक्ष ने कहा—"इस राजदूत की सलाह—कि आप युद्ध मे हस्तक्षेप न करें, से ज्यादा अहितकर कोई बात आपके लिए नही हो सकती। आप न किसी की कृपा के पात्र बन सकेंगे और न ही सम्मान पा सकेंगे, और फिर भी आप विजेता की लूट का हिस्सा होगे।"

ऐसा हमेशा होता है कि आपके अमित्र आपको तटस्थ बने रहने की सलाह देते है और आपके हितेच्छु-मित्र आपसे सशस्त्र सहायता की माग करते हैं। अनिश्चय के शिकार शासक त्वरित खतरो से बचने के लिए हमेशा तटस्थता का रास्ता अपना लेते हैं और आम तौर पर मुसीबत म फस जाते है लेकिन जब आप साहस करके किसी एक पक्ष के लिए अपने समर्थन की घोषणा कर देते हैं, तो उस पक्ष के जीत जाने पर विजेता के बहुत शक्ति सम्पन्न होते हुए भी और आपके उसकी कृपा पर निर्भर होते हुए भी, वह आपका अहसानमन्द होता है और अपने-आप को आपके प्रति मैत्री के बन्धन म जकडा हुआ पाता है और ऐसी स्थिति मे भी आपके प्रति

कृतघ्नता का और कटुता का व्यवहार करे इतना सिद्धान्तहीन एव गिरा हुआ मैं इनसान को नही समझता।

फिर विजय का उत्साह भी कभी इतना अधिक नही होता कि विजेता किसी भी स्तर पर उचित-अनुचित का विशेषकर न्याय के आधारभूत सिद्धान्तो का ध्यान ही न रखे, लेकिन दूसरी ओर यदि आपके द्वारा समर्थित पक्ष पराजित हो जाता है, तो वह आपके सामने ढाल बनकर खडा हो जाएगा। वह यथासम्भव आपकी हर सहायता करेगा और इस प्रकार आप दोनो एक-दूसरे के ऐसे घनिष्ठ साझीदार बन जायेंगे कि हो सकता है, इस साझेदारी मे आप लोगो के भाग्य भी पलटा खा जायें।

अब पराजय की स्थिति मे यदि दोनो युद्धरत पक्ष ऐसे हैं कि आपको विजेता से डरने की कोई जरूरत ही नही है, तो आपको और भी खुलकर किसी एक पक्ष के समर्थन की घोषणा कर देनी चाहिए। इस नीति को अपनाकर आप एक युद्धरत पक्ष की सहायता से दूसरे पक्ष को नष्ट कर देते हैं। यदि यह पक्ष बुद्धिसम्पन्न होता तो दूसरे युद्धरत पक्ष की सहायता स्वय कर रहा होता। यदि आपका पक्ष जीत जाता है तो आपका साथी आपकी कृपा पर निर्भर करेगा और आपकी सहायता के बगैर उसके लिए जीतना असम्भव होगा।

यहा इस बात की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए कि किसी भी शासक को किसी ऐसे आक्रमणकारी गुट मे शामिल नही होना चाहिए जिसका एक भी हिस्सेदार स्वय उससे ज्यादा शक्ति सम्पन्न हो। हा, जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, विवशता की स्थिति की बात और है। यह सलाह इसलिए दी गयी है कि यदि आपका पक्ष जीत जाता है तो आप अपने से अधिक शक्ति-सम्पन्न साझीदार के गुलाम होकर रह जायेंगे और शासक को किसी दूसरे की कृपा पर निर्भर करने की स्थिति से हर कीमत पर बचना चाहिए।

वेनिस वालो ने ड्यूक आव मीलान के विरुद्ध मोर्चा बाधने के लिए फ्रांस के साथ दोस्ती गाठ ली और यह दोस्ती उनकी बरबादी का कारण बन गयी जबकि वे इस साझेदारी से बच सकते थे। लेकिन जब इस प्रकार की साझेदारी अनिवार्य हो जाती है (जैसा कि पोप और स्पेन द्वारा

लोम्बार्दी पर किए गए आक्रमण के समय फ्लारेंस वालो के साथ हुआ) तो शासक को हर कीमत पर उल्लिखित कारणो को दृष्टिगत रखते हुए किसी एक पक्ष का समर्थन करना चाहिए।

फिर, कभी भी किसी सरकार को यह नही सोचना चाहिए कि वह खतरो से साफ-साफ बच निकलने का रास्ता अपना सकती है। वस्तुत हर सम्भव कार्यवाही को किसी न किसी हद तक खतरनाक समझा जाना चाहिए। जीवन की धारा ही ऐसी है कि जब व्यक्ति किसी एक खतरे से बचने का प्रयास करता है तो किसी दूसरे खतरे की चपेट म आ जाता है। बुद्धिमत्ता इसी मे होती है कि किसी विशेष खतरे की प्रकृति को व्यक्ति पहचान ले और न्यूनतम खतरे वाली कार्यवाही का रास्ता अपना ले।

शासक को प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियो के प्रति प्रशसा का भाव भी दिखाना चाहिए योग्य व्यक्तियो को सक्रिय रूप से प्रोत्साहन देना चाहिए और प्रमुख कारीगरो को सम्मानित करना चाहिए। इसी प्रकार उसे अपने नागरिको को अपने-अपने कार्य व्यापार का शान्तिपूर्वक निर्वाह करने के लिए प्रेरित करते एव प्रोत्साहन देते रहना चाहिए—चाहे वे नागरिक व्यापारी हो, खेतिहर हो अथवा किसी अन्य व्यवसाय पर अवलम्बित हों। न तो किसी नागरिक को अपनी सम्पत्ति बढाते समय उसके छिन जाने का भय होना चाहिए और न ही किसी उद्योगपति को किसी नये उद्योग की शुरूआत करते समय ऊचे करो से आतकित होकर अपना हाथ रोकना चाहिए। इसके विपरीत शासक को इस प्रकार के कार्य करने और अपने नगर या राज्य की समृद्धि बढाने के इच्छुक व्यक्तियो को पुरस्कृत करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसके साथ-साथ साल भर म कभी उपयुक्त अवसर पाकर उसे उत्सवो, समारोह एव प्रदर्शनो के द्वारा प्रजा का मनोरजन करना चाहिए।

फिर हर नगर सघो समितियो तथा पारिवारिक समूहा मे बटा हुआ होता है। शासक को इनकी ओर ध्यान देना चाहिए। इनसे समय-समय पर मिलते-जुलते रहना चाहिए और इस प्रकार से सौजन्य एव उदारता का आदर्श स्थापित करते रहना चाहिए। इसके बावजूद हर समय अपने पद की मर्यादा, गरिमा का भी निर्वाह करना चाहिए, क्योंकि उसके पास कभी भी किसी चीज की कभी महसूस नही की जानी चाहिए।

२२

शासक के निजी सेवक

शासक के लिए अपने मन्त्रियो का चुनाव कम महत्त्व का काम नही होता और इन मन्त्रियो की उपयोगिता शासक के अपने बुद्धि-चातुर्य पर निर्भर करती है। किसी भी शासक की बुद्धिमत्ता के बारे मे पहली धारणा उन व्यक्तियो की गुणवत्ता के आधार पर बनायी जाती है जिनसे वह घिरा रहता है। यदि वे सुयोग्य एव स्वामिभक्त लोग हैं तो राजा को हमेशा विवेकशील समझा जायेगा, क्योकि इससे यह सिद्ध होगा कि उसमे उनकी योग्यता की पहचान करने तथा उनकी वफादारी को जीतने की क्षमता है। यदि ये लोग ऐसे सुयोग्य एव स्वामिभक्त नही होगे, तो शासक की सदैव आलोचना की जाएगी, क्योकि उसके द्वारा किए गए मन्त्रियो के चुनाव मे ही उसकी प्रथम भूल का दिग्दर्शन हो जाएगा।

जो कोई भी सिएना के शासक पेण्डोल्फो पेत्रुची के मन्त्री के रूप मे एन्तोनियो दा विनाफ्रो को जानता था, इस बात को भली-भाति समझ जाता था कि पेण्डोल्फो स्वय अत्यन्त बुद्धिमान एव सुयोग्य व्यक्ति है। बुद्धिमत्ता भी तीन प्रकार की होती है। एक प्रकार की बुद्धि वह होती है, जो समस्याओ को स्वयमेव समझ जाती है, दूसरे प्रकार की बुद्धि वह होती है जो दूसरो की समझ-बूझ की दाद देती रहती है, तीसरे प्रकार की बुद्धि न स्वय कुछ समझती है और दूसरे की समझ-बूझ की दाद देती है। प्रथम कोटि की बुद्धि श्रेष्ठ मानी जाती है, द्वितीय कोटि की बुद्धि अच्छी होती है। तृतीय कोटि की एकदम बेकार। इसलिए निष्कर्ष यह निकला कि पेण्डोल्फो मे यदि प्रथम कोटि की बुद्धि नही थी, तो कम से कम दूसरे प्रकार की बुद्धि से वह सम्पन्न था। यदि किसी शासक म इतनी निर्णय

बुद्धि है कि वह दूसरो की अपनी-करनी की अच्छाई-बुराई का फैसला कर लेता है तो यह स्वय सूक्ष्मबुद्धि न होते हुए भी अपने मन्त्रियो के कार्य-कलाप की भलाई-बुराई की जाच कर लेगा और तदनुसार प्रशसा अथवा आलोचना कर लेगा। इस प्रकार से मन्त्री कभी भी उसे ठगने या धोखा देने की बात नही सोच सकेंगे और भूल करते समय डरेंगे।

जहा किसी मन्त्री की योग्यता की जाच करने का सवाल है, मैं एक अचूक नुस्खा बताता हू। आप किसी मन्त्री को आपके हितो की अपेक्षा अपने हितो की अधिक चिन्ता करते हुए देखें, और अपने हर कार्य कलाप मे अपना लाभ ढूढते हुए पायें तो समझ लें कि ऐसा व्यक्ति कभी भी अच्छा मन्त्री नही होगा और आप उस पर कभी भरोसा नही कर सकेंगे। ऐसा इसलिए कहा जाता है कि शासकीय कार्यभार सम्हालने के लिए तैनात व्यक्ति को कभी भी अपने हित की नही, बल्कि शासक के हित की बात सोचनी चाहिए। उसे शासक की समस्याओ का समाधान खोजने के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की बात मे पडना ही नही चाहिए।

शासक को भी चाहिए कि वह अपने मन्त्रियो की सद्भावना अपने प्रति बनाये रखने के लिए उनके प्रति उदारता का बरताव करे, उन्हें सम्मानित करे, उन्हे समृद्धि प्रदान करे और उन्हे अपने प्रति कृतज्ञ बना ले। उनके साथ उत्तरदायित्वो तथा सम्मान मे साझीदार बने। इस प्रकार मन्त्री शासक के ऊपर अपनी निर्भरता को महसूस करेगा और अपने पास समृद्धि और सम्मान का अतिरेक पाकर और अधिक की कामना नही करेगा। इतने अधिकार और सम्मान पाकर वह परिवर्तन की सभावना से ही डरने लगेगा। इसलिए जब शासक और उसके मन्त्रियो के बीच इस प्रकार के सम्बन्ध होगे तो उन्हे एक-दूसरे पर विश्वास भी होगा। सम्बन्ध इसके विपरीत होने पर दोनो के ही लिए परिणाम घातक होगे।

२३

चाटुकारों से कैसे बचें ?

एक ऐसा भी विषय है जिसे मैं छुए बिना नही छोड सकता। यह एक ऐसी गलती है जिसे करने से शासक लोग बडी मुश्किल से बच पाते हैं। यदि वे अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि नही होते अथवा अपने मन्त्रियो का चुनाव सावधानी से नही करते तो वे अक्सर यह भूल कर जाते है। मैं चाटुकारो की चर्चा कर रहा हू जो हर राजदरबार मे मधु-मक्खियो की तरह भरे रहते हैं। लोग अपने-अपने काम मे खोये-खोये ही इतने खुश रहते हैं और अपने-आप को ऐसे-ऐसे धोखे देते हैं कि उनके लिए इस चाटुकारिता की महामारी के जबडो से बचना बडा मुश्किल होता है और अगर वे इस बीमारी से बचने की चेष्टा करते हैं, तो लोगो के निरादर के शिकार हो जाते हैं।

ऐसा इसलिए होता है कि चाटुकारो से बचने का एकमात्र उपाय यही है कि आप प्रजा के मन मे यह धारणा बैठा दें कि आप सच्चाई का बुरा नही मानते, लेकिन यदि हर व्यक्ति आपके सामने सत्य भाषण की सुविधा पा जाता है, तो आपका सम्मान घटता है। अतएव एक चतुर शासक को मध्यम मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। उसे प्रशासन के लिए बुद्धिमान लोगो को चुनना चाहिए और केवल उन्ही को यह छूट देनी चाहिए कि वे उसके सामने सच बोल सकें और वह भी उन्ही मामलो मे, जिनके बारे मे वह उनकी राय मागे अन्य किसी विषय मे नही।

लेकिन उसे स्वय भी उनमे जमकर जिरह करनी चाहिए और उनकी बात बडे ध्यान से सुननी चाहिए। इसके बाद उसे स्वय अपना मत स्थिर करना चाहिए। यही नही, अपनी परिषदो और अपने हर सलाहकार के प्रति शासक का रुख ऐसा होना चाहिए कि वे इस बात को महसूस कर

सकें कि वे जितने स्पष्टवादी होंगे, उतने ही स्वीकार्य होते चले जायेंगे। इनके अतिरिक्त शासक को किसी की बात पर कान नही धरना चाहिए। उसे एक बार तय कर ली गयी नीति को तुरन्त लागू करना चाहिए और उसका दृढता से पालन करना चाहिए। जो शासक ऐसा नही करता उसे या तो चाटुकार लोग इधर-उधर धकेलते फिरेंगे अथवा वह स्वय परस्पर विरोधी सलाह के चक्कर मे पडकर, वह बार-बार अपनी धारणाए बदलता रहेगा। परिणामत उसकी प्रतिष्ठा गिर जायेगी।

मैं इस तर्क के दृष्टान्त के रूप मे आधुनिक इतिहास की एक घटना प्रस्तुत करता हू। वर्तमान सम्राट् मैक्सिमिलियान के सेवक बिशप लूका अपने महामहिम सम्राट् के विषय मे कहा करते थे कि वह न तो कभी किसी की सलाह लेते थे और न कभी अपना रास्ता ही खोज पाये। ऐसा इसलिए हुआ कि सम्राट् ने मेरी सलाह के विरुद्ध कार्यवाही की थी। सम्राट् दुराव छिपाव करने वाला व्यक्ति है। वह किसी को भी अपनी योजनाओ के विषय मे नही बताता और किसी की सलाह नही मानता। लेकिन जैसे ही वह अपनी योजनाओ को क्रियान्वित करता है और उनके बारे मे सब लोग जान जाते है, तो उसके निकटस्थ लोग इन योजनाओ का विरोध करते हैं और तभी वह बडी आसानी से अपने लक्ष्य की ओर से मुह मोड लेता है। परिणाम यह होता है कि वह एक दिन जो कुछ भी करता है, दूसरे दिन ही उसे मिटा देता है, जो कुछ वह चाहता है या जो योजनाए वह बनाता है, वे कभी स्पष्ट नही होती और उसके चिन्तन अथवा धारणाओ पर किसी प्रकार का भरोसा नही किया जा सकता।

इसलिए शासक को सदैव किसी न किसी की सलाह लेनी चाहिए, लेकिन उसे यह सलाह तभी लेनी चाहिए, जब वह स्वय चाहे। दूसरो की इच्छाओ का अनुसरण करते हुए नही। वस्तुत उसे उन तमाम लोगो को हतोत्साहित करना चाहिए, जो बिना मागे किसी मामले मे सलाह देने लगते हैं, फिर भी उसे निरन्तर सवाल पूछते रहना चाहिए और जिस बारे मे वह सवाल पूछे, उसके बारे मे कही गयी सच बात को उसे धैर्यपूर्वक सुनना भी चाहिए।

यही नही, यदि उसे ऐसा लगे कि कोई व्यक्ति किसी कारण से उससे

सच्चाई छिपा रहा है तो उसे उस पर अपना क्रोध भी दिखाना चाहिए। कई लोगों की यह धारणा है कि जो भी शासक लोगों पर अपने तीक्ष्ण बुद्धि होने की धाक बैठाता है, वह इसलिए नहीं कि वह सचमुच बुद्धिमान है, बल्कि इसलिए ऐसा करता है कि उसकी सलाहकार परिषदें अच्छी हैं, लेकिन सच्चाई यह नही है।

मैं इस सम्बन्ध मे एक अचूक नियम का प्रतिपादन करता हू। जो शासक स्वय बुद्धिमान नही होता, उसे अच्छी सलाह भी नहीं दी जा सकती जब तक वह स्वय को किसी ऐसे सलाहकार के हाथो मे नही सौंप देता, जो उसके सारे राजकाज की देखभाल भी करता हो और स्वय बहुत बुद्धिमान व्यक्ति हो। ऐसी स्थिति मे भी उसे अच्छी सलाह तो दी जा सकती है, लेकिन उसका शासन ज्यादा दिन नही चलेगा, क्योंकि उसकी ओर से शासन कार्य चलाने वाला व्यक्ति शीघ्र ही उसे राज्य से वचित कर देगा।

लेकिन जो शासक स्वय बुद्धिमान नही है, उसे एकाधिक व्यक्तियो की सलाह लेते समय अपनी परिषदो मे कभी भी किसी मुद्दे पर मतैक्य नही मिलेगा और न ही वह उनके भिन्न-भिन्न मतो के बीच कभी कोई सामजस्य स्थापित कर सकेगा। हर पार्षद अपने ही हितो को ध्यान मे रखकर सलाह देगा और शासक जान ही नही पायेगा कि उनकी भूल को कैसे सुधारा जाये अथवा कैसे उनकी बात समझी जाये। लोगो को जब तक ईमानदारी से जीने और काम करने के लिए मजबूर नही किया जायेगा, तब तक वे हमेशा ऐसा ही करते रहेगे और कोई सम्भावना ही नही रह जाती। अत निष्कर्ष यही रहा कि जहा से भी मिले, अच्छी सलाह की अच्छाई उसे लेने वाले शासक की बुद्धिमत्ता पर निर्भर करती है। शासक की बुद्धिमत्ता अच्छी सलाह पर निर्भर नही करती।

२४

इतालवी शासक अपना-अपना राज्य क्यों खो बैठे ?

यदि कोई नया शासक मेरे द्वारा उल्लिखित नियमो का सजगता से पालन करता है तो ऐसा लगेगा जैसे वह बहुत लम्बे समय से शासनारूढ रहा हो। वह शीघ्र ही अपने पाव इतनी मजबूती से जमा लेगा, जितनी मजबूती से वह लम्बे समय से शासन करता रहने पर भी न जमा पाता। किसी उत्तराधिकारी शासक की अपेक्षा नये शासक की कार्यवाहियो की ओर लोगों का ध्यान कहीं ज्यादा रहता है और जब इन कार्यवाहियों में पराक्रम का पुट भी होता है, तो वे शाही रक्त की अपेक्षा कही अधिक कुशलता से लोगो का मन जीत लेती हैं और उनके मन मे स्वामिभक्ति की लौ जगाती हैं।

इसका कारण यह है कि लोग अतीत की अपेक्षा वर्तमान की ओर अधिक आकृष्ट होते हैं और जब वे इस फैसले पर पहुच जाते है कि उनके सामने तत्काल जो कुछ हो रहा है वह अच्छा है, तो वे उसी से तुष्ट हो जाते हैं और अन्यत्र झांकना बन्द कर देते हैं। इस प्रकार से प्रभावित होने के बाद वे अपने शासक की रक्षा के लिए कुछ भी करने को तैयार हो जायेंगे। शर्त यही है कि स्वय उसी मे कोई वैसी कमी न हो। इस प्रकार नये शासक को दोहरी कीर्ति मिलेगी—एक तो नये राज्य की स्थापना का श्रेय, दूसरे उस राज्य को अच्छे कानूनो, समुचित सुरक्षा व्यवस्था, विश्वसनीय सहयोगियो और प्रेरणाप्रद नेतृत्व के गहनो से सजाने और उसे मजबूत बनाने का श्रेय। इसके विपरीत किसी जन्मजात शासक को, यदि वह अपने जन्मजात अधिकार को अपनी अयोग्यता से खो बैठता है, तो दुहरी शर्मिन्दगी उठानी पडती है।

आइये, हम नेपल्स के शाह, मीलान के ड्यूक और ऐसे ही कई अन्य शासक की चर्चा करें जो हमारे ही युग मे अपने-अपने राज्य-शासन खो बैठे हैं। इनका अध्ययन करने पर हम पायेंगे कि उन सबमे उल्लिखित कारणो से सैनिक सगठन-सम्बन्धी एक कमज़ोरी मौजूद थी, फिर आप यह भी देखेंगे कि इनमे से कुछेक तो प्रजाजनो की शत्रुता मोल ले बैठे अथवा प्रजाजनो के पक्ष मे होते हुए भी उन्हे अपने प्रति सामन्तो की स्वामिभक्ति को बनाये रखना नही आया। अगर इनम से किसी एक कारण से उनकी जडो म मट्ठा नही भरा गया है तो युद्ध के मैदान मे पूरी सनाओ को धकेलने म समर्थ राज्य शासको के हाथ से नही निकल सकते। मेसीडन के शाह फिलिप (सिकन्दर महान के पिता नही, वल्कि टाइटस क्विण्टियस द्वारा पराजित सेनापति) रोमनो तथा यूनानियो के मुकाबले म एक बहुत छोटी-सी रियासत के शासक थे और इन दोनो विराटाकार शासको ने उन पर हमला कर दिया।

फिर भी, क्योकि वह स्वभावत सैनिक व्यक्ति था और प्रजाजनो को सन्तुष्ट रखने एव सामन्तो की स्वामिभक्ति अपने प्रति बनाये रखने की कला जानता था, इसलिए कई वर्षों तक इन दोनो महती शक्तियो के विरुद्ध युद्ध का सचालन करता चला गया और अन्तत कुछेक नगरो का शासन छिन जाने के बावजूद उसके अपने राज्य का शासक बना रहा।

इसलिए हमारे ये शासक, जिनकी सत्ता की स्थापना हुए कई-कई वर्ष बीत चुके थे, अपने-अपने राज्य के छिन जाने के लिए भाग्य को बदनाम नही कर सकते। इसका दोष उनके अपने प्रमाद और आलसीपन को दिया जा सकता है, क्योकि शान्तिकाल मे उन्होंने कभी यह सोचा नही कि समय की गति बदल भी सकता है (यह मानव जाति की सामान्य भूल है कि वे लोग सागर के शान्त रहते हुए सागर मे तूफान के आने की सम्भावना की ओर से भी आखें मूद लेते हैं!), अतएव जब विपदा आयी, तो उन्होंने पहली बात जो सोची वह उसका मुकाबला करने की नही, जान बचाकर भागने की सोची। ये शासक यही सोचते रहे कि विजेता की ज़्यादतियो से तग आकर वे स्वयमेव उन्हे वापिस बुला लेंगे। जब और कोई चारा ही न रहे तो यह नीति ठीक ही रहती है, लेकिन इसी आशा के बल पर अन्य

सावधानियो और सजगताओ की उपेक्षा कर देना गलत है। किसी दूसरे द्वारा सहायता का हाथ बढाकर उठा लिये जाने की आशा से ही हमने लोगो को कभी (जान-बूझकर) गिरते हुए नही देखा है। हो सकता है यह सहायता न मिले और यह सहायता मिल जाने पर भी आप असुरक्षित रह जाते है, क्योकि आपके द्वारा अपनाया गया तरीका कायरतापूर्ण था, आपके अपने कृतित्व और श्रम पर आधारित नही था। प्रतिरक्षा के अच्छे, सुदृढ और सुनिश्चित उपाय वही हो सकते हैं, जो आपके अपने कार्य, श्रम और पराक्रम पर आधारित हो।

२५

भाग्य किस सीमा तक मानव-जीवन का नियन्त्रण करता है तथा उसका विरोध कैसे किया जाय ?

मैं बहुतेरे लोगो की इस धारणा से अनभिज्ञ नही हू कि भाग्य और भगवान् घटनाओ का नियमन इस ढग से करते हैं कि मानव की दूरदर्शिता उनकी दिशा को नही बदल सकती और मनुष्य का उन पर कोई बस नही चलता। इस धारणा के कारण ये लोग यही तर्क दिया करते हैं कि व्यर्थ म जान मारने से और पसीना बहाने से कोई लाभ नही होगा। व्यक्ति के लिए सयोग के आगे सिर झुका लेना ही ठीक है।

हमारे अपने युग मे यह धारणा बहुत प्रचलित रही है, क्योकि हमारे ही युग म ऐसी कई एक महत्त्वपूर्ण क्रान्तिया और हलचलें हो गयी है, जो मानव की कल्पना से भी परे की बातें थी और जिनको हमने प्रतिदिन अनुभव किया है, आज भी करते हैं। कई बार इस बात को सोचकर मेरी अपनी भी यही धारणा बनकर रह गयी है। इसके बावजूद मानव के स्वतन्त्र चयन की सम्भावना को रद्द नही किया जा सकता। मैं मानता हू कि यह बात शायद सच ही है कि हमारी आधी गतिविधियो का फैसला भाग्य ही करता है, लेकिन शेष आधे कामो का फैसला तो हमारे ऊपर ही होता है।

मैं भाग्य की तुलना उन तूफानी नदियो म से किसी एक से करता हू, जो उफान आने पर मैदानो मे बाढ ले आती हैं, पेडो और इमारतो को जड और नीव से उखाडकर धरती पर ला पटकती हैं और एक जगह की मिट्टी को बहाकर दूसरी जगह जमा करने के लिए ले जाती है। हर व्यक्ति इन नदियो के आगे भागता है, हर व्यक्ति उनके जोश के सामने सिर झुका

देता है। इनका मुकाबला किये जाने की कोई सम्भावना ही नही है। इन नदियो की प्रकृति ऐसी होते हुए भी, यह नही समझा जाना चाहिए कि जब ये नदिया शान्त बह रही होती हैं, उस समय सावधानी नही बरती जा सकती—कि इन नदियो पर फाटक और बाध नही बनाये जा सकते, जिससे कि नदी मे बाढ आने पर पानी को नहरो मे डाला जा सके अथवा उनके प्रवाह की गति को कम विकराल और कम खतरनाक बनाया जा सके।

भाग्य का भी यही हाल है। उसकी प्रबलता भी वही देखने को मिलती है, जहा उसका नियमन करने के लिए फाटक और बाध नही बनाये जाते। यदि आप मेरे द्वारा वर्णित क्रान्तियो और हलचलो के रगमच इटली के बारे मे सोचें तो आप देखेंगे कि इस देश मे न कोई फाटक बनाया गया है और न ही कोई बाध बाधा गया है। यदि इटली को जर्मनी, फ्रास और स्पेन की तरह (भाग्य के थपेडो के लिए) भली भाति तैयार किया गया होता तो या तो यह बाढ इतने बडे परिवर्तन न कर पाती जो उसने किये हैं, अथवा यह बाढ आती ही नही।

मैं चाहता हू कि भाग्य का प्रतिरोध करने के सम्बन्ध मे मैंने जो कुछ कह दिया है, वही काफी मान लिया जाए, लेकिन अब अपने वक्तव्य को विशिष्ट घटनाओ तक सीमित रखते हुए मैं कहना चाहूगा कि कई शासक एक दिन समृद्धि के शिखर पर चढ जाते हैं और दूसरे दिन उनके भाग्य का सितारा डूब जाता है—और इन शासको का व्यक्तित्व अथवा चरित्र किसी भी प्रकार से बदला हुआ नज़र नही आता। मेरा विचार है कि ऐसा एक तो उल्लिखित कारणो से होता है, जैसे पूर्णतया भाग्य पर निर्भर करने वाले शासक भाग्य का प्रवाह बदलने पर विपदा के शिकार हो जाते हैं। मेरा यह भी विश्वास है कि समयानुकूल नीतियो का अनुसरण करने वाला शासक समृद्धि पाता है और इसी तरह से समय के प्रवाह के विपरीत चलने वाला व्यक्ति समृद्ध नही हो पाता।

यह देखा जा सकता है कि लोग अपने-अपने लक्ष्यो की पूर्ति के लिए अर्थात् यश एव समृद्धि पाने के लिए कई प्रकार के उपाय अपनाते है। एक व्यक्ति परिस्थितियो का सावधानी से अध्ययन करके कदम उठाता है, दूसरा व्यक्ति सीधे जोश मे आगे बढ चलता है। एक व्यक्ति हिंसा का

आश्रय लेता है, दूसरा छल-कपट का। एक व्यक्ति काम करते समय धैर्य से काम लेता है, दूसरा इसके ठीक विपरीत व्यवहार करता है और फिर भी साधनों एव उपकरणों की इस तमाम विविधता के बावजूद हर व्यक्ति अपने लक्ष्य को पा सकता है। यह भी देखा जा सकता है कि सजगता से कदम उठाने वाले दो व्यक्तियों म से भी एक व्यक्ति मजिल पा जाता है, दूसरा नहीं पा सकता। इसी प्रकार से दो नितान्त भिन्न मार्गों को अपनाने वाले लोग भी अपनी लक्ष्य प्राप्ति म सफल हो जाते हैं, चाहे उनमे से एक सजग हो और दूसरा भावना-प्रवाह म बहकर काम करने वाला। यह सारा खेल इसी बात का है कि उनके द्वारा अपनाये गये साधन एव उपाय किस सीमा तक समय के प्रवाह के अनुकूल पडते हैं और किस सीमा तक समय-प्रवाह के प्रतिकूल। यही कारण है कि जैसा मैं पहले कह चुका हू, दो भिन्न-भिन्न तरीकों से काम करने वाले व्यक्ति एक ही लक्ष्य की प्राप्ति कर सकते हैं, जबकि एक ही तरीके से काम करने वाले दो व्यक्तियो मे से एक को इच्छित फल मिल जाता है, दूसरे को नही मिलता।

इसी से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि समृद्धि को क्षणिक अथवा चचला क्यो कहा जाता है। यदि एक व्यक्ति धैर्य और सजगता से काम लेता है और यह तरीका यदि समय और परिस्थितियो के अनुकूल पडता है तो वह समृद्धि प्राप्त कर लेता है, लेकिन समय एव परिस्थितियो के बदलते ही अपनी नीति को न बदलने के कारण वह व्यक्ति बरबाद हो जाता है। हम कोई व्यक्ति ऐसा नजर नहा आता, जो इतना दूरदर्शी हो कि अपनी नीतियों को इस प्रकार के समय के प्रवाह के अनुकूल ढाल सके। इसका एक कारण तो यह हो सकता है कि दूसरे किसी तरीके से काम करना उसके स्वभाव के ही विपरीत पडता हो अथवा यह सम्भव है कि सदैव एक ही पथ के अनुसरण से लाभान्वित होने के कारण वह स्वय को अपना मार्ग बदलने के लिए तैयार न कर पाता हो। इस प्रकार से सजग और सावधान रहने वाला व्यक्ति, परिस्थितियो द्वारा की गयी तीव्रगामी साधना की मांग पूरी न कर सकने के कारण अपने दायित्व का निर्वाह नहीं कर पाता और विपदा मे फस जाता है। यदि वह समय और परिस्थितियो के अनुसार अपने तौर-तरीका को बदल सके, तो उसके भाग्य का सितारा

कभी न डूबे।

पोप जूलियस द्वितीय हर मामले मे जोश से काम लेता था और समय एव परिस्थितिया उसके तौर-तरीको के लिए कुछ ऐसी अनुकूल सिद्ध हुई कि उसे अपने हर काम म हमेशा सफलता मिली। गियावानी बेन्तीवोग्लो के जीवनकाल मे ही बोलोना पर किये गये उसके हमले को ही ले लीजिए। वेनिस वालो को अब भी उस पर विश्वास नही था। स्पेन के शहशाह का भी यही रवैया था और जूलियस अभी तक इस मामले को लेकर फ्रास वालो के साथ बहस ही कर रहा था। इस सबके बावजूद अपने व्यक्तित्व की विशिष्ट प्रबलता और दुर्दमनीयता के साथ उसने स्वय अपने ही नेतृत्व मे बोलोना पर यह पहला हमला कर दिया। इस चाल स स्पेन और वेनिस वाले बेचैन हो उठे और स्तम्भित रह गये। वेनिस वाले भय-भीत थे और स्पेन के शहशाह की आकाक्षा नेपल्स के पूरे साम्राज्य को एक बार फिर से जीतने की थी। दूसरी ओर पोप जूलियस ने फ्रास को इस मामले मे अपने पीछे लगा लिया। ऐसा इसलिए हुआ कि जूलियस को हमला करते देखकर और वेनिस वालो को कुचलने मे पोप जूलियस की मदद के इच्छुक, फ्रास के शहशाह इस निर्णय पर पहुचे कि उसे सैनिक सहायता देने से इनकार करने का अर्थ उसे हानि पहुचाना ही होगा। इस-लिए उस समय की जोश-भरी कार्यवाही के द्वारा पोप ने वह काम कर लिया, जो कोई भी दूसरा पोप, तमाम मानवीय दूरदृष्टि के बावजूद नही कर सकता था। अगर पोप रोम से कूच करने से पहले अपनी सभी समझौता-वार्ताओ, सौदेबाजियो और आयोजनो के पूरे हो जाने की प्रतीक्षा करता, जैसी कि किसी भी अन्य पोप से आशा की जाती थी, तो वह कभी सफल नही हो पाता। फ्रास के शहशाह ने कम स कम एक सौ एक बहाने तैयार किये होते और अन्यो ने उसे एक सौ एक हौए दिखाकर उसे भयाक्रात किया होता।

मैं उसके अन्य कृत्यो की चर्चा नही करूगा, क्योकि उन सबम उसकी व्यवहार प्रणाली यही रही और वह हर अभियान मे सफल रहा। उसका शासन काल इतना छोटा था कि उसे सफलता के अतिरिक्त अन्य प्रकार का अनुभव ही नही हुआ। यदि उसके सामने कोई ऐसा अवसर आया होता,

जहा उसे सजगता से काम करने की आवश्यकता पडती, तो वह शायद मुसीबत म पड गया होता। उसके स्वभाव मे सजगता नही थी और वह अपने स्वभाव के विपरीत व्यवहार कभी न कर पाता।

इसलिए निष्कर्ष रूप मे मैं यही कह सकता हू कि मानव अपने व्यवहार क्रम मे जड होता है और भाग्य का प्रवाह सदैव परिवर्तनीय। अतएव मानव तभी तक सफलता और समृद्धि पाता है, जब तक उसकी नीतिया समय के अनुकूल होती हैं। जब कभी इन दोनो म सघर्ष होगा, तभी उसे विफलता का सामना करना पडेगा। मेरी यह दृढ धारणा है कि सजग होने की अपेक्षा तीव्रगामी होना बेहतर है, क्योंकि भाग्य एक नारी की तरह होता है। उसे अपने सामने झुकाने के लिए उसे दण्डित करना और प्रताडना देना आवश्यक होता है। अनुभव से यही सिद्ध होता है कि भाग्य रूपी स्त्री ठण्डे दिमाग से काम लेने वाले बुद्धि सम्पन्नो की अपेक्षा दुर्दमनीय प्रबल प्रवृत्ति वाले पुरुषो के समक्ष अधिक समर्पित होती है। एव नारी होने के नाते वह युवको को ही पसन्द करती है, क्योंकि वे सजग कम होते है और जोशीले अधिक और क्योकि वे उसपर बलात् शासन करते हैं।

२६

इटली को बर्बर शासकों के चंगुल से मुक्त कराने का आह्वान

उल्लिखित सभी बातो की चर्चा करने के बाद मैंने स्वय से पूछा कि क्या इटली मे आज का युग किसी नये शासक को मान्यता देने के लिए अनुकूल है ? और क्या आज की परिस्थितियो मे कोई दूरदर्शी एव योग्य पुरुष यहा पर नयी व्यवस्था चला सकता है, जिसमे कि उसे सम्मान प्राप्त हो और प्रत्येक इतालवी व्यक्ति को खुशहाली मिल सके ? एक नये शासक के पक्ष मे इतने तत्त्व और सुयोग मिल रहे है कि मेरी दृष्टि से उसकी स्थापना के लिए वर्तमान से अधिक अनुकूल किसी अन्य समय की कल्पना ही नही की जा सकती और फिर जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, अगर इजराइलियो को मिस्र मे इसलिए गुलामी सहनी पडी कि उनके नेता मूल का उद्भव हो सके, अगर साइरस की महानता को मान्यता दिलाने के लिए फारस के लोगो को मेडीज के अत्याचार सहन करने पडे, अगर थीसियस की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए एथेन्स की प्रजा को बिखर जाना पडा, तो इटली की आत्मा का मूल्याकन करने के लिए हमारे युग म इस देश का अपनी वर्तमान चरम अव्यवस्था की स्थिति मे पहुच जाना जरूरी था। उसका यहूदियो की अपेक्षा अधिक गुलाम होना, फारस के लोगो की अपक्षा अधिक दमन सहना और एथेन्स के लोगो की अपेक्षा अधिक बिखरना, नेतृत्वहीन, अनुशासनहीन, दमित, लुटे-पिटे, बरबाद और प्रताडित होना बहुत जरूरी था। उसे हर प्रकार की असहायता का शिकार होना ही था।

यद्यपि आज से कुछ समय पहले एक ऐसा व्यक्ति था[1] जिसके व्यक्तित्व मे कुछ ज्योति नज़र आती थी और लगता था कि ईश्वर ने देश के पुनरुद्धार के लिए ही उसका सृजन किया था, फिर भी बाद मे देखा गया कि अपने कार्यकारी जीवन के चरमोत्कर्ष पर पहुचकर वह भाग्य द्वारा ठुकरा दिया गया। अतएव आज जीवन-प्राण-हीन हुआ यह देश उस युग पुरुष की प्रतीक्षा कर रहा है, जो उसके घाव भर सके, लोम्बार्डी के पतन और वहा हो रही लूट-पाट को समाप्त कर सके, राज्य मे और टस्कैनी मे शोषण का अन्त कर सके और लम्बे समय से रिसते चले आ रहे छालो को साफ कर सके।

सहज ही देखा जा सकता है कि इटली आज ईश्वर से किसी ऐसे व्यक्ति को भेजने का आग्रह कर रहा है, जो उसे इन बर्बरताओ और अपमान से बचा सके, जो उसे भोगने पड रहे है। आज देश किसी एक झण्डे तले एक हो जाने के लिए इच्छुक और उत्सुक है। कोई उस झण्डे को खडा करने वाला तो हो!

आज यह सोचा भी नही जा सकता कि यह देश आपके सम्मानित सदन मे अधिक अपनी आस्था का आधार किसे बनाये। इस सदन मे न सौभाग्य की कमी है, न पराक्रम की इस पर चर्च की भी अनुकम्पा है और ईश्वर की भी (चर्च का तो यह सदन आज मुखिया है!)। यही आज इस देश को मुक्ति दिला सकता है। यदि आप मेरे द्वारा परिगणित व्यक्तियो के जीवन एव कार्यों का ध्यान करेंगे तो पायेंगे कि यह काम कुछ बहुत कठिन नही है। ये व्यक्ति अपवाद रूप हो सकते हैं, असाधारण हो सकते हैं, इसके बावजूद वे भी मानव ही तो थे और उनमें से प्रत्येक के पास जो अवसर था, वह आज उपलब्ध अवसर की अपेक्षा बहुत कुछ हीन था। उनके अभियानो का न तो आज से अधिक कुछ औचित्य था और न ही वे आज की अपेक्षा कुछ आसान थे।

आज हमारे लक्ष्य के पीछे न्याय का महान् बल है। "आवश्यक युद्ध उचित युद्ध होता है और जहा आशा का एकमात्र स्रोत शस्त्रधारण करने मे

---

1 स्पष्ट सकेत सीज़र बोर्गिया की ओर।

२६

इटली को बर्बर शासकों के चंगुल से मुक्त कराने का आह्वान

उल्लिखित सभी वातो की चर्चा करने के बाद मैंने स्वय से पूछा कि क्या इटली मे आज का युग किसी नये शासक को मान्यता देने के लिए अनुकूल है ? और क्या आज की परिस्थितियो म कोई दूरदर्शी एव योग्य पुरुष यहा पर नयी व्यवस्था चला सकता है, जिससे कि उसे सम्मान प्राप्त हो और प्रत्येक इतालवी व्यक्ति को खुशहाली मिल सके ? एक नये शासक के पक्ष मे इतने तत्व और सुयोग मिल रहे है कि मेरी दृष्टि से उसकी स्थापना के लिए वर्तमान से अधिक अनुकूल किसी अन्य समय की कल्पना ही नही की जा सकती और फिर जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, अगर इज्राइलियो को मिस्र मे इसलिए गुलामी सहनी पडी कि उनके नेता मूल का उद्भव हो सके, अगर साइरस की महानता को मान्यता दिलाने के लिए फारस के लोगो को मेडीज के अत्याचार सहन करने पडे अगर थीमियस की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए एथन्स की प्रजा को बिखर जाना पडा, तो इटली की आत्मा का मूल्याकन करने के लिए हमारे युग म इस देश का अपनी वर्तमान चरम अव्यवस्था की स्थिति म पहुच जाना ज़रूरी था। उसका यहूदियो की अपेक्षा अधिक गुलाम होना, फारस के लोगो की अपेक्षा अधिक दमन सहना और एथेन्स के लोगो की अपेक्षा अधिक बिखरना, नेतृत्वहीन, अनुशासनहीन, दमित, लुटे-पिटे, बरबाद और प्रताडित होना बहुत ज़रूरी था। उसे हर प्रकार की असहायता का शिकार होना ही था।

यद्यपि आज से कुछ समय पहले एक ऐसा व्यक्ति था[1] जिसके व्यक्तित्व मे कुछ ज्योति नजर आती थी और लगता था कि ईश्वर ने देश के पुनरुद्धार के लिए ही उसका सृजन किया था, फिर भी बाद मे देखा गया कि अपने कार्यकारी जीवन के चरमोत्कर्ष पर पहुचकर वह भाग्य द्वारा ठुकरा दिया गया। अतएव आज जीवन-प्राण-हीन हुआ यह देश उस युग पुरुष की प्रतीक्षा कर रहा है, जो उसके घाव भर सके, लोम्बार्डी के पतन और वहा हो रही लूट-पाट को समाप्त कर सके, राज्य मे और टस्कनी मे शोषण का अन्त कर सके और लम्बे समय से रिसते चले आ रहे छालो को साफ कर सके।

सहज ही देखा जा सकता है कि इटली आज ईश्वर से किसी ऐसे व्यक्ति को भेजने का आग्रह कर रहा है, जो उसे इन बर्बरताओ और अपमान स बचा सके, जो उसे भोगने पड रहे हैं। आज देश किसी एक झण्डे तले एक हो जाने के लिए इच्छुक और उत्सुक है। कोई उस झण्डे को खड़ा करने वाला तो हो!

आज यह सोचा भी नही जा सकता कि यह देश आपके सम्मानित सदन स अधिक अपनी आस्था का आधार किसे बनाये। इस सदन मे न सौभाग्य की कमी है, न पराक्रम की, इस पर चर्च की भी अनुकम्पा है और ईश्वर की भी (चर्च का तो यह सदन आज मुखिया है!)। यही आज इस देश को मुक्ति दिला सकता है। यदि आप मेरे द्वारा परिगणित व्यक्तियो के जीवन एव कार्यों का ध्यान करेंगे तो पायेंगे कि यह काम कुछ बहुत कठिन नही है। ये व्यक्ति अपवाद रूप हो सकते हैं, असाधारण हो सकते है, इसके बावजूद वे भी मानव ही तो थे और उनमे से प्रत्येक के पास जो अवसर था, वह आज उपलब्ध अवसर की अपेक्षा बहुत कुछ हीन था। उनके अभियानों का न तो आज से अधिक कुछ औचित्य था और न ही वे आज की अपेक्षा कुछ आसान थे।

आज हमारे लक्ष्य के पीछे न्याय का महान् बल है। "आवश्यक युद्ध उचित युद्ध होता है और जहा आशा का एकमात्र स्रोत शस्त्रधारण करने मे

---

1 स्पष्ट सकेत सीज़र बोर्जिया की ओर।

रह गया हो, वहा शास्त्र भी पावन होते हैं।" (लिवी) आज राष्ट्र सबसे ज्यादा उद्यत है और उद्यत राष्ट्र मे परिवर्तन कठिन नही होता। शर्त यह है कि आपका सदन आज उन राष्ट्र नायको की प्रशसा एव अनुकरण करे जिनकी गणना मैंने करवायी है।

इसके साथ ही ईश्वर द्वारा प्रस्तुत अभूतपूर्व चमत्कार देखे जा सकते है। समुद्र विभाजित है, एक बादल आपका मार्गदर्शन कर चुका है, चट्टान फोडकर जल का स्रोत बह निकला है और मन्ना[1] की बरसात हो चुकी है, आपकी महानता को मान्यता देने के लिए सभी सुयोग इकट्ठे हो चुके है। शेष काम आपका है। ईश्वर सभी कुछ स्वय नही करना चाहता, न ही वह हमसे हमारी स्वतत्र इच्छा-शक्ति छीन लेना चाहता है। यश और कीर्ति का हमारा भाग, हमारा देय भी हमसे छीनना नही चाहता।

इस बात पर आश्चर्य नही किया जाना चाहिए कि जिस महत्कार्य के किये जाने की आशा आपके स्वनामधन्य सदन से की जा रही है, उसे मेरे द्वारा गिनाये गये राष्ट्रनायको मे से कोई भी नही कर सका अथवा यह कि अभी तक इटली मे किये गये तमाम विद्रोहो एव सैनिक अभियानो के दौरान यही लगा कि राष्ट्र का सारा पराक्रम चुक गया है। यह भी हमारे आश्चर्य का विषय नही होना चाहिए। यह सब इसलिए हुआ कि पुरानी सैनिक व्यवस्था खराब थी और नयी व्यवस्था स्थापित करने वाला कोई राष्ट्र नायक अभी तक पैदा नही हुआ।

और नवस्थापित कानून और परम्पराओ से बढकर किसी व्यक्ति की कीर्ति का कोई अन्य साधन नही हो सकता। उपयुक्त आधार और महानता की निशानी जब इन परम्पराओ पर होती है, तो वे उस व्यक्ति को पूजा एव प्रशसा का विषय बना देती है। आज राष्ट्रीय पुनर्गठन के लिए अवसरो की कमी नही है। आज यदि नेताओ मे पराक्रम की कमी न हो, तो अनुयाइयो मे उसकी कमी नही है। आजकल हो रहे द्वन्द्वो एव आपसी झगडो मे ही देख लीजिए, इतालवी लोग शक्ति, कौशल और

---

१. 'मन्ना'—दिव्य भोजन। ईसाई एव यहूदी धर्मशास्त्र की एक किम्वदन्ती के अनुसार अपने भक्तो की भूख-प्यास मिटाने के लिए ईश्वर ने यह भोजन बांटा था।

आविष्कारी वृत्ति मे अन्यो से कही बढे-चढे है, लेकिन जहा सैनिक सगठन का सवाल उठता है, वे तुलनात्मक दृष्टि मे पीछे रह जाते हैं।

कारण ? जो योग्य हैं, उनकी आज्ञा का पालन कोई नही करता। हर व्यक्ति स्वय को नेता बनने योग्य समझता है। इसी कारण से अभी तक किसी ने ऐसा पराक्रम और कौशल नही दिखाया है कि वह दूसरो पर नियन्त्रण स्थापित कर सके। इस सबके परिणामस्वरूप पिछले बीस साल के लम्बे समय मे लडी गयी तमाम लडाइयो के बीच जहा कही पूर्णरूपेण इतालवी फौजें लडी हैं, वही वे पराजित हुई हैं। इसके प्रमाणस्वरूप तारो, अलेक्सान्द्रिया, कापुआ, जेनोआ, वैला, बोलोना और मेस्त्रे के युद्धो का सर्वेक्षण किया जा सकता है।[1]

इसलिए यदि आपका सम्मानित सदन उन राष्ट्र नायको के पदचिह्नो पर चलना चाहता है, जिन्होंने अपने-अपने देशो की रक्षा की तो सबसे पहले उसके लिए एक नागरिक सेवा का सगठन- आयोजन जरूरी है। इसका कारण यही है कि नागरिक सेवा से बढकर वफादार, उससे अधिक ईमानदार और बेहतर कोई सेना हो ही नही सकती। ये सैनिक अकेले-

---

१. तारों में फर्नोवो का युद्ध १४९५ में अवकाश ग्रहण करने वाली फ्रांसीसी सेना तथा एक इतालवी लीग के बीच हुआ। अलेक्सान्द्रिया को फ्रांसीसियों ने, लुई बारहवें के द्वारा इटली पर किये प्रथम आक्रमण के दौरान १४९९ में, लूटा था। नेपल्स पर फ्रांस और स्पेन के सयुक्त आक्रमण के बाद १५०१ में कापुआ को फ्रांसीसी सैनिको ने लूटा और बरबाद किया था। जेनोआ पर फ्रांसीसियो ने १५०९ में अधिकार स्थापित कर लिया था (इससे एक ही वर्ष पूर्व फ्रांस-समर्थक कुलीन दल की सत्ता उलट दी गयी थी)। १५०९ में ही लीग ऑव् कैम्ब्रे के कार्य-व्यापार के ही क्रम में फ्रांसीसियों के साथ हुए युद्ध में, वैला अथवा आग्नादेलो के मैदान में वेनिस वाले बुरी तरह पछाड़े गये। बोलोना पर १५११ में, जूलियस द्वितीय के साथ हुए युद्ध में फ्रांसीसियों ने अधिकार कर लिया था। १५१३ में विसेन्जा के युद्ध से कुछ ही पहले, जहां वेनिस वाले पराजित हुए थे, वेनिस के निकट अवस्थित नगर मेस्त्रे को सम्राट, स्पेन, मीलान और पोप की सम्मिलित सेनाओं ने लूटा और जला दिया था।

रवन्ना का युद्ध १५१२ में लड़ा गया। (अधिक विवरण के लिए नामावली में देखिए—लुई बारहवां)

अकेले भी ले लिये जायें, तो अच्छे होते हैं, फिर एक सगठित सैन्य के रूप मे कार्य करते समय, जब वे स्वय को अपने शासक के झण्डे तले, उसके द्वारा सम्मानित और पोषित पायेंगे, तो और भी बेहतर एव उपयोगी सिद्ध होंगे। इसलिए आक्रमणकारी का मुकाबला करने के लिए अपनी प्रतिरक्षा व्यवस्था को इतालवी राष्ट्रीय शक्ति पर आधारित बनाने के लिए इस प्रकार की नागरिक सेना का गठन अनिवार्य है। स्विस और स्पेनिश तोपखानो को अपराजेय समझा जा सकता है, फिर भी उन दोनो सेनाओ म एक ऐसा दोष है, जिसके कारण कोई भी तीसरी सेना न सिर्फ उन्हे युद्ध के मैदान म घेर लेगी, बल्कि निश्चय ही उन्ह पराजित कर देगी।

स्पेनिश तोपखाना घुडसवार सेना का भार नही सह सकता और स्विस सैनिक युद्ध के मैदान मे अपनी बराबरी के तोपखाने के भी सामने जाते हुए डरत है। इस प्रकार से देखा गया है और अनुभव से भी यही सिद्ध होता है कि स्पेनिश सैनिक फ्रासीसी घुडसवारो मे पिट जाते हैं और स्विस सैनिक स्पेनिश तोपखाने के आगे घुटने टेक देते हैं। इस बादवाली बात का अभी तक कोई निर्णायक दिग्दर्शन नही हुआ है। मगर इसकी सत्यता का कुछ सकेत रवन्ना के उस युद्ध म मिल गया था, जहा स्पेनिश तोपची जर्मन बटालियनो से भिडे थे। जर्मनो की युद्धकला स्विस युद्धकला स मिलती-जुलती है। भिडन्त होने पर स्पेनी सैनिको ने अपनी ढालो का अच्छा उपयोग किया और बडी फुर्ती से जर्मनो के बर्छी भालो के बीच और नीचे घस गये। यहा उन्होने असहाय-से हो चुके जर्मनो पर बडी निर्ममता से प्रहार किया। यदि उनपर घुडसवार सेना आक्रमण न करती तो स्पेनी सैनिक जर्मनो का सफाया कर देते।

अतएव इन स्विस एव स्पेनी सैनिको की कमिया को समझ लेने के बाद आप एक नये किस्म की सेना का गठन कर सकते है, जो घुडसवार सेना का वार सह सके और दूसरे पक्ष के तोपखाने के आगे से भाग न खडी हो। यह तभी हो सकता है, जब नयी सेना का गठन हो और उनके गठन के लिए नयी व्यवस्था अपनाई जाये। इसी प्रकार की बातें नये सिरे स की जायें तो शासक की महत्ता और प्रतिष्ठा बढती है।

इसलिए, यदि हम लोग यह चाहते हैं कि इतने लम्बे समय के बाद

इटली अपने रक्षक को देख और पहचान सके। तो यह मौका चूकने नही देना चाहिए और मैं नही जानता कि विदेशी बाढ से प्रताडित सभी प्रान्तो की प्रजा इस देश रक्षक से कितना प्यार करेगी, कि लोगो के मन मे प्रतिशोध की कितनी प्यास होगी, कि उनकी वफादारी का सकल्प कितना दृढ होगा और यह कि उनकी आखो म कितने आसू और मन मे कितना समर्पण होगा। मैं नही जानता कि उसके लिए कौन-से द्वार बन्द होगे, कौन-से लोग उसकी आज्ञा का पालन करने से इनकार करेंगे? किस प्रकार की ईर्ष्या उसके मार्ग मे बाधक होगी? कौन-सा इतालवी नागरिक उसके प्रति वफादारी की शपथ नही लेगा? यह बर्बर आतक सभी की नाक म सडाध पैदा कर रहा है।

इसलिए अपने इस सम्मानित सदन को यह काम अपने उसी साहस और आशा के साथ अपने हाथो मे लेने दीजिये जो हर न्यायसगत अभियान को हाथ म लेते समय मन मे घर कर जाती है, जिससे कि आपही के भण्डे तले हमारे देश का नाम ऊचा हो और आपके ही तत्त्वावधान म पट्रार्क की यह उक्ति सत्य हो

क्रोध के विरुद्ध ईमान लडाई मे कदम बढायेगा,
और विरोधी को जल्दी मैदान से भगायेगा
क्योकि पुराना रोमन शौर्य अभी मरा नही है
इतालवी हृदय से वह बुझा नही है।[1]

□ □

[1] यह पद्यानुवाद मैकियावेली की कृति 'प्रिन्स' के एडवर्ड डाक्रे कृत और १६४० मैं प्रकाशित अग्रेजी अनुवाद पर आधारित है।

प्रमुख नाम और संदर्भ

अगाथोक्लीज़ ईस्वीपूर्व ३१७ मे सिराक्यूज़ का शासक घोषित किया गया, और इसने धीरे-धीरे, कार्थेज द्वारा शासित प्रदेश को छोड़कर, पूरे सिसिली पर अपनी सत्ता का विस्तार कर लिया। ईस्वीपूर्व ३१० मे हैमिलकार के नेतृत्व मे लड़ने वाली एक कार्थेनियन सेना ने इसे पराजित किया और फिर सिराक्यूज़ को ही घेर लिया। इसने सफलतापूर्वक अफ्रीका तक विजय-यात्रा की, मगर जब सिराक्यूज़ के कई नगरो मे स्वय उसीके खिलाफ विद्रोह हुए, तो वह घर लौटने के लिए तथा कार्थेज के साथ शान्ति-सन्धि करने के लिए विवश हो गया। ईस्वीपूर्व २८६ मे मृत्यु। मैकियावेली ने इसके कार्यकारी जीवन का इतिहास रोमन इतिहासकार जस्टिन की कृतियो से लिया है।

अलेग्ज़ान्देर एम० ऑरेलियस अलेग्ज़ान्देर सेवेरस। ईस्वीसन् २२२ से २३५ तक रोमन सम्राट्। सम्राट् हैलियोगेबालस का चचेरा भाई था, मगर ईस्वीसन् २२१ मे सम्राट ने इसे गोद ले लिया। विद्रोही सैनिको ने, शायद मैक्सिमाइनस के भड़काने से, इसकी हत्या कर दी थी।

अलेग्ज़ान्देर चतुर्थ कार्डिनल रोडरिगो बोर्गिया। १४६२ ईस्वी मे पोप

पद के लिए चुना गया। १५०३ म मृत्यु। अपन भ्रष्ट व्यक्तिगत जीवन और अपनी अवैध सन्तान के प्रति असाधारण समर्पण के भाव के लिए वदनाम, लेकिन वह एक कुशल प्रशासक था। फ्रासीसिया द्वारा इटली पर हमले के दौरान चुनौती पाने वाला वह पहला पोप था और उसे फ्रासीसी-स्पेनिश सयुक्त सैन्य स भी लडना पडा।

इपामिनोण्डास ईसापूर्व चौथी शताब्दी का थीवो का सेनापति और राजनीतिज्ञ जिसे यूनान क लिए थीवो को जीतन का श्रेय प्राप्त है।

एकिलीज वीर काव्य 'ईलियड' का नायक। फीनिक्स तथा सण्टावर चिरॉन का शिष्य।

एकुनो, गियोवानी जॉन हॉकवुड के नाम का इतालवी सस्करण। एसेक्स, इग्लैण्ड का यह निवासी फ्रास मे नौकरी करता था। एडवड तृतीय ने इसे सम्मानित भी किया था। १३६० ईस्वी म वह एक छोटी सी निजी सेना लकर इटली गया और वहा उसन अपने व्यवहार क लिए स्थायी ख्याति प्राप्त कर ली। ऐसी धारणा है कि इतालवी भाषा का मुहावरा—'इतालवीकृत अग्रेज शैतान का अवतार होता है।—इसी प्रकार के झगडे पर मारकाट करने वाल अग्रेज सैनिका द्वारा की गयी ज्यादतियो के फल-स्वरूप प्रचलित हुआ होगा।

एण्टियोक्स सीरिया का सम्राट, एण्टियोक्स महान, ईस्वीपूव २२७ से १८७ तक। रोमनो के साथ लडाई म निरन्तर उलझा रहा।

एस्तानियो देखिए, स्फोर्जा कार्डिनल।

आलिवरोत्तो फर्मो का ओलिवरोत्तो यूफ्रेदुच्ची। मैकियावेलो द्वारा वर्णित फर्मो की घटनाए १५०१ म घटी थी। १५०२ म सिनिगालिया के स्थान पर गला घोट कर उसकी हत्या कर दी गयी थी।

ओर्को, रोमिरो द रामिरो द लोर्का। सीजर बोर्गिया का मेजोर्डोमो। सीजर के साथ १४९८ म फ्रांस गया। १५०१ म

प्रमुख नाम और संदर्भ

अगाथोक्लीज़ ईस्वीपूर्व ३१७ मे सिराक्यूज़ का शासक घोषित किया गया, और इसने धीरे-धीरे, कार्थेज द्वारा शासित प्रदेश को छोडकर, पूरे सिसिली पर अपनी सत्ता का विस्तार कर लिया। ईस्वीपूर्व ३१० मे हैमिल्कार के नेतृत्व मे लडने वाली एक कार्थेनियन सेना ने इसे पराजित किया और फिर सिराक्यूज़ को ही घेर लिया। इसने सफलतापूर्वक अफ्रीका तक विजय-यात्रा की, मगर जब सिराक्यूज के कई नगरो मे स्वय उसीके खिलाफ विद्रोह हुए, तो वह घर लौटने के लिए तथा कार्थेज के साथ शान्ति-सन्धि करने के लिए विवश हो गया। ईस्वीपूर्व २८९ मे मृत्यु। मैकियावेली ने इसके कार्यकारी जीवन का इतिहास रोमन इतिहासकार जस्टिन की कृतियो से लिया है।

अलेग्ज़ान्देर एम० ऑरेलियस अलेग्ज़ान्देर सेवेरस। ईस्वीसन् २२२ से २३५ तक रोमन सम्राट्। सम्राट् हैलियोगेबालस का चचेरा भाई था, मगर ईस्वीसन् २२१ मे सम्राट ने इसे गोद ले लिया। विद्रोही सैनिको ने, शायद मैक्सिमाइनस के भडकाने से, इसकी हत्या कर दी थी।

अलेग्ज़ान्देर चतुर्थ कार्डिनल रोडरिगो बोर्गिया। १४९२ ईस्वी मे पोप

पद के लिए चुना गया। १५०३ में मृत्यु। अपने भ्रष्ट व्यक्तिगत जीवन और अपनी अवैध सन्तान के प्रति असाधारण समर्पण के भाव के लिए बदनाम, लेकिन वह एक कुशल प्रशासक था। फ्रांसीसियों द्वारा इटली पर हमले के दौरान चुनौती पाने वाला वह पहला पोप था और उसे फ्रांसीसी-स्पेनिश संयुक्त सैन्य से भी लड़ना पड़ा।

इपामिनोण्डास ईसापूर्व चौथी शताब्दी का थीबी का सेनापति और राजनीतिज्ञ जिसे यूनान के लिए थीबी को जीतने का श्रेय प्राप्त है।

एकिलीज वीर काव्य 'ईलियड' का नायक। फीनिक्स तथा सेण्टावर चिरॉन का शिष्य।

एकुतो, गियोवानी जॉन हॉक्वुड के नाम का इतालवी संस्करण। एसेक्स, इंग्लैण्ड का यह निवासी फ्रांस में नौकरी करता था। एडवर्ड तृतीय ने इसे सम्मानित भी किया था। १३६० ईस्वी में वह एक छोटी सी निजी सेना लेकर इटली गया और वहां उसने अपने व्यवहार के लिए स्थायी ख्याति प्राप्त कर ली। ऐसी धारणा है कि इतालवी भाषा का मुहावरा— 'इतालवीकृत अंग्रेज शैतान का अवतार होता है।' —इसी प्रकार के झगड़े पर मारकाट करने वाले अंग्रेज सैनिकों द्वारा की गयी ज्यादतियों के फल-स्वरूप प्रचलित हुआ होगा।

एण्टियोकस सीरिया का सम्राट्, एण्टियोकस महान, ईस्वीपूर्व २२७ से १८७ तक। रोमनों के साथ लड़ाई में निरन्तर उलझा रहा।

एस्कानियो देखिये, स्फोर्ज़ा, कार्डिनल।

ओलिवरोतो, फ़र्मो का ओलिवरोतो यूफ्रेदुच्ची। मैकियावेली द्वारा वर्णित फ़र्मो की घटनाएं १५०१ में घटी थीं। १५०२ में सिनिगाग्लिया के स्थान पर गला घोंट कर उसकी हत्या कर दी गयी थी।

ओर्को, रेमिरो द रामिरो द लोर्का। सीज़र बोर्गिया का मेज़ोर्दोमो। सीज़र के साथ १४९८ में फ्रांस गया। १५०१ में